वक्तव्य।

विज्ञवर महोदयगण !

लीजिये ! आपके करकमलों मे यह **संस्कृत प्रवेशिनी का द्वितीयभाग** भी आज हम सादर समर्पित करते है । इस पुस्तकके लिखे जानेके प्रधान कारण इसके प्रथमभागमें लिख आये हैं अतः उनकी यहांपर पुनरुक्ति करना निरर्थक है । हम यह अपना सौभाग्य समझते है कि हमारे इस प्रयत्नको समस्त देशवासियोंने अपनाया है और इसकी लेखन प्रणालीका सर्वथा अनुमोदन किया है । इस भागमें प्रायः व्याकरणके मुख्य २ उपदेशी उदाहरणों सहित समस्त नियम आगये हैं जिनके कि पढनेसे लघुसिद्धांतकौमुदीके बराबर व्याकरणका बोध हो-सकता है । शब्दसिद्धिके नियम और धातु तथा प्रत्ययोंके अनुबंध, सुगमताके लिये जैनेंद्रव्याकरण के अनुसार लिखे गये है । जोकि सर्वत्र प्रचलित पाणिनीय व्याकरणसे सर्वथा भिन्न न होनेपर भी बहुत ही सरल और सुपाठ्य है । उन नियमोंके भली भांति ध्यानमें रखलेने से, विनाही किसी लघु व्याकरणके पढे सिद्धांतकौमुदी, शब्दार्णव-चंद्रिका प्रभृति बृहद् व्याकरणकी टीकाओंमें विद्यार्थीका अच्छीतरह प्रवेश होसक्ता है । इस पुस्तकके बनानेमें जिन २ ग्रंथोंकी हमने सहायता ली है उनके नाम अन्यत्र प्रकाशित है और उनके रचयिताओंके हम चिर कृतज्ञ हैं ।

पुरातन हस्तलिखित ग्रथोंके देखनेसे यह बात भली भांति सिद्ध होती है कि पूर्वमें विद्वान् लोग व्याकरणसे अशुद्ध होनेपर भी साहित्य-प्रचारकी सुगमताकेलिये परसवर्ण पंचमाक्षरको अनुस्वार करकेही लिखते थे अत एव हमने भी इस सनातनी प्रवृत्तिको अत्युत्तम समझकर पंचमाक्षरकी जगह अनुस्वार ही लिखा है ।

अंतमें हम अपने हितैषियोंसे निवेदन करते है कि इस ग्रंथमें जो

कहीं प्रमादवश या बुद्धिभ्रमसे अशुद्धिया रहगई हों अथवा कहीं पर कुछ त्रुटियां आगई हो तो उनसे हमें सूचित करें जिससे कि द्वितीयसंस्करणमें वे सव दोष निकाल दिये जांय।

कलकत्ता। | विद्वत्समाजका सेवक
३०—११—१६ | श्रीलाल जैन

संस्कृतप्रवेशिनीके सहायक ग्रंथ

जैनेंद्रव्याकरण, चद्रप्रभचरित. धर्मसंग्रहश्रावकाचार. सुभाषितरत्नसदोह, क्षत्रचूडामणि, आराधनाकथाकोष. सामायिक पाठ, धर्मशर्माभ्युदय, महावीरपुराण, श्रेणिकचरित, हेमलिगानुशासन, ईसव्नीतिकथा, सस्कृतशिक्षा, सस्कृतशिक्षिका, सस्कृतमार्गोपदेशिका, संस्कृतप्रवेश, दश कुमारचरित, हितोपदेश, गणप्रदीप। अभिज्ञानशाकुंतल, कादवरी, तत्त्वार्थसूत्र, एडस् टू ट्रासलेशन इन टू सस्कृत, वृहत्स्वयभूस्तोत्र।

प्रथमभागपर समाचारपत्रों की संमतिया—

सरस्वती।

यह पुस्तक इसलिये वनाई गई है जिसमें सस्कृत भाषाकी सज्ञाओं और धातुओं आदिके रूपोंका ज्ञान विद्यार्थीको होजाय और उन्हें सस्कृतमें बातचीत करना आजाय। "इस भागमें शब्दोंके प्रथमा, द्वितीया तथा सबोधन विभक्तीके, धातुओंमें भ्वादि और तुदादि गणीय धातुओंके वर्तमान, भूत, भविष्यत और आज्ञा अर्थके रूप बतलाये गये है" सस्कृतसे हिंदी और हिंदीसे सस्कृत अनुवाद करनेके लिये पाठ भी दिये गये हैं। शुद्ध करनेके लिये अशुद्ध पद भी दिये गये है। पुस्तककी रचनामें जैनव्याकरणोंका अनुसरण किया गया है जिस प्रयोजनके लिये यह पुस्तक लिखी गई है उसकी बहुत कुछ सिद्धि इससे हो सक्ती है

---

१ विभक्ति और विभक्ती दोनों ही शब्द है ह्रस्व इकारात क्तिन् प्रत्ययात तो विना ही स्त्रीत्वद्योतक प्रत्ययके स्त्रीलिंग है और क्तिच् प्रत्यात दीर्घ ईकारात स्त्रीत्व द्योतक ङीप्रत्ययात है। जैनेंद्र व्याकरणमें इसी विभक्ती शब्दसे इसकेस्वरोंमें प् और

विद्यार्थी

इस पुस्तकमे हिंदीके साथ संस्कृत भाषाके सीखनेका अच्छा क्रम रक्खा है। पुस्तक संस्कृत सीखनेवालो के बडे काम की है।

जैनमित्र।

यह एक संस्कृत व्याकरणका ग्रंथ नई पद्धतिसे विद्यार्थियोंके हितार्थ तयार किया गया है।इससे वहुत ही सुगमतासे व वहुत कम कंठ किये संस्कृत का अनुवाद करना आजायगा। अलाहाबाद विश्वविद्यालयमें प्रचलित ऋजुव्याकरण व वबई वि वि. में प्रचलित मार्गोपदेशिकासे यह पुस्तक वहुत उपयोगी है। इसमें शव्द, और धातु व उदाहरण वहुत हैं। हरएक वालक सुगमतासे समझ सकेगा।

हमारी सम्मतिसे सर्व जैन व अजैन विद्यालय पाठशाला व स्कूलोंमें ऋजु-व्याकरण, मार्गोपदेशिका आदि वदकर इसीको पढाईमें भरती करना चाहिये। प्रकाशकसे मंगाकर एकवार इसको देखना चाहिये। इसके द्वारा हिंदीका ज्ञाता अपने आप सस्कृत सीख सकता है।

दिगंवर जैन।

सस्कृत पढनेके लिये मार्गोपदेशिका आदि जितनी पुस्तकें प्रकट हो चुकी हैं उन सवसे यह पुस्तक वहुत ही उपयोगी है। पुस्तककी रचनाशैली ऐसी है कि रोज एक २ घंटा ध्यानसे पढनेसे विना गुरुके चार छह महीनेमे सस्कृत समझ-नेका ज्ञान प्राप्त होजायगा। इसमे सव प्रकारकी समज हिंदी भाषामें दी गई है। हरएक जैन विद्यालय और पाठशालाओंमें अव इसग्रंथको ही प्रवेश कर देना चाहिये। संस्कृत पढनेवाले भाईयोंको अवश्य ही मंगाना चाहिये। छपाई सफाई अच्छी है और मूल्य भी कम है।

कान्फरंस प्रकाश।

संस्कृत सिखानेकी प्रचलितरूढि विद्यार्थियोंको कुछ वोझारूप है और समय भी वहुत लगता है इससे कुछ कम वुद्धिवाले विद्यार्थी उसे थोडा पढकर छोड देते हैं इस कठिनाईको दूर करनेके लिये हिंदी भाषा भाषियोंके हितार्थ यह ग्रंथ

व्यंजनोंमें 'आ' लगा देनेसे सातो विभक्तियोंके नाम निकाले हैं। जैसे—वा, इप्, भा, अप् का, ता, ईप्।

बनाया गया है। पाठशाला और अंग्रेजी स्कूलोंमें संस्कृत पढनेवालोंकेलिये यह ग्रंथ बडा ही उपयोगी है। इससे संस्कृत भाषाका सुगमपूर्वक अवबोध होनेके साथ ही साथ संस्कृत भाषामें वार्त्तालाप या अनुवाद करनेमें सुगमता होगी।

जैनबोधक।

हें ग्रंथ सर्वजनांनी विशेषतः उत्तरीय हिंदुलोकांनी त्यांना संग्रह करणें अत्यंत अवश्य आहे। यांत संस्कृतभाषेंत नियम वगैरे घोकून घेण्याचा त्रास न करिता सहजरीतीनें संस्कृत भाषेंत प्रवेश होण्या साठीं व्यवस्था केलेली आहे। आमच्या मतें हें पुस्तक उत्तर हिंदुस्थानांच्या पाठशालेंत लावणें यास त्याचा फार उपयोग होण्यासारिखा आहे। अर्लाकॅण्ड्या प्रमाणें अगंजी प्रवेश वगैरे अनेक ग्रंथ परभाषा शिकण्यासाठीं प्रकाशित होत आहेत व त्यायोगें अनेक सुख वस्तु संग्रहस्थाना आपल्या फुरसतीं प्रमाणें परीक्षम तीभाषा शिकतांयेते त्याच प्रमाणें आपले धर्मग्रंथ समजण्यासाठीं व नष्ट असलेल्या संस्कृतभाषेचें ज्ञान सहजरीतीनें संपादन करण्यासाठीं प्रत्येकानें हें पुस्तक संग्रहीं ठेवण्यासारिखा आहे।

जैनप्रभात।

इसे वर्तमान ढंगसे संपादन किया है और सरल बनानेका प्रयत्न किया है। संस्कृत पढनेवाले विद्यार्थियोंको यह बहुत ही उपयोगी है।

सत्यवादी।

इसग्रंथकी छपाई सफाई उत्तम है, साथ ही नाम भी अन्वर्थ है। इसमें कोई संदेह नहीं कि जो परिपक्व विद्यार्थी संस्कृतसे अनभिज्ञ हैं उनको इसके द्वारा संस्कृतमें प्रवेश हो सकता है। इस बातका प्रयत्न किया गया है कि इसके अभ्यास करनेवालेको शुद्धाशुद्धका ज्ञान होजाय और बोलने तथा अनुवाद करनेका अभ्यास होजाय। त्रुटि इतनी है कि इसमें संस्कृत प्रयोग बनानेका सिद्ध करनेका नियम[1] एक भी नहीं बताया है। यदि थोडेसे नियम भी बता दिये जाते तो उससे अभ्यास करनेवालोंका बोध दृढ होता। तो भी निःसंदेह यह विद्यार्थियोंके अतिलाभकी चीज है।

---

१ नियम प्रयोगोंके सिद्ध करनेके प्रायः मुख्य २ सब बतलाये गये हैं। परंतु वे टिप्पणीमें लिखे हैं।



सनातनजैनग्रंथमाला ।

१३

संस्कृतप्रवेशिनी

द्वितीय भाग ।

प्रथम अध्याय ।

द्वितीया (कर्म) विभक्तीका भिन्न २ रीतिसे व्यवहार

(१) प्रथम पाठ ।

१ हा देवदत्तं वर्धते व्याधिः—हाय ! देवदत्तको व्याधि बढ रही है ।

हा त्वां अविचार्य्यकारिणं—हा विना विचारे काम करनेवाले तुझको ।

हा मां पापकारिणं—हा पापकरने वाले मुझको ।

२ अतरा त्वां मां च पुस्तकं वर्तते—तुम्हारे व मेरे बीचमें किताब है ।

निषधं नीलं च अतरा विदेहस्तिष्ठति—निषध व नीलपर्वतके बीचमें विदेह है ।

वाराणसीं कालिकात्तां च अंतरा पाटलिपुत्रः—बनारस तथा कलकत्ताके बीचमें पटना है ।

३ अतरेण विद्यां मनुष्यः पशुः—विद्याके विना मनुष्य जानवर है ।

अतरेण पुरुषकारं न किंचित्—पुरुषार्थके विना कुछ नहीं होता ।

अतरेण गुरुं विद्यालाभो न—विना गुरुके विद्याकी प्राप्ति नहीं होती है ।

१—हा आदिक शब्दोंका जिन शब्दोंके साथ संबंध रहता है उन शब्दोंसे द्वितीया विभक्ती होती है अर्थ कर्मका रहे चाहे न रहे ।

४ धिक् ब्राह्मणं पलांडुभक्षिणं—प्याज खानेवाले ब्राह्मणको धिक्कार है।
धिग् जैनं मद्यपायिनं—मद्यपीने वाले जैनको धिक्कार है।
धिक् कविं कुनृपप्रशंसिनं—खराब राजाकी प्रशंसा करनेवाले कविको धिक्कार है।

५ निकषा पर्वतं नदी वर्तते—पर्वतके पास नदी है।
निकषा मां कुमारी तिष्ठति—मेरे समीप कुमारी बैठी है।
निकषा मुनिं श्रावको वसति—मुनिके पास श्रावक रहता है।

६ समया जिनालयमुद्यानं शोभते—जिनालयके पास बगीचा शोभता है।
समया तीर्थकरं भव्या व्रजंति—तीर्थकरके निकट भव्य लोग जाते हैं।
समया केवलिनं विरोधं मुंचंति हिंसकाः—केवलीके पास हिंसक जंतु विरोध छोड देते हैं।

७ अतिशोभते काष्ठांगारं जीवंधरः—जीवंधर काष्ठागारसे अधिक शोभित होता है।
को मां अतिगच्छति—कौन मुझे उलंघन करता है।
अयं अमु अति धनं अर्जति—यह (व्यक्ति) इस (व्यक्ति) की अपेक्षा अधिक धन कमाता है।

८ प्रजाः पश्यंति नृपं प्रति—प्रजा राजाको देखती है।
वृणीष्व भद्रे! प्रति भाति यस्त्वां—भद्रे! जो तुझे अच्छा लगे उसे वरण कर।
मां प्रति कथमिदं दुर्वचनं—मेरे प्रति यह दुर्वचन क्यों?

९ अनुजीवकमेवात्र (जीवलोके) विपश्चितः—इस लोकमें विद्वान् जीवंधरसे (अनु) नीचे हैं।
मां अनु वदति स्म सः—मेरे बाद वह बोला।
वाराणसीमनु प्रथते प्रयाग—वाराणसी (बनारस) के बाद प्रयाग (इलाहाबाद) प्रसिद्ध है।

नीचे लिखे शब्दोंके व्यवहारसे वाक्य बनाओ—

हा, अन्तरा, अन्तरेण, धिग्, निकषा, समया, अति, प्रति, अनु।

* द्वितीय पाठ।

१ परितो ग्रामं सेना वसति—गावके चारो तरफ सेना रहती है।
परितो वृक्षमालवालो वर्तते—पेडके चारो तरफ आलवाल [क्यारी] है।
परितो राजानं सेना गच्छति—राजाके चारो तरफ सेना चलती है।
२ अभितो मामनुचरास्तिष्ठंति—मेरे चारो तरफ नौकर हैं।
अभितस्त्वां नार्यो वर्तंते—तुम्हारे चारो तरफ स्त्रिया हैं।
अभितो हस्तिनं सिंहाः गर्जंति—हाथीके चारोतरफ सिंह गर्जते हैं।
३ सर्वत पुष्पाणि भ्रमरा भ्रमंति—फूलोंके चारो तरफ भ्रमर घूमते हैं।
सर्वतो गृहं सरो वर्तते—घरके चारो तरफ तालाव है।
सर्वतो धनवंतं खला भ्रमंति—धनवालेके चारो तरफ दुर्जन घूमते हैं।
४ उभयतो मार्गं वृक्षास्तिष्ठंति—मार्गके दोनो तरफ वृक्ष हैं।
उभयतो वाराणसीं नदी वर्तते—बनारसके दोनो तरफ नदी है।
उभयतो जिनमिंद्रौ गच्छतः—जिन भगवान्‌के दोनो तरफ इंद्र चलते है
५ ऋते धर्मं कुतः सुखं—धर्मके विना कैसे सुख हो।
ऋते ज्ञानं कुतो मुक्तिः—विना ज्ञानके कैसे मोक्ष हो।
ऋते दयां कुतो धर्मः—दयाके विना धर्म कैसे हो।
६ विना ध्यानं कुतो मुक्तिः—विना ध्यानके मुक्ति कैसे हो।
विना श्रमं कुतो विद्या—विना परिश्रमके विद्या कैसे हो।
विना विद्यां कुतो यशः—विना विद्याके यश कैसे हो।

नीचे लिखे शब्दोंके व्यवहारसे वाक्य बनाओ—

परितः, अभितः, सर्वतः, उभयतः, ऋते, विना।

---

* तृतीय पाठ।

१ अधोऽधो नरकं नरका वर्तंते—नरकके नीचे नरक है।
अधोऽधो ग्रंथं ग्रंथाः—ग्रंथ के नीचे ग्रंथ है।

---

* पहले पाठकी टिप्पणी देखो।

अधोधश्छात्रं छात्राः—एक विद्यार्थीसे नीचे दूसरा विद्यार्थी है ।

२ अध्यधि पात्रं पात्राणि तिष्ठंति—वर्तनके नीचे वर्तन है ।

अध्यधि नृपं नृपा राजंते—एक राजाके बाद दूसरा राजा शोभता है ।

अध्यधि गृहं गृहाणि—एक घरके नीचे दूसरा घर है ।

३ उपर्युपरि स्वर्गं स्वर्गा वसंति—एक स्वर्गके ऊपर दूसरा स्वर्ग है ।

उपर्युपरि भृत्यं भृत्याः—एक सेवकसे ऊपर दूसरा सेवक है ।

उपर्युपरि विद्यां विद्याः—एक विद्या दूसरी विद्यासे अच्छी है ।

नीचे लिखे शब्दोंसे वाक्य बनाओ—

उपर्युपरि, अध्यधि, अधोऽधः ।

÷ चतुर्थ पाठ ।

१ मास (मेकं) गुडापूपा भक्षिताः—एक महीने तक गुडके पुवे खाये ।

द्वौ पक्षौ दुग्धं पीतं—दो पक्ष (पखवाडे) तक दूध पीया ।

त्रीन् संवत्सरान् दधि न खादितं—तीन वर्ष तक दही नहीं खाया ।

क्रोशं पर्वतो वर्तते—एक कोश तक पर्वत है ।

द्वौ क्रोशौ राजमार्गः—दो कोश तक राजमार्ग (सडक) है ।

असंख्यानि योजनानि आकाशः प्रसते—असंख्यात योजनतक आकाश फैला है ।

२ मास मधुरा कल्याणी—महीने भर तक मथुरा कल्याणी (अच्छी) है ।

दिन समग्रं वृष्टिर्भविष्यति—संपूर्ण दिन भर वर्षा होगी ।

÷—कालवाची तथा मार्गके प्रमाणवाची शब्दोंसे द्वितीया विभक्ती होती है यदि कोई काम वे नागा किया गया हो । जैसे—मासमेकमपूपा भक्षिता—एक महीने तक पुऐ खाये अर्थात् एक दिनका भी वीचमें नागा नहीं पडा । क्रोशं कुटिला नदी एक कोश तक नदी टेडी है अर्थात्—वीचमें विलकुल सीधी नहीं है यह अर्थ होता है यदि एसा मतलब कहने वालेका न होगा तो द्वितीया विभक्ती न होगी ।

पक्षमेकं परीक्षा भविष्यति—एक पक्षतक परीक्षा होगी।

क्रोशं कुटिला नदी—एक कोशतक नदी टेढी है।

३ बहूनि योजनानि गृहाणि न दृष्टानि—बहुत योजनतक घर नहीं दखे।

मासमेकमधीतं—एक महीने तक पढा।

त्रीन् संवत्सरान् संस्कृतविद्या पठिता—तीन वर्षतक संस्कृत विद्या पढी।

नीचे लिखे शब्दोंको व्यवहारमें लाकर वाक्य रचो—

मासं, योजने, क्रोशौ, पक्षान्, संवत्सरं, दिनानि, समयान्, घटिकाः, रात्रिं, गव्यूतिं (दोकोश)

पंचमपाठ।

१ मुनिः पर्वतमधितिष्ठति—मुनि पर्वत पर रहते हैं।

जीवंधरो दंडकारण्यमधितिष्ठति स्म—जीवधर दंडकवनमें रहे थे।

योद्धारौ अश्वौ अधितिष्ठतः—दो योद्धा दो घोडेपर चढते हैं।

२ पक्षिणो नीडमनुवसंति—पक्षी घोंसलेमें रहते है।

मत्स्याः जलमनुवसंति—मछलियां पानीमें रहती हैं।

३ वणिजो नगरमुपवसंति—बनिया नगरमें रहते हैं।

साधवः वनमुपवसंति—साधु लोग वनमें रहते है।

छात्राः पाठशालामुपवसंति—विद्यार्थी लोग पाठशालामे रहते हैं।

४ पितृहीनो बालो मातुलालयं आवसति—पितारहित लडका मामाके घर रहता है।

ब्रह्मचारी गुरुकुलमावसति—ब्रह्मचारी गुरुकुलमें रहता है।

५ शिष्यः पाठकगृहं अधिवसति—विद्यार्थी गुरुके घर रहता है।

शवरा वनमधिवसंति—भील लोग वनमें रहते है।

६ सच्चरित्राः धर्ममार्गं अभिनिविशंते-सच्चरित्र लोग धर्ममार्गमें प्रवेश करते हैं।

कः पापं अभिनिविशते—कौन पापका आलंबन करता है।

मनो विद्यां अभिनिविशते—मन विद्यामे लगता है।

* नीचे लिखे शब्दोंसे वाक्य रचो—

अनुवसामि, उपवससि, अधितिष्ठामि, आवत्स्यंति, अभिनिविक्ष्यते, अधिवसंतु, उपवस, अभिनिविशेथा, अभिनिविष्टवान्, अध्युषितवान्, उपोषितवती, अनूषितवत्यौ, अधितिष्ठ, अभिनिविशावहे।

षष्ठ पाठ।

+ द्विकर्मक धातु।

१ श्रावको मुनिं धर्मं पृच्छति—श्रावक मुनिसे धर्म पूछता है।

श्रेणिकः श्रीवीरं धर्मं पृष्टवान्—श्रेणिकने श्रीवीर भगवानसे धर्म पूछा।

चेलना बौद्धसाधून् प्रश्नं पृष्टवती—चेलनाने बौद्ध साधुवोंको प्रश्न पूछा।

२ निर्धनो गृहस्थं धनं याचति (ते)—गरीब गृहस्थसे धन मागता है।

अहं तं पुस्तकं याचिष्ये—मैं उससे किताब मागूंगा।

को मां विद्यां याचते—कौन मुझसे ज्ञान मागता है।

कः समुद्रं रत्नानि मंथितवान्—किसने समुद्रसे रत्नोंको मथा।

के समुद्रं रत्नानि मंथिष्यंति—कौन समुद्रमेंसे रत्नोंको मथेंगे।

४ स त्वां पुस्तकं भिक्षिष्यते—वह तुमसे पुस्तक मांगेगा।

मुनयः गृहस्थान् धनं न भिक्षंते—मुनि लोग गृहस्थोंसे धन नहीं मांगते।

५ सा तं मधुरां वाचं भाषितवती—उसने उससे मीठे वचन कहे।

अहं तं वचनं वदिष्यामि—मैं उससे बात कहूंगा।

नीचे लिखे शब्दोंसे वाक्य रचो—

पृच्छतिस्म, याचिष्यते, मंथितवती, भाषितवान्, वदामि, वदति, भाषते, भिक्षतेस्म, पृष्टवान्।

---

* अधि-स्था, अनु-वस्, उप-वस्, आ-वस्, अधि-वस्, अभिनि-विश् धातुओंके आधारमें द्वितीया विभक्ती होती है। + पृच्छो (पूछना) याचृञ् (मांगना) मंथ (मथना) भिक्ष (मागना) भाषे, वद (कहना) इन धातुवोंके दो दो कर्म होते हैं।

द्वितीय अध्याय।

क्रियाके विशेषण।

प्रथमपाठ।

* काल और स्थान वाचक अव्यय।

१ चिर जीवतु गुणी भवान्—गुणी आप बहुत दिनतक जीवो।
जनाः शश्वत् प्रणमंति मां—लोग मुझे नित्य प्रणाम करते हैं।
अमी शिशवोऽभीक्ष्णं क्रंदंति—ये लडके हमेशा रोते हैं।
नगरमागच्छंति मुनयः कदाचित्—मुनि लोग कभी २ नगरमें आते हैं।
दिवा राजते सूर्यः—दिनमें सूरज शोभता है।
नक्तं शोभते चंद्रः—रात्रिमें चंद्रमा शोभता है।
दहति स्म सद्य कर्माणि भरतः—भरतने शीघ्रही कर्म जला दिये।
सपदि वेष्टते स्म नगरं सेना—सेनाने शीघ्रही नगरको घेर लिया।
प्रातरुत्तिष्ठ नित्यं—हमेशा सवेरे उठो।
सायं पठंतु शुभस्तोत्रं—सांझको शुभस्तोत्र पढो।
अद्य फलवत् जन्मा जातोऽहं—आज मैं फल सहित जन्मवाला हुआ।
पूर्वेद्यु. १ स मुनिं वंदते स्म—कल (बीता हुआ) उसने मुनिकी वंदनाकी।
अन्येद्यु श्रेणिकश्चेलनां पृच्छति स्म—एक दिन श्रेणिकने चेलनासे पूछा।
कदा त्वमागमिष्यसि—कब तुम आवोगे।
तदा वयं क्रीडिष्यामः—तब हम खेलेंगे।
युगपत् मेधा स्मृतिश्च वर्धेथां—एक साथ ज्ञान व स्मृति बढें।
अधुना सफलं नेत्रं जातं—इस समय आंखे सफल हुई।
साम्प्रतं गदामि तत्त्वं—इस समय सच्ची बात कहता हूं।

---

*—अव्ययोंके लिंग तथा वचन नहीं होते। अव्यय शब्द ज्योंके त्यों वाक्यों में रखदिये जाते हैं। १ एतत् तथा तद् शब्दके कर्ताके एक वचनके विसर्गोका लोप हो जाता है यदि व्यंजन उसके बादमें हो।

सदा यूयं धर्मरता भवत—तुम लोग हमेशा धर्ममें रत होवो ।

सकृत् दुःखकरं मूर्खपुत्रमरणं—मूर्ख पुत्रकी मृत्यु एक वार दुःख देती है ।

यावद् असौ न म्रियते तावद् त्वं सेवस्व—जबतक यह न मरे तबतक तुम सेवो ।

परुत् छात्रा अत्र आगताः—परसाल विद्यार्थी यहा आये थे ।

पुरा महावीरो जिनो भवति स्म—पूर्वकालमें महावीर जिन हुये थे ।

२ कोऽयमत्र आगच्छति—यहा यह कौन आता है ।

तत्र के जना वसंति—वहा कौन लोग रहते हैं ।

कुत्र यूयं गच्छथ—तुम लोग कहा जाते हो ।

विद्वान् सर्वत्र पूजितो भवति—विद्वान् सब जगह पूजा जाता है ।

अधार्मिकाः इह दुःखमनुभवंति—पापीलोग इस संसा में दुःख भोगते हैं ।

परत्र अमुत्र च धार्मिकाः सुखं लभंते—धर्मात्मालोग इस लोक व परलोक में सुख पाते हैं ।

प्राक् विद्योतते विद्युत्—बिजली पूर्व दिशामें चमकती है ।

उदक् प्रतिष्ठते स्म श्रीवर्मा अरिजयार्थं—श्रीवर्माने दुश्मनोंको जीतनेके लिये उत्तर दिशामें प्रस्थान किया ।

सायं सूर्यः प्रत्यक् गच्छति—सामको सूरज पश्चिममें जाता है ।

पुरः पश्य देवमंदिरं भोः—सामने देवमंदिरको देखो ।

समंततः समायाताः सामंतास्तं सेवंते स्म—चारो दिशावोंसे आये हुये सामंत [योद्धा] लोग उसकी सेवा करने लगे ।

आरात् वसंति मुनयः—समीपमें अथवा दूरमें मुनि लोग रहते हैं ।

मुहुर्मुहुरीक्षते स्म सा—वह वार वार देखती थी ।

नीचे लिखे शब्दोंसे वाक्यरचना करो—

परेद्युः, अन्येद्युः, सर्वदा, यदा, तदा, कदा, सदा, सर्वदा, अभीक्ष्णं, शश्वत्, नित्यं, पूर्वेद्युः, परारि, परुत्, प्रत्यक्, प्राक्, उत्तराहि, (उत्तरदिशामें) पुरः, पुरस्तात्, (सामने) आरात्, समंततः, पश्चात्

मुहुः, पुनः, (फिर) नक्तं, दिवा, रात्रौ, परत्र, अमुत्र, इह, कुत्र, तत्र, अत्र, सर्वत्र, सायं, प्रातः, निशि, (रातमें) सपदि, सकृत्, उदक्, युगपत्।

द्वितीय पाठ।

प्रकारवाचक [अव्यय]

१ झटिति गच्छति स्म सः—वह शीघ्र ही चलागया।
स्राक् स तं मुञ्चति स्म—उसने उसे जल्दी छोडा।
अह्नाय स पठति स्म—उसने शीघ्र पढ लिया।
तिर सर्पाः सर्पंति—सांप तिरछे सरकते हैं।
साचि असौ वर्तते—यह आदमी टेडा है।
यथा अयं पंडितस्तथा त्वमपि—जैसा यह पंडित है वैसा तू भी है।
सर्वथा मुनयः शिवं इच्छंति—मुनि लोग सब तरहसे मोक्ष चाहते हैं।
इत्थं इमे दिवसा गताः—इस तरह ये दिन चले गये।
शीघ्रं आगच्छ—शीघ्र आवो।
सत्वरं गच्छ—शीघ्र जावो।
क्षिप्रं कार्यमारभस्व—जल्दी कार्य आरंभ करो।
सहसा स त्यजति स्म, मां—उसने मुझे अकस्मात् छोडदिया।
मां दृष्ट्वा ईपत् हसति स्म सा—वह स्त्री मुझे देखकर थोडीसी हंसी।
मनाक् अपि पापं न कर्तव्यं—थोडा भी पाप न करना चाहिये।
कथं सा एवं मां उक्तवती—उसने मुझे ऐसा क्यों कहा।
तूष्णीं भव भो बाल!—ऐ लडके! चुप रह।
सिंहो गर्जति स्म प्रसह्य—सिंह बल पूर्वक गर्जा।
नूनं दुर्जनो विपदं लप्स्यते—निश्चयसे दुर्जन विपत्तिको पावेगा।
सा एवं भाषितवती—वह इस तरह बोली।
मिथ्या असौ वदति—यह झूठ बोलता है।

आशु कार्याणि सेधंति धीमंतः—ज्ञानी लोग शीघ्र कार्य सिद्ध कर लेते हैं।
शनैः शनैर्लभते स विद्यां—वह धीरे धीरे विद्याको प्राप्त करता है।
बहिर्वसंति यतयः—मुनि लोग बाहर रहते हैं।
अथ स पठनं प्रारभते स्म—इसके बाद उसने पढना शुरू किया।
प्रादुर्भवति स्म यक्षः पुनः—फिर यक्ष प्रकट हुआ।
आविर्भवति नक्तं चंद्रः—रात्रिमें चंद्रमा उगता है।
स एव अयं राजा वर्तते—वह ही यह राजा है।
यतिररिरपि पूज्यः—मुनि दुश्मन भी पूज्य है।
अतो ऽहमेवं गदामि—इसलिये ऐसा मैं कहता हूं।
यत स त्वां निंदति—क्योंकि वह तुम्हारी निंदा करता है।
ततो ऽहं दुग्धं पिबामि स्म—उस लिये मैंने दूध पिया।
कथमयं वृथा भाषते—क्यों यह व्यर्थ बोलता है।
इति मंत्रिभिः काष्ठांगारं विज्ञापितवंतः—इस तरह मंत्रियोंने काष्ठांगारको [जतलाया।
स पुनरागतः—वह फिर आया।

नीचे लिखे शब्दोंसे वाक्यरचना करो—

सहसा, प्रसह्य, इति, पुनः, एव, एवं, यतः, ततः, कुतः, अतः, कथं, तथा, यथा, सर्वथा, झटिति, मनाक्, ईषत्, शीघ्रं, क्षिप्रं, द्रुतं, साचि, बलात्, इत्थं, त्वरितं, तूष्णीं, नूनं, वृथा, मिथ्या, बहिः, अथ, प्रादुः, आविः, अपि, सर्वत।

तृतीय पाठ।

एक क्रियाविशेषणका भिन्न २ अर्थोंमें प्रयोग।

अथ।

१ मंगलसूचक—

अथ अहं ग्रंथं प्रारभे—मैं ग्रंथ शुरू करता हूं।

अथ श्रीजिनेंद्राभिषेकसमयः उपस्थितः—श्रीजिनेंद्रभ वान्के अभिषेकका काल उपस्थित हुआ।

२ अनंतर—

अथ तौ परस्परं मित्रतां संप्राप्तौ—अनंतर वे दोनों मित्रताको प्राप्त हुये।

अथ जीवंधरो व्याधान् जयति स्म—अनंतर जीवंधरने व्याधोंको जीता।

अथ स पापी धर्म आचरितवान्—अनंतर उस पापीने धर्मका आचरण किया।

अथ तत्र मेघा वर्षंतिस्म—अनंतर वहां मेघ वरषे।

३ आरंभ—

अथाहं तं वदामि—तो मैं उसको कहता हूं।

अथ कोऽयं द्वतीयः—यह दूसरा कौन है।

४ प्रश्न—

अथ को मां सेविष्यते—कौन मेरी सेवा करेगा।

अथ सा कुत्र वर्तते—वह [स्त्री] कहां है?

५ और—

गुणवान् अथ रूपवान् जनो दुर्लभः—गुणी और सुन्दर आदमी दुर्लभ है।

जीवकोऽथ नंदाढ्यो राजपुरीं गच्छतःस्म—जीवंधर और नंदाढ्य राजपुरीको गये।

६ सम्मति सूचक—

प्रश्न—कार्यं किं कृतवान्—क्या काम करलिया ?

उत्तर—अथ किं—जी हां।

प्रश्न—किं त्वं तत्र गतवान्—क्या तुम वहां गये थे ?

उत्तर—अथ किं—और क्या [जी हां]

प्रश्न—पाठं पठितवान्—पाठ पढलिया ?

उत्तर—अथ किं—जी हां।

ननु।

१ प्रश्न—

ननु त्वं तत् कार्यमारब्धवान् ?—क्या तुमने उस कामको शुरू कर दिया ?

नतु सेवकस्त्वां सेवते ?—क्या सेवक तुम्हारी सेवा करता है ?

२ निश्चय—

स ननु पंडितः—वह निश्चयसे पंडित है। [होती हैं।

ननु गुणलुब्धाः स्वयमेव संपदः—सपत्तियां निश्चयसे खुदही गुणोंकी लोभिनी

ननु वृष्टिर्भविष्यति—जरूर मेघ बरसेगा।

३ अनुनय—मनाना।

ननु मां प्रति मोदस्व—मेरे ऊपर प्रसन्न हूजिये।

ननु मद्गृहं प्रविश—कृपया मेरे घरमें प्रवेश कीजिये।

ननु तान् तितिक्षध्वं—कृपाकर उनको क्षमा कीजिये।

अपि।

१ प्रश्न—

अपि सुखं वर्तते ?—सुख तो है ?

अपि मां प्रति रुष्टा ?—क्या मुझसे रुष्ट होगई हो ?

अपि स मां कदाचित् पृच्छति—क्या वह कभी मुझे पूछता है ?

इस पर भी—

२ उद्दंडोऽपि अहं क्षंतव्यः—उद्दंड हूं तो भी मैं क्षमाके योग्य हूं।

मुनिरपि मिथ्या गदितवान्—मुनि भी झूठ बोला!

समुच्चय—(तथा, भी)

३ जीवंधरो ऽपि तत्र आगतः—जीवंधर भी वहा आये।

चेलना अपि तं दृष्टवती—चेलनाने भी उसे देखा।

खलु।

१ प्रश्न—

कोऽयं खलु अत्र आगच्छति ?—यहा यह कौन आता है ?

कथं खलु एतत् कार्यं कार्यं ?—यह काम कैसे करना चाहिये।

२ अनुनय—

न खलु न खलु हंतव्योऽयं मृगः—नहीं नहीं! यह मृग मारनेके योग्य नहीं है।

मां खलु पृच्छ—कृपापूर्वक मुझसे पूछिये।

यूयं खलु जैनेंद्रं पठत—आप लोग कृपाकर जैनेंद्र व्याकरण पढिये।

३ निश्चय—

स खलु महामुनिः—वह निश्चयसे महामुनि है।

जीवकः खलु महापंडितः—जीवंधर निश्चयसे बडा भारी पंडित है।

श्रेणिकः खलु सम्राट्—श्रेणिक निश्चयसे सम्राट् है।

इति।

१ हेतु—

शिष्योऽहं इति त्वां अर्चामि—मैं विद्यार्थी हूं इस कारण तुमको पूजता हूं।

गुरुरहं इति त्वां उपदिशामि—मैं गुरु हूं इस कारण तुझे उपदेश देता हूं।

दुर्जनः स इति जनास्तं निंदंति—वह दुर्जन है इस कारण लोग उसकी निंदा करते हैं।

२ प्रकार—

इति जैनेंद्रं महाव्याकरणं संपूर्णं—इस प्रकार महाव्याकरण जैनेंद्र पूर्ण हुआ।

इति गुरुस्तं दिशति स्म—इस तरह गुरुने उसको कहा।

इति दिनानि गच्छंति—इस तरह दिन वीतते हैं।

३ यह (जो कुछ कहा जाय उसके वादमें)

"यूयं ज्ञानध्यानतत्परा भवत" "तुम लोग ज्ञान और ध्यानमें लीन होओ" इति जीवंधरस्तपस्विनो वदतिस्म—यह वात जीवंधरने तपस्वियोंसे कही।

सूरिः "त्वं वर्षमेकं काष्ठांगारं "तुम एक सालतक काष्ठागार को क्षमा करो" तिजस्व" इति जीवकं कथितवान्—यह वात आचार्य ने जीवधरसे कही।

तावत्।

१ पहिले—(प्रथम)।

तावत् एतत् वदामि—पहिलें मैं यह वात कहता हूं।

त्वं तावत् वाराणसीं व्रज—तुम पहिले वनारस जावो।

२ इसके वीचमें (मध्यमें)।

ततो ऽहं तावत् मुनीन् दृष्टवान्—इतनेमें मैंने मुनियोंको देखा।

३ तब तक (पर्यंत)।

यावदसौ जीवति तावत् अमुं सेवस्व—जब तक यह जीवे तब तक इसकी सेवा करो।

१ हेतु—(क्योंकि)।

कालायसं हि कल्याणं कल्पते रसयोगतः। क्योंकि रसायनके संबंधसे लोहाभी सोना हो जाता है।

लोको हि-अभिनवप्रियः—क्योंकि लोग नवीन वस्तुके इच्छुक होते हैं।

अनवद्या हि विद्या (स्यात्) लोकद्वयसुखावहा। क्योंकि निर्दोष विद्या दोनों लोकोंमें सुख देनेवाली होती है।

अपुष्कला हि विद्या (स्यात्) अवहैकफला क्वचित्। क्योंकि अधूरी विद्या कहीं केवल अपमानरूपी फलकोही देनेवाली होती है।

२ निश्चय—(ही)।

अन्याभ्युदयखिन्नत्वं तत् हि दौर्जन्यलक्षणं। जो दूसरेके ऐश्वर्यसे जलना है वह निश्चयसे दुर्जनताका चिन्ह है।

न हि नीचमनोवृत्तिरेकरूपा स्थिता (भवेत्)। निश्चयसे नीचोंके मनकी वृत्ति एक रूपसे स्थित नहीं रहती।

अलंघ्यं हि पितृवाक्यं—पिताके वचन निश्चयसे उलंघन करने योग्य नहीं होवे।

३ केवल—(मात्र)।

मूर्खा हि पंडितान् रिषंति—मूर्ख लोगही केवल पंडितोंकी हिंसा करते हैं।

स हि सततदरिद्री (यस्य)—तृष्णा विशाला। वहही हमेशा गरीब है जिसकी—तृष्णा बढी हुई है।



तृतीय अध्याय

असमापिका क्रिया

प्रथमपाठ तुम्

१ अहं जैनेंद्रं (१) पठितुं इच्छामि—मैं जैनेंद्र के पढने की इच्छा करता हूं।
स्वर्गं गंतुं को न ईहते?—स्वर्ग को जाना कौन नहीं चाहता।
ईश्वरं ईक्षितुं को न कांक्षति?—ईश्वरको देखनेके लिये कौन नहीं चाहता।
कृषीवलो भूमिं कर्ष्टुं(२)यतते—किसान भूमि जोतने के लिये प्रयत्न करता है।
सा मां दृष्ट्वा क्रंदितुं प्रवृत्ता—वह मुझे देखकर रोने के लिये प्रवृत्त हुई।
गजं क्षपितुं सिंह आरब्धवान्—हाथी को मारने के लिये सिंह प्रवृत्त हुआ।
सेवका भारं वोढुं असमर्थाः—सेवक लोग बोझा ढोने के लिये असमर्थ हैं।
जीवको वनं क्रमितुं चेष्टते स्म—जीवंधरने वन उलंघन करने के लिये चेष्टा की
सा बाला नदीं तरितुं यतवती-उस लडकी ने नदी पार करने के लिये प्रयत्न किया
विद्वांस एव शास्त्राणि गाहितुं पटवः—विद्वान् लोग ही शास्त्रों का अवगाहन करनेकेलिये चतुर होते हैं।
भो महाराज!(३)अरीन् लवितुं यतस्व—हे महाराज! दुश्मनोंको नाश करने के लिये प्रयत्न करो।
सुधर्मं सेवितुं यतध्वं यूयं—अच्छे धर्मको सेवनेके लिये यत्न करो।

---

(१) धातुवोंसे तुम् प्रत्यय होनेसे धातु के व तुमके बीचमें इ (इट्) आता है। (२) तुम् होनेसे धातुके–इ, उ, ऋ को क्रमसे ए, ओ, अर् होजाता है जैसे–चिञ् (इकट्ठा करना) से तुम् किया तो चि+तुं=चेतुं, स्तु–तुं=स्तोतुं, स्तृ–तुं स्मर्तुं। —जिन धातुवोंका ऌ, औ, इत् गया है उनसे, तथा जिनके अंतमें दीर्घ आ, इ, ई, ह्रस्व उ, ह्रस्व ऋ, है उनसे तुम् प्रत्यय करने पर वीचमें इ (इट्) नहीं आता परंतु, पतॢ, श्वि, श्रि, शी, डी, रु, क्ष्णु, क्षु, स्नु, नु, [illegible] इनके लिये यह नियम नहीं है। (३) धातु के अंतके ए, ओ, ऐ, औको वादमें स्वर रहनेसे क्रमसे अय्, अव्, आय्, आव् होजातें हैं।

राजा प्रजाः रक्षितुं समर्थः—राजा प्रजाकी रक्षा करनेमें समर्थ है।

यूयं जीवान् हंतुं मा चेष्टध्वं—तुम लोग जीवोंको मारनेकी चेष्टा न करो।

सीतां हर्तुं रावणः संप्रवृत्तः—सीताको हरनेके लिये रावण प्रवृत्त हुआ।

वीरान् श्लाघितुं ग्रंथान् लिखामो वयं।—वीरोंकी प्रशंसा करनेकेलिये हम ग्रंथ लिखते हैं।

जीवंधरो दीक्षां लब्धुं श्रीवीरं श्रितवान्।—जीवंधरने दीक्षा लेनेकेलिये श्रीवीरभगवान्का आश्रय लिया।

पंडिता नष्टं शोचितुं न इच्छंति—पंडित लोग गई हुई चीजका शोक नहीं करते।

नीचे लिखे शब्दोंसे वाक्य रचो—

कर्तुं, हर्तुं, अयितुं, गदितुं, प्राप्तुं, नर्तितुं, भ्रमितुं, जेतुं, ज्ञातुं, दातुं, विधातुं, यतितुं, ईहितुं, पपितुं, प्रष्टुं, सोढुं, सहितुं, रोष्टुं, रोपितुं रेष्टुं, रेषितुं, वोढुं, रोदितुं, शपितुं, भ्रष्टुं, स्थातुं, सेक्तुं, गृहीतुं, पातुं, स्रष्टुं, खादितुं, भक्षयितुं, अर्चितुं, पूजितुं, अटितुं, व्रजितुं, भवितुं, घटितुं, शक्तुं, वर्धितुं, भ्रष्टुं, सर्तुं, जीवितुं, अंचितुं, स्फुटितुं, पघितुं, फलितुं, चलितुं, चरितुं, कत्थितुं, श्लाघितुं, प्रसितुं, दीक्षितुं, द्योतितुं, प्रकाशयितुं, प्रथितुं, दोग्धुं, द्रष्टुं, स्मेतुं, नंदितुं, चेष्टितुं, खेलितुं, क्रीडितुं।

द्वितीय पाठ।

णम्।

१ जीवकः तीर्थस्थनानि (१) याजं याजं अटतिस्म।—जीवंधर तीर्थस्थानोंको पूज पूजकर जाते थे।

बालः हासं हासं आगच्छतिस्म—लडका हंस हंस करके आता था।

सोऽसत् तपो दर्श दर्श वदति—वह झूंठा तप देख देखकर कहता है।

पांथाः पक्षिकूजनानि श्रावं श्रावं चलंति।—पथिक लोग पक्षियोंके शब्द सुन सुनकर चलते हैं।

---

(१) धातु से णम् प्रत्यय होने पर धातुवों के अंत अक्षर से पहिले 'अ' को आ हो जाता है।

अहं सदुपदेशं स्मारं (४) स्मारं मोदे।	मैं अच्छे उपदेशको स्मरणकर करके आनंदित होता हूं।
माता सुतं(५)स्पर्शं स्पर्शं चुंबति	मा पुत्रको स्पर्श कर करके चूमती है।
मानवा मुनीन् सेवं सेवं उन्नता भवंति।	मनुष्य मुनियोंकी सेवा कर करके उन्नत होते हैं।
शिशुः ज्वारं ज्वारं ग्लायति	लडका रुग्ण हो हो कर क्षीण होता है।
निर्धनः काठं काठं म्रियते	निर्धन जन दुःखी हो हो कर मरते हैं।
लोकाः शास्त्राणि(६)म्नायं म्नायं विद्वांसो भवंति।	लोग शास्त्रोंका मनन कर करके विद्वान् होते है।
विद्यार्थिनः ग्रंथान् पाठं पाठं परीक्षां तरंति।	विद्यार्थी लोग ग्रंथोंको पढ पढकर परीक्षा पास करते हैं।
अध्यवसायिनः चेष्टं चेष्टं शक्तिमंतो भवंति।	अध्यवसायी लोग चेष्टाकर करके शक्तिवाले होते हैं।
औषधं ग्रासं ग्रासं रुग्णो स्वास्थ्यं लभते।	दवाई खा खाकर रोगी स्वस्थ होता है।
गुरुं मानं मानं शिष्या उदारा भवंति।	गुरुका सम्मान कर करके शिष्य उदार होते हैं।
जनान् गर्हं गर्हं जना निंदुका भवंति।	लोगोंकी निंदा कर करके मनुष्य निंदुक हो जाते हैं।

४–ञित् णित् (ञ् ण् जिनमें लगा हो) प्रत्यय होनेसे धातुके अंतके इ, ई के स्थानमें ऐ, उ ऊ के स्थानमें औ, ऋ ॠ के स्थानमें आर् होजाते हैं। जैसे क्षि-अम् (णम्) क्षै+अम्=क्षायं, शी+अम्=शायं श्रु+अम्=श्राव, भू+अम्=भावं, स्मृ+अम्=स्मार, तॄ+अम्=तारं। ऐ, औ को आय्, आव् १५ पृष्ठकी तीसरी टिप्पणी से होते हैं। ५ धातुके अंतके अक्षरसे पहिले अ, इ, उ, ऋ को क्रमसे आ, ए, ओ अर् हो जाते हैं यदि कित् ङित् (क्, ङ् जिसके इत् हों) प्रत्ययसे भिन्न प्रत्यय बादमें हों। ६ आकारांत धातुवोंसे ञित् णित् प्रत्यय होनेपर बीचमें 'य' आजाता है जैसे–पा+अम्=पायं, म्ना–अम् (णम्) म्नाय।

दोषिणः तेजं तेजं मुनयो यथार्था भवंति । — अपराधियोंको क्षमा कर करके मुनि सच्चे मुनि होते हैं ।

पर्वताः क्षायं क्षायं समतला जाताः—पर्वत नष्ट हो होकर समतल होगये ।

प्रभुं ईक्षं ईक्षं नयनानि न तृप्तानि—स्वामीको देख देखकर नेत्र तृप्त न हुये ।

सा स्मायं स्मायं पतिमानंदितवती । — उस स्त्रीने मुस्करा मुस्करा कर पतिको आनंदित किया ।

स धर्मं देशं देशं जीवान् नंदतिस्म । — उसने धर्मका उपदेश दे देकर जीवोंको आनंदित किया ।

नीचे लिखे शब्दोंसे वाक्य रचना करो—

सारं, मेपं, वेषं, शंकं, ख्यायं, प्यायं, प्रासं, वेष्टं, कत्थं, शिक्षं, ध्यायं, जायं, प्रच्छं, ग्राहं, श्रायं, हारं, भोजं, सेचं, लाभं, शोचं, गाहं, क्रामं ।

तृतीयपाठ ।

(७) त्वा (क्त्वा)

१ ईश्वरं अर्चित्वा पुण्यं लभध्वं—भगवान्‌की पूजा करके पुण्यकी प्राप्ति करो ।

तत्र स्थित्वा स पठति स्म—वहा रहकर उसने पढा ।

श्रावकाः (८)स्नात्वा जिनं अर्चंति—श्रावक लोग स्नानकरके जिनको पूजते हैं

धनं दत्त्वा ते न मिर्षंति—धन देकर वे गर्व नहीं करते ।

जीवकं (९) दृष्ट्वा यक्षो हृष्टः—जीवधरको देखकर यक्ष हर्ष युक्त हुआ ।

७–धातुवोंसे "करके" अर्थमें क्त्वा (त्वा) प्रत्यय होता है । एव धातु तथा त्वा के वीचमें इ (इट्) आती है । ८ जिन धातुवोंका ऌ, औ-इत् गया है उन से तथा जिनके अन्तमें दीर्घ आ, इ, ई, हस्व उ, हस्व ऋ हैं उनसे क्त्वा करने पर मध्यमें इ (इट्) नही आता परतु पतल शी, डी, श्रि धातुवोंको छोड देना । ९–प्रथमभागमें–क्त, क्तवतु प्रत्यय करनेसे धातुके रूपमें परिवर्तन ष्–को ष होना आदि बतलाया है वह यहा भी समझना ।

सम्राट् अरीन् जित्वा राजधानीमागतः। — चक्रवर्ती दुश्मनोंको जीतकर राजधानीको आया।

स जिनालयं गत्वा जिनान् नमति। — वह जिनमंदिरमें जाकर जिनको नमस्कार करता है।

स जिनं नत्वा स्तोत्रं पठति—वह जिनको नमस्कार करके स्तोत्र पढता है।

गुरुं (१०)सेवित्वा स वरं प्राप्तवान्—गुरुकी सेवा करके उसने वर पाया।

बद्धान् मुक्त्वा पुण्यमर्जतिस्म सः। — कैदियोंको छोडकर उसने पुण्य प्राप्त किया।

तमिदं पृष्ट्वा समागतोऽहं—उसको यह बात पूछकर मैं आया हूं।

आलयान् दग्ध्वा अग्निस्तृप्तः—घरोंको जलाकर आग तृप्त हुई।

अरिं हत्वा क्रोधाग्निः शांतः—दुश्मनको मारकर क्रोधाग्नि शांत हुई।

अत्र उषित्वा अहं संस्कृतं शिक्षितवान्—यहां रहकर मैंने संस्कृत सीखी।

शश्वत् (१०)रुदित्वा सा इदं लब्धवती—बहुत वार रोकर उसने इसको पाया।

दुग्धं पीत्वा पुष्टस्त्वं—दूध पीकर तू मोटा हुआ है।

विद्यां लब्ध्वा कः पापी भविष्यति—विद्या पाकर कौन पापी होगा।

भारं ऊढ्वा भृत्यः क्लांतः—भार ढोकर नौकर थक गया।

वाचं उदित्वा शीघ्रं प्रत्यागच्छ—संदेशा (बात) कहकर शीघ्र लौट आओ।

विद्वांसं श्रित्वा मूर्खा अपि पंडिता भवंति—विद्वान्का आश्रय लेकर मूर्ख भी पंडित हो जाते हैं।

भिक्षित्वा अन्नं खादति भिक्षुः—भिखारी मांग करके अन्न खाता है।

नीचे लिखे शब्दोंसे वाक्य बनाओ—

अंचित्वा, अर्चित्वा, कृत्वा, उषित्वा, गदित्वा, अटित्वा, गत्वा, उदित्वा, सृत्वा, ईहित्वा, एधित्वा, पष्ट्वा, रुषित्वा, एधित्वा, भिक्षित्वा, मयित्वा, वेष्टित्वा, शंसित्वा, शोभित्वा, शिक्षित्वा, शं-

---

१०-१० सेट् (जहां बीचमें इट् आया हो) क्त्वा परे रहनेसे धातुके इ, उ ऋ को क्रमसे ए, ओ, अर् होजाता है। परंतु रुद्, विद्के लिये यह नियम नहीं।

कित्वा, मृत्वा मृष्ट्वा, शोचित्वा, लिखित्वा, लेखित्वा, क्रीडित्वा, नत्वा, व्रजित्वा, सेवित्वा, पतित्वा, श्रुत्वा, जित्वा, स्थित्वा, गृहीत्वा, भुक्त्वा, शपित्वा, हत्वा, पृष्ट्वा, भ्रांत्वा, भ्रमित्वा, (११) श्रांत्वा, ज्वलित्वा, दुग्ध्वा, विष्ट्वा।

चतुर्थपाठ।

(१२) य (प्य)

१ पुष्पाणि आघ्राय भ्रमरा मोदंते—फूल सूंघकर भ्रमर हर्षित होते हैं।

अहं तं प्रणिपत्य इदं उक्तवान्—मैंने उसको प्रणाम करके यह बात कही।

अरिं (१३)निहत्य द्योतते राजा—राजा दुश्मनको मारकर शोभित होता है।

अधीत्य शास्त्राणि अपि भवंति लोका मूर्खाः। शास्त्रोंको पढकरके भी लोग मूर्ख रहते हैं।

जिनालयं प्रविश्य जिनं स प्रणतवान्। जिनालयमें प्रवेश करके जिनभगवान्को उसने प्रणाम किया।

वाचं परिष्कृत्य पंडिता वदंति—पंडितलोग वाणीको परिष्कृत करके बोलते हैं

गृहं उन्मुच्य स कुत्रापि न गच्छति—घर छोडकर वह कहीं भी नहीं जाता है

तरुं आरुह्य वानरः फलानि खादति—पेडपर चढकर बंदर फल खाता है।

११–जिन धातुवोंका "उ" इत् गया है उनसे क्त्वा प्रत्यय करने पर बीचमें इट् विकल्प (इच्छानुसार) से आता है। १२–प्र, परा, अप, सम् अनु, अव, निर् दुर्, वि, आङ्, नि, अधि, अपि, अति, सु, उद्, अभि, प्रति, परि, उप ये २० शब्द उपसर्ग कहलाते हैं। धातुसे पहिले उपसर्ग रहनेसे "करके" अर्थमें य (प्य) प्रत्यय होता है क्त्वा नहीं। १३–ह्रस्व-अ, इ, उ, ऋ के बादमें पित् (प्–इत् जिसका हो) प्रत्यय होनेसे बीचमें 'त्' आता है। जैसे 'नि' उपसर्ग पूर्वक हनौ (मारना) धातुसे प्य (य) किया तो हन्+य हुआ नकारका लोप होनेसे ह–य रहा अब 'ह' के अ से पर पित् प्य प्रत्ययका 'य' है इसलिये बीचमें त् आनेसे निहत्य हुआ। इसी तरह परिष्कृत्य आदि समझना।

जिनं समर्च्य अन्नं खादति श्रावकः।	श्रावक जिनकी पूजा करके भोजन खाता है।
धनं प्राप्य के दरिद्रा भवितुं एषिष्यंते।	धन प्राप्त करके कौन दरिद्र होना-चाहेंगे।

ईश्वरं प्रणम्य (त्य) ग्रंथं लिखामि—भगवान्‌को प्रणाम करके ग्रंथ लिखता हूं।

पुत्रं विद्वांसं प्रेक्ष्य के न मोदंते—पुत्रको विद्वान् देखकर कौन नही हर्षित होता है

पर्वतं उत्तीर्य वयं उपत्यकां आगताः।	पर्वतको पार करके हम लोग उपत्यका-में आगये हैं।
विपन्नान् परित्राय यशः पुण्यं च लभध्वं।	विपद्ग्रस्तोकी रक्षा करके यश तथा पुण्यको प्राप्त करो।

असिं आकृष्य स आदिशति स्म—तलवार खींचकर उसने आज्ञा दी।

मां आदिश्य स प्रस्थितः—मुझे आज्ञा देकर वह चला गया।

स प्रातः उत्थाय ईश्वरं स्मरति।	वह सवेरे उठकर भगवान्‌को स्मरण करता है।

फलानि आनीय अहं भक्षितवान्—फल लाकर मैंने खाये।

नदीं अवगाह्य अहं शीतलो जातः—नदीमे स्नान करके मैं ठंडा हो गया।

स पुस्तकं आदाय गृहं गतवान्—वह किताब लेकर घर गया।

धैर्यं अवलंब्य साधवः कार्याणि साधयंति।	धीरताको अवलंबन करके साधु लोग कार्य करते हैं।

स बहिर्निःसृत्य मां पश्यति स्म—उसने बाहर निकलकर मुझे देखा।

नीचे लिखे शब्दोंसे वाक्य रचना करो—

प्रदाय, विधाय, प्रतिज्ञाय, परिज्ञाय, संपाल्य, आलिंग्य, परिष्वज्य, विभिद्य, प्रछिद्य, आगत्य, आनम्य, निरूप्य, विकीर्य, विस्तीर्य, आक्रम्य, परिव्रज्य (संन्यास लेकर) संत्यज्य, विमुच्य. आलोच्य, संवीक्ष्य, अवलोक्य, निधाय, प्रत्यावृत्य, विमृश्य, उपसृज्य, निःसृत्य, उद्धृत्य, आसाद्य (पाकर) संपूज्य, उपसृत्य, समेत्य, प्रकथ्य,

प्रणद्य, आनंद्य, संस्तुत्य, निपीय, संहृत्य, निक्षिप्य, संचेष्ट्य, विलिख्य, आकर्ण्य, संश्रुत्य, प्रहस्य, संदश्य, प्रदीव्य, (जुआ खेल करके), मलिनीकृत्य, स्तब्धीकृत्य, नमस्कृत्य।

परिशिष्ट

(१४) समासयुक्तपद—(अव्ययी[१५]भाव)

१ विभक्ति अर्थ (में)—

अधिस्त्रि [१६] रागः क्रूरोऽयं—स्त्रीमें जो प्रेम करता है वह क्रूर है।

अधिवनं वानरा वसंति—वनमें वंदर रहते हैं।

अधिनदि इमे तरंति—ये लोग नदीमें तैरते हैं।

अधिमंडपं राजानः समागताः—राजा लोग मंडपमें आये।

अधिनगरं जना वसंति—मनुष्य नगरमें रहते हैं।

अधिनारि विश्वासो न कर्तव्यः—स्त्रीमें विश्वास नहीं करना चाहिये।

सिंहोऽधिगुहं गर्जितवान्—सिंह गुहामें गर्जा।

अधिपाठशालं छात्राः पठंति—विद्यार्थी लोग पाठशालामे पढते हैं।

२ ऋद्धिका अभाव—

दुर्यवनं जातं—मुसल्मानोंकी संपत्तिका नाश होगया।

३ अभाव—

भवान् निर्मक्षिकं कृतवान् एतत् गृहं—आपने यह घर सूना कर दिया।

बालको निःशब्दं स्थितः—लडका शब्द रहित (चुपचाप) खडा होगया।

१४–परस्परमें संबंधवाले दो या दोसे अधिक पदोंको मिलाकर समुदायसे विभक्तीका लाना समास है। १५–विभक्ती आदि दश अर्थोंमें जो अधि वगैरै अव्यय हैं उनका दूसरे शब्दोंके साथ जो समास होता है उसको अव्ययीभाव समास कहते हैं १६–अव्ययीभाव समासके रूप हमेशा नपुंसकलिंगके समान चलते हैं [प्रथमभाग-के तृतीय अध्यायकी टिप्पणी देखो) परतु अकारांतसे भिन्न इकारांतादि अव्ययीभावके रूप सब विभक्तियोंके सब वचनोंमें कर्ता [प्रथमा]के एक वचनके सदृश होते हैं।

एतत् वनं निर्जनं वर्तते—यह वन मनुष्यरहित [सूना] है।

उल्लंघन करना (अत्यय)—

पक्षिणः अतिमेघं उत्पतंति—पक्षि मेघको अतिक्रम करके उडते हैं।

सुकर्माणि अतिबाधं फलंति—अच्छे काम बाधाको उल्लंघन करके फलते हैं।

४ पश्चात्—

शिशवः अनुशकटं धावंति—लडके गाडीके पीछे दौडते हैं।

अनुरथं पदातयो गच्छंति—रथके पीछे प्यादे चलते हैं।

अनुस्नानं जिनं अर्चंति श्रावकाः—श्रावक लोग स्नानके बाद जिनकी पूजा [करते हैं।

५ वीप्सा—

प्रतिवृक्षं सिंचति सेवकः—सेवक हर एक वृक्षको सींचता है।

प्रतिदेशं अयं सामाचारः प्रचलितः। हर एक देशमें यह समाचार प्रसिद्ध-हो गया।

प्रतिनगरं रक्षका वसंति—हर एक नगरमें सिपाही [रक्षक] रहते हैं।

६ अनतिक्रम—[अनुसार]।

यथाविधि श्रावका व्रतमाचरंति। श्रावक लोग विधिके अनुसार व्रतका आचरणकरते हैं।

यथाशक्ति धर्मं आचरणीयः—शक्तिके अनुसार धर्म करना चाहिये।

यथावृद्धं साधून् अर्च—साधुवोंको वृद्धोंके क्रमसे पूजो अर्थात् जो वडा है [उसको पहिले और छोटेको पीछेसे पूजो।

७ मर्यादा—

आपाटलिपुत्रं मेघो वृष्टः—पाटलिपुत्र [अर्थात् पाटलिपुत्रके पहिले तक अंत तक नहीं] मेह बरखा।

आजलस्थानं अतिथिरनुगंतव्यः। जलस्थान तक अतिथि [मिहमान] के पीछे जाना चाहिये।

आनदि वृक्षपंक्तिः शोभते—पेडोंकी लेन नदी तक शोभती है।

८ अभिविधि—

आबालं यशो गतं समंतभद्रीयं—समंतभद्र स्वामीका यश लडकोंतक फैला है—[अर्थात् लडके भी उसको जानते हैं।

आबाल्यं अहं दुर्बलः—लडकपनसे मैं दुर्बल हूं।

९ आभिमुख्य—

धेनवोऽभिगोशालं धावंति—गायें गोशालाकी तरफ दौडती हैं।

हस्तिनोऽभिनदि जवंति—हाथी नदीके संमुख दौडते हैं।

१० समीपार्थ—

उपगृहं जलाशयो शोभते—घरके पास तालाब शोभित होता है।

उपघटं कुलालो वर्तते—घडेके समीप कुम्हार है।

उपमेघं पक्षिण उत्पतंति—मेघके समीप पक्षी उडते हैं।

नीचे लिखे शब्दोंमेंसे एक एक शब्दसे वाक्य बनाओ—

निरन्नं, निर्विघ्नं, उपनदि उपगुरु, आछात्रं, आवाराणसि, आसमुद्रं, आशिशु, अनुनृपं, अनुगिरि, प्रतिमासं, यथामति, अभ्यग्नि, अधिपर्वतं, अभिगृहं, प्रत्यक्ष, समक्षं, प्रतिसंवत्सरं, अनुविघ्नं, उपकुलालं।

विभक्तीयुक्त शब्द।

तृतीया विभक्ती।

पुंलिंग।

अकारांत।

१ छात्रेण सह गुरुरागतः—विद्यार्थीके साथ गुरु आया।

विवादेन किं प्रयोजनं—विवादसे क्या मतलब है।

स्वभावेन स सरलः—वह स्वभावसे सरल है।

हस्तेन माता मां स्पृशति—माता मुझे हाथसे स्पर्श करती है।

प्रकृष्यमाणरागेण कालो विलयमीयिवान्—बढतेहुये रागसे समय नष्ट होने लगा।

दैवतेन पूजिता भवंति धार्मिकाः—धर्मात्मा लोग देवोंसे पूजित होते हैं।

तद्वीक्षणमात्रेण वैभवं निर्णीतं—उसके देखने मात्रसे ऐश्वर्यका निर्णय कर लिया।

२ बालकाभ्यां अहं पृष्टः—दो बालकोंने मुझे पूछा।
हस्ताभ्यां स स्पृशति—वह दोनों हाथोंसे मुझे छूता है।
छात्राभ्यां गुरुः सेवितः—दो विद्यार्थियोंने गुरुकी सेवा की।
क्षत्रियाभ्यां ग्रामो रक्षितः—दो क्षत्रियोंने गांवकी रक्षाकी।
अनलाभ्यां वृक्षा दग्धाः—दो अग्नियोंने पेड जलाये।
पाठकाभ्यां प्रश्नाः कृताः—दो पाठकोंने प्रश्न किये।

३ छात्रैः ग्रंथा लिखिताः—विद्यार्थियोंने ग्रंथोंको लिखा।
बालैः ओदनाः खादिताः—लडकोंने चावल खाये।
जिनैः दयाधर्मः उपदिष्टः—जिन भगवानने दया धर्मका उपदेश दिया।
अश्वैः नदी तीर्णा—घोडोंने नदीको पार किया।

संस्कृत बनाओ—

मद्यसे मनोभ्रम होता है। मनोभ्रमसे अशुभकर्मबंध होता है। पापसे दुर्गति मिलती है। इसलिये कृतकारितानुमोदनसे मद्यको छोडो। सम्यग्दृष्टि जीव देवोंसे पूजा जाता है। पतिव्रता स्त्री अग्निसे भी नहीं जलती है। पुण्यसे सांप भी रज्जु हो जाता है।

नीचे लिखे शब्दोंसे वाक्य बनाओ—

सज्जनेन, वचनैः, खलाभ्यां, क्षुधातुरेण, दैवेन, मद्यवशेन, गायति, मांसभोजनेन।

इकारांत।

१ अहिना बालो दष्टः—सांपने बालक काटा।
मुनिना धर्म उपदिष्टः—मुनिने धर्मका उपदेश दिया।
ऋषिणा सह विवादो न कार्यः—ऋषिके साथ विवाद नहीं करना चाहिये।
कपिना सह क्रीडा न कर्तव्या—बंदरके साथ क्रीडा न करनी चाहिये।

२ नृपतिभ्यां आज्ञा इयं प्रचारिता—दो राजाओंने यह आज्ञा निकाली।
मुनिभ्यां परस्परं विवादो न कर्तव्यः—मुनियोंको परस्परमें विवाद न करना चाहिये।

कविभ्यां आदिपुराणं रचितं—दो कवियोंने आदिपुराण रचा।

अरिभिः स हतः—दुस्मनोंने उसे मार डाला।

मुनिभिः सुप्रवर्तितं—मुनियोंने अच्छा किया।

कपिभिः वनमिद्माक्रांतं—बंदरोंसे यह वन घिर गया।

संस्कृत बनाओ—

अग्निने इस घरको जलाया। दुश्मनोंने इसको घेर लिया। राजाने यह बात कही। मुनियोंने उनको क्षमा किया। कवियोंने बहुतसे ग्रंथ लिखे।,

उकारांत।

१ बंधुना सह विवादो न कार्यः—भाईके साथ विवाद नहीं करना चाहिये।

शत्रुणा मैत्री न उचिता—दुस्मनके साथ मित्रता ठीक नहीं है।

गुरुणा वयं आदिष्टाः—गुरुने हम लोगोंको आज्ञा दी।

२ शिशुभ्यां इदं कृतं—दो लड़कोंने यह काम किया।

तरुभ्यां गृहं वेष्टितं—दो पेड़ोंने घरको घेर लिया।

परशुभ्यां वृक्षश्छिन्नः—दो परशुओं (कुल्हाड़ी) ने वृक्ष काटा।

३ साधुभिः उपकृता वयं—साधुओंसे हम उपकृत हुये।

अंशुभिः प्रकाश्यते जगत्—किरणोंसे संसार प्रकाशित होता है।

प्रभुभिः भृत्या आदेष्टव्याः—स्वामियोंसे नौकर लोग आज्ञापित होने चाहिये

संस्कृत बनाओ—

सूरजने (भानु) किरणें फैलाई। किरणोंने जगत् प्रकाशित किया। बंधुओंने आज्ञाकी। दो बाहुओंसे उसने ऐसा किया। दो शत्रुओंने उसे घायल (आहत) किया। चंद्रमा (हिमांशु) रात्रिमें (नक्तं) शोभता है।

ऋकारांत।

१ गृहीत्रा दाता अर्चितः—गृहीताने दाताको पूजा।

सवित्रा राजते दिवा—सूर्यसे दिन शोभित होता है।

श्रोत्रा पृष्टो वक्ता—श्रोतासे वक्ता पूछा गया।

२ भ्रातृभ्यां आदिष्टोऽहं—दो भाइयोंने मुझे आज्ञा दी।

कर्तृभ्यां कृतमिदं कार्यं—दो स्वामियोंने यह काम किया।

उपदेष्टृभ्यां सर्वत्र भ्रांतं—दो उपदेशकोंने सर्वत्र भ्रमण किया।

३ जेतृभिर्बद्धा अरयः—जीतनेवालोंने शत्रुओंको बाध लिया।

दोग्धृभिः धेनुर्मुक्ता—दोहनेवालोंने गाय छोड़ दी।

पितृभिः पुत्राः पाठनीयाः—पिताओंको पुत्र पढाने चाहिये।

संस्कृत बनाओ—

छेदनेवालेने (छेत्तृ) वृक्ष काटा। माता पिताके साथ (माता पितृ) विवाद नहीं करना चाहिये। भाइयोंके साथ तेने धन चुराया। दैवके साथ (विधातृ) कलह अनुचित है।

व्यंजनांत पुंलिंग।

१ (च्) जलमुचा चातको संतुष्टिं गच्छति—मेघसे चातक संतुष्ट होता है।

(ज्) परिव्राजा सर्वत्र गंतव्यं—सन्यासीको सब जगह जाना चाहिये।

(ज्) सम्राजा राजान आदेष्टव्याः—चक्रवर्ती द्वारा राजा लोग आज्ञापित होने योग्य हैं।

(त्) पापकृता दुःखमनुभूतं—पापीने दुःख भोगा।

(मत्) बुद्धिमता आशु कार्यं साध्यं—बुद्धिमान्‌को शीघ्र कार्य करना चाहिये।

(मत्) बलवता सह विरोधो न विधेयः—बलवान्‌के साथ विरोध न करना चाहिये।

(अत्) गायता रुदन् अहं पृष्टः—गातेहुयेने मुझ रोते हुयेको पूछा।

(द्) सुहृदा सह सर्वदा वसनीयं—मित्रके साथ हमेशा रहना चाहिये।

(अन्) राज्ञा सह विरोधो न विधेयः—राजाके साथ विरोध न करना चाहिये।

(अन्) मूर्ध्ना अहं तं प्रणतवान्—मस्तकसे मैंने उसे प्रणाम किया।

(अन्) दुरात्मना सह वार्तालापो न कार्यः—दुरात्माके साथ बातचीत न करनी चाहिये।

(इन्) स्वामिना भृत्य आदिष्टः—स्वामीने नौकरको हुक्म दिया।
(इन्) मंत्रिणा राजा उक्तः—मंत्रीने राजासे कहा।
(अस्) चंद्रमसा रात्रिः राजते—चंद्रमासे राति शोभित होती है।
(वस्) विदुषा धर्मः कार्यः—विद्वान्को धर्म करना चाहिये।
(वस्) जग्मुषा सह सर्वे गताः—जानेवालेके साथ सब गये।
(ईयस्) ज्यायसा अहं आज्ञप्तः—बड़े भाईने मुझे आज्ञा दी।
२ वारिमुग्भ्यां पर्वतः कुंठितः—दो मेघोंने पर्वत ढक लिया।
देवराड्भ्यां देवा आदिष्टाः—दो इंद्रोंने देवोंको आज्ञा दी।
पुण्यकृद्भ्यां सुखकरं एतत् स्थानं—दो पुण्यात्माओंसे यह स्थान सुखकर है।
ज्ञानवद्भ्यां अहं उपदिष्टः—दो ज्ञानवालोंने मुझे उपदेश दिया।
ज्योतिष्मद्भ्यां इदं जगत् प्रकाशते—ज्योतिवाले दो पदार्थोंसे यह जगत प्रकाशित होता है।
गायद्भ्यां ते संतुष्टाः—दो गानेवालोंसे वे सतुष्ट होगये।
सभासद्भ्यां सभा सम्पन्ना—दो सभासदोंसे सभा अच्छी हो गई।
राजभ्यां सह व्रजति सम्राट्—चक्रवर्ती दो राजाओंके साथ चलता है।
उक्षभ्यां भग्नोऽयं नदीतटः—यह नदीका किनारा दो साड़ोंने तोड़ा है।
धर्मात्मभ्यां शोभते गृहं—दो धर्मात्माओंसे घर शोभता है।
पक्षिभ्यां इह आगतम्—दो पक्षी यहां आये।
तपस्विभ्यां सह स वनं गतः—वह दो तपस्वियोंके साथ वनको गया।
उदारचेतोभ्यां ग्रंथोऽयं दत्तः—उदारचित्तवालोंने यह ग्रंथ दिया।
विद्वद्भ्यां शिक्षितोऽयं जनः—दो विद्वानोंने इस आदमीको शिक्षित किया।
ज्यायोभ्यां कनीयान् आदिष्टः—दो बड़े भाइयोंने छोटेको आज्ञा दी।
३ जलमुग्भिः आकाशः कृष्णो जातः—मेघोंसे आकाश काला होगया।
राजराड्भिः साधवः सेविताः—महाराजाओंसे साधु सेये गये।
पापकृद्भिः सह निवासो न विधेयः—पापी लोगोंके साथ निवास न करना चाहिये।
चक्षुष्मद्भिरिदं द्रष्टव्यं—नेत्रवालोंको यह देखना चाहिये।
ज्ञानवद्भिः वयं पृष्टाः—ज्ञानियोंने हमें पूछा।

धर्मं ध्यायद्भिः मुक्तिर्लब्धा—धर्मको ध्याते हुयोंने मुक्ति पाई।

ग्रामं गच्छद्भिः तृणानि स्पृष्टानि—ग्रामको जाते हुयोंने तृणोंका स्पर्श किया।

दिविषद्भिः साहाय्यं कृतं—देवतायोंने सहायता की।

सुहृद्भिः महत् उपकृतं—मित्रोंने वडा उपकार किया।

राजभिः यथाक्रमं त्रिवर्गं सेव्यं—राजायोंको क्रमानुसार त्रिवर्ग (धर्म, अर्थ, काम) का सेवन करना चाहिये।

अश्मभिः निर्मितमिदं—पत्थरोंसे यह वनाया है।

द्विजन्मभिः उपदिष्टं इदं शास्त्रं—ब्राह्मणोंने इस शास्त्रका उपदेश दिया है।

ज्ञानिभिः प्रशंसितोऽयं जनः—ज्ञानियोंने इस पुरुषकी प्रशंसा की है।

दिवौकोभिर्जिनः पूजितः—देवतायोंसे जिन पूजित हुये है।

उदारचेतोभिः दानं दत्तं—उदारचित्तवालोंने दान दिया।

विद्वद्भिः विचार्य कार्यं—विद्वानोंको विचार करके करना चाहिये।

जग्मिवद्भिः तस्थिवांसः गदिताः—गमनकारियोंने वैठेहुओंसे कहा।

कनीयोभिः ज्यायांसः प्रणमिताः—छोटोंने वडोंको प्रणाम किया।

नीचे लिखे शब्दोंसे वाक्य वनावो—

सुहृद्भ्यां, गुणवद्भिः, उदारचेतसा, धर्मवचोभिः, महामनोभिः, गरीयोभ्यां, लघीयसा।

संस्कृत वनावो—

जो प्रेमके साथ पत्थरकी भी पूजा करते हैं वे लोग देवताओंसे (दिवौकस्) उपकृत होते हैं। सच्चे मित्रोंसे (सुहृद) वहुत उपकार होता है। क्योंकि वे उदार चित्तवाले होते हैं। ब्राह्मणोंसे (द्विजन्मन्) पहिले वहुतसे ग्रंथ रचे गये हैं। तपस्वियोंने सच्चे धर्मका उपदेश दिया उसको सुनकर विद्वान मुग्ध हुये। भक्तिवाले श्रावकोंने इक्षुरसका आहार दिया। उसे देखकर देवताओंने रत्नवृष्टि की। पापियों (पापकृत्) ने पुन्यात्माओंको दुःख

दिया। शरीरवालोंको (वपुष्मत्) धर्म अवश्य करना चाहिये। छोटे भाइयोंने बडे भाइयोंसे कहा।

सर्वनाम पुंलिंग।

एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
सर्व—सर्वेण	सर्वाभ्यां	सर्वैः
तद्—तेन	ताभ्यां	तैः
यद्—येन	याभ्यां	यैः
किम्—केन	काभ्यां	कैः
इद—अनेन	आभ्यां	एभिः
अदस्—अमुना	अमूभ्यां	अमीभिः
अस्मद्—मया	आवाभ्यां	अस्माभिः
युष्मद्—त्वया	युवाभ्यां	युष्माभिः

संस्कृत बनावो—

उस पंडितने उसे पराजित किया। जिस आदमीने यह काम किया है वह प्रशंसाके योग्य है। किसने यह कविता बनाई है। इस विद्वानने यह बात कही है। इस पंडितके साथ मैंने बात-चीत की। क्या तुमने इसे पढा है?। सब लोग इस बातको कहते हैं। जिन्होंने धर्मका उपदेश दिया वे पूजनीय हैं। इन लोगोंने जैनेंद्र पढा है। हमलोगोंने आज भगवानकी पूजा की।

स्वरांत स्त्रीलिंग

एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
आ—कन्यया	कन्याभ्यां	कन्याभिः
इ—मत्या	मतिभ्यां	मतिभिः
इ—ऊर्म्या	ऊर्मिभ्यां	ऊर्मिभिः
इ—ओषध्या	ओषधिभ्यां	ओषधिभिः
ई—नद्या	नदीभ्यां	नदीभिः

ई—तस्थुष्या	तस्थुषीभ्यां	तस्थुषीभिः
उ—रेण्वा	रेणुभ्यां	रेणुभिः
उ—धेन्वा	धेनुभ्यां	धेनुभिः
उ—चंच्वा	चंचुभ्यां	चंचुभिः
ऊ—वध्वा	वधूभ्यां	वधूभिः
ऊ—चम्वा	चमूभ्यां	चमूभिः
ऋ—दुहित्रा	दुहितृभ्यां	दुहितृभिः

व्यंजनांत।

एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
च्—ऋचा	ऋग्भ्यां	ऋग्भिः
वाचा	वाग्भ्यां	वाग्भिः
त्वचा	त्वग्भ्यां	त्वग्भिः
द् विपदा	विपद्भ्यां	विपद्भिः
परिषदा	परिषद्भ्यां	परिषद्भिः
शरदा	शरद्भ्यां	शरद्भिः
ध् वीरुधा	वीरुद्भ्यां	वीरुद्भिः
समिधा	समिद्भ्यां	समिद्भिः
क्षुधा	क्षुद्भ्यां	क्षुद्भिः
त्—योषिता	योषिद्भ्यां	योषिद्भिः
सरिता	सरिद्भ्यां	सरिद्भिः
विद्युता	विद्युद्भ्यां	विद्युद्भिः

सर्वनाम-स्त्रीलिंग

सर्व—सर्वया	सर्वाभ्यां	सर्वाभिः
अपर—अपरया	अपराभ्यां	अपराभिः
अन्य—अन्यया	अन्याभ्यां	अन्याभिः
तद्—तया	ताभ्यां	ताभिः

यद्—यया	याभ्यां	याभिः
किम्—कया	काभ्यां	काभिः
इदम्—अनया	आभ्यां	आभिः
अदस्—असुया	अमूभ्यां	अमूभिः

ऊपर लिखे शब्दोंमेंसे एक २ शब्द लेकर वाक्य बनाओ।

संस्कृत बनाओ—

केवल अर्थकरी विद्यासे क्या मतलब है। सुंदर भार्यासे घर शोभता है। लड़कियोंके साथ लड़के खेलते हैं। किस लताने तुमको मोहलिया। विदुषी नारीके साथ वार्तालाप करना चाहिये। किस (स्त्री) ने यह काम किया है। मैं भूखसे पीडित हूं। नदीसे बहुत उपकार है। तोता (शुक) लाल चोंचसे आम खाता है। नवीन बहुवोंके साथ दासियां बातें करतीं हैं। दुर्जन मीठे वचनोंसे वशीभूत करता है। इन स्त्रियोंने इस ग्रंथको बनाया है। माताने पुत्रोंके साथ भोजन किया। सेनाने (चमू) घर घेरलिया। आपत्तिने उस नगरको देखा भी नहीं था।

शुद्धकरो—

तै.बालाभिः सह कुत्र गच्छसि त्वं?। अनया नरेण किं कथितं। तया मातृणा आदिष्टा सा। वधूना कदा आगतं। अल्पजलै. सरिद्भिः देशो विभक्तः। संपदेन विरहिता तप्यति वधूः। ज्ञानं वितरद्भिः परिषदैः आश्वस्तः सः। मनोहारिणी अनेन योषिता मोहिता सर्वे। दुहित्रा क. स्त्री न संतुष्यति।

स्त्रीलिंगके स्थानमें पुंलिंग करके वाक्य बनावो—

परिसूचनया (१) विनाऽपि याभ्रा ज्ञाता जातिकुलोन्नतिस्तदीया। परेंगितज्ञया तया सखी गदिता।

१–ह्रस्व तथा दीर्घ अ, इ, उ, ऋसे परे ह्रस्व तथा दीर्घ अ, इ, उ, ऋ होंगे तो उन दोनोंके स्थानमें एक दीर्घ हो जायगा। जैसे–विना+अपि, इस उदाहरणमें

नरनाथ! गुघा यदा स दृष्टो भवतो (आपकी) देहजया महेंद्र-मर्दी। मुषिता वदनश्रिया मम (मेरी) श्रीरनयेतीव (अनया इति इव) रुपोप (रुपा उप) जातमूर्च्छो विदधाति मुहुर्मुहुर्मृगाक्षीं विपनिष्यंदिभिरंशुभिः शशांकः। वनवह्निशिखावलीव (आवली इव) सापि (अपि) ज्वलयेत्यं (ति+अं) बुजकोमलं तदंगं।

- एकवचनके स्थानमें द्विवचन करके लिखो—

विदुष्या तया अहं आहूतः। कन्यया पृष्टा सा गदितवती। सरिता अयं देशो विभक्तः। धेन्वा यवा भक्षिताः। अमुया दुश्चरित्रया किं कृतं।

नपुंसकलिंग।

नोट—नपुंसकलिंगमें तृतीया आदि विभक्तियोंके रूप प्रायः पुलिंगके समान होते हैं तो भी स्पष्टज्ञानके लिये नीचे लिख देते हैं।

'ना' में के 'आ' से पर 'अपि' का 'अ' होनेसे दोनो मिलकर एक 'आ' हो गये तो "विनापि" हुआ। इसी तरह दधि+इदं=दधीदं, नदी+इयं=नदीयं, मधु+उच्छिष्टं=मधूच्छिष्टं, वधू+ऊढा=वधूढा, पितृ+ऋकार.=पितृकार. आदि जानना। २–ह्रस्व अथवा दीर्घ 'अ' से परे ह्रस्व अथवा दीर्घ कोई भी इ, उ, ऋ होंगे तो उन दोनोंके स्थानमें क्रमसे ए, ओ, अर् हो जायेंगे। अर्थात् 'अ' से परे (बाद) में इ, ई होंगी तो दोनोंके स्थानमें 'ए', उ, ऊ होंगे तो 'ओ' ऋ, ॠ होंगे तो 'अर्' होंगे। जैसे–अनया+इति, इसमें 'या' के 'आ' से परे 'इति' का 'इ' है इससे दोनों (आ, इ) के स्थानमें एक 'ए' होनेसे 'अनयेति' होता है। इसी तरह रुपा+उप=रुपोप, महा+ऋषि=महर्षि, आदि समझना। ३–ह्रस्व तथा दीर्घ इ, उ, ऋ के स्थानमें क्रमसे य्, व्, र् हो जाते हैं यदि उनके बादमें कोई स्वर हो। परंतु जहां नं० १ नियमकी प्राप्ति होगी वहां यह नियम नहीं लगेगा। जैसे ज्वलयति+अंबुज यहां पर 'ति' में के 'इ' को 'अंबुज' का 'अ' बादमें होनेसे 'य्' हो गया तो ज्वलयत् य् अंबुज हुआ सब अक्षरोंको मिलाकर लिखनेसे ज्वलयत्यंबुज हुआ। इसीतरह–मधु+अपनय=मध्वपनय, धातृ+अंश=धात्रंश आदि समझना।

एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
कुसुमेन	कुसुमाभ्यां	कुसुमैः ।
दानेन	दानाभ्यां	दानैः ।
वारिणा	वारिभ्यां	वारिभिः
मधुना	मधुभ्यां	मधुभिः ।
सानुना	सानुभ्यां	सानुभिः ।

व्यंजनांत ।

श्रीमता	श्रीमद्भ्यां	श्रीमद्भिः ।
शर्मणा	शर्मभ्यां	शर्मभिः ।
पयसा	पयोभ्यां	पयोभिः ।
चेतसा	चेतोभ्यां	चेतोभिः ।
ज्योतिषा	ज्योतिर्भ्यां	ज्योतिर्भिः ।
धनुषा	धनुर्भ्यां	धनुर्भिः ।

सर्वनाम ।

सर्वेण	सर्वाभ्यां	सर्वैः ।
तेन	ताभ्यां	तैः । इत्यादि पुंलिंगके

संस्कृत बनाओ— समान जानना ।

लड़का दूधके साथ चांवल खाता है। इस धनुषसे लोग मस्तक छेदते हैं। बड़े २ घरोंसे क्या प्रयोजन है। मोटे शरीरसे लोग दुःख पाते हैं।

वाच्य परिवर्तन।

प्रथम पाठ।

क्त और क्तवतु (त)

कर्तृवाच्य	कर्मवाच्य
१ अहं शिशुं स्पृष्टवान्।	मया शिशुः स्पृष्टः।
मैंने लड़के को छुआ।	मेरे द्वारा लड़का छुआ गया।
अहं विद्वांसौ पूजितवान्।	मया विद्वांसौ पूजितौ।
मैंने दो विद्वानोंको पूजा।	मेरे द्वारा दो विद्वान पूजे गये।
त्वं गुरुं पृष्टवान्।	त्वया गुरुः पृष्टः।
तुमने गुरुसे पूछा।	तुम्हारे द्वारा गुरु पूछे गए।
त्वं ग्रंथान् पठितवान्।	त्वया ग्रंथाः पठिताः।
तुमने ग्रंथ पढ़े।	तुम्हारे द्वारा ग्रंथ पढ़े गए।

४–वाक्य बनानेकी रीति विशेष (प्रकार) को वाच्य कहते हैं उस वाच्यके तीन भेद हैं–कर्तृवाच्य, कर्मवाच्य, भाववाच्य। कर्तृवाच्यमें कर्ताके आधीन क्रिया रक्खी जाती है। अर्थात् कर्त्ताका जो पुरुष (उत्तम, मध्यम, अन्य) होगा और जो वचन होगा वही पुरुष और वचन क्रियाका भी रखना होगा। जैसा कि प्रथम भागमें बतलाया गया है। परंतु कर्मवाच्यमें क्रिया कर्मके आधीन होती है अर्थात् कर्मके पुरुष और वचनके अनुसार क्रियाके भी पुरुष वचन होते हैं। कर्ताके अनुसार नहीं, कर्ता चाहे कोई पुरुष और कोई वचनमें रहे। और जब धातु अकर्मक है उसका कर्म न होनेसे क्रिया सर्वदा अन्यपुरुष तथा एकवचनकी होती है उसे भाववाच्य कहते हैं। इस तरह हम एक वाक्यको दो तरह (कर्तृवाच्य या कर्मवाच्य कर्तृवाच्य या भाववाच्य) से बोल सक्ते है। ५। सकर्मक धातुओंसे कर्मवाच्यमें, तथा अकर्मक धातुवोंसे कर्तृवाच्य या भाववाच्यमें 'क्त' प्रत्यय होता है। क्तवतु प्रत्यय कर्तृवाच्यमें ही होता है। इन दोनों प्रत्ययातोंके रूप बनाने के नियम प्रथमभाग ८ वें अध्यायमे देखो। ६–कर्मवाच्य होनेसे कर्तामें तृतीया विभक्तीका और कर्ममें प्रथमा विभक्तीका प्रयोग करते हैं। धातुके रूपमें पुरुष, वचन कर्मके आधीन रखते हैं कर्ताके आधीन नहीं।

मुनिः धर्मं उपदिष्टवान्।	मुनिना धर्मः उपदिष्टः।
मुनिने धर्मका उपदेश दिया।	मुनि द्वारा धर्म उपदेशा गया।
कारुः वृक्षौ छिन्नवान्।	कारुणा वृक्षौ छिन्नौ।
बढईने दो वृक्ष काटे।	बढई द्वारा दो पेड काटे गये।
२ आवां ईश्वरं पूजितवंतौ।	आवाभ्यां ईश्वरः पूजितः।
हम दोनोंने भगवान्‌को पूजा।	हम दोनोंके द्वारा भगवान् पूजे गये।
आवां पितरौ प्रणतवंतौ।	आवाभ्यां पितरौ प्रणतौ।
हम दोजनोंने मातापिताको प्रणामकिया।	हम दोके द्वारा मातापिता प्रणाम कियेगये।
युवां अश्वं दृष्टवंतौ।	युवाभ्यां अश्वो दृष्टः।
तुम दोने घोडा देखा।	तुम दोके द्वारा घोडा देखा गया।
युवां कूपौ खनितवंतौ।	युवाभ्यां कूपौ खनितौ।
तुम दोने दो कुए खोदे।	तुम दोके द्वारा दो कुए खोदे गये।
अश्वौ घासान् खादितवंतौ।	अश्वाभ्यां घासाः खादिताः।
दो घोडोंने घास खाई।	दो घोडोंके द्वारा घास खाई गई।
प्रभू भृत्यौ आदिष्टवंतौ।	प्रभुभ्यां भृत्यौ आदिष्टौ।
दो स्वामियोंने दो नोकरोंको आज्ञा दी।	दो स्वामियों द्वारा दो नोकर आज्ञापित हुए।
३ वयं चंद्रमीक्षितवंतः।	अस्माभिश्चंद्र ईक्षितः।
हमने चंद्रमा देखा।	हम लोगोंके द्वारा चंद्रमा देखा गया।
वयं बालान् शिक्षितवंतः।	अस्माभिर्बालाः शिक्षिताः।
हमने लडकोंको पढाया।	हम लोगोंके द्वारा लडके पढाये गये।
यूयं मोदकान् वितीर्णवंतः।	युष्माभिर्मोदका वितीर्णाः।
तुमने लड्डू बाटे।	तुम लोगोंके द्वारा लाड्डू बाटे गये।
जना अर्थं लब्धवंतः।	जनैरर्थो लब्धः।
मनुष्योंने धन पाया।	मनुष्योंके द्वारा धन पाया गया।
बालका लाजान् विकीर्णवंतः।	बालकैर्लाजा विकीर्णाः।
लडकोंने धान विखेरे।	लडकोंके द्वारा धान विखेरे गये।

संस्कृत बनाओ—

विद्वानोंके द्वारा इस ग्रंथकी प्रशंसा कीगयी। श्रावकोंके द्वारा मुनिलोग पूजे गये। हमारे द्वारा यह बालक पढाया गया। सूर्यके द्वारा यह लोक प्रकाशित किया गया। तुमारे द्वारा दो पर्वत अतिक्रमण किये गये। पुत्रशोक द्वारा पिता दुःखी किया गया। विद्यार्थी द्वारा अध्यापक पूछा गया। नदी द्वारा ग्राम विभक्त किया गया।

द्वितीय पाठ।

कर्तृवाच्य।			कर्मवाच्य।	
श्रावकः	आर्यिकां	अर्चितवान्—श्रावकेन	आर्यिका	अर्चिता।
मुनिः	श्राविके	पृष्टवान्—मुनिना	श्राविके	पृष्टे।
सर्वे	नारीः	मानितवंतः—सर्वैः	नार्यः	मानिताः।
के	कथां	कथितवंतः—कैः	कथा	कथिता।
ते	वाचः	उच्चारितवंतः—तैः	वाचः	उच्चारिताः।
बालकौ	नदीं	ईक्षितवंतौ—बालकाभ्यां	नदी	ईक्षिता।
स्वामी	भार्यां	पृष्टवान्—स्वामिना	भार्या	पृष्टा।
यूयं	सरितः	अवगाहितवंतः—युष्माभिः	सरितः	अवगाहिताः।
सर्वे	परिषदं	मानितवंतः—सर्वैः	परिषद्	मानिता।

शुद्ध करो—

अनया नरेण मुनिं इमं अर्चिता। कया नार्या स पृष्टवान्। पाठकेन पाठिका पृष्टवती। चम्वा पर्वता निर्वृक्षाः कृतवंतः। केन सुमधुरां वाचं उक्ता। कैरियं कथां कथितवती। ताभ्यां बालिकाभ्यां माता पृष्टवती। कर्णधारः नद्यः, तीर्णाः। बंधुभ्यां मुनिं सेवितवंतौ।

संस्कृत बनाओ—

पवन द्वारा जल बिखेरा गया। अग्निद्वारा लडकी दग्धकी गयी। लडकी द्वारा माता सेई गयी। किस दो स्त्रीके द्वारा अपराध हुआ। मेघ द्वारा चातक संतुष्ट किये गये। दो नंदों (ननांद) द्वारा वधू प्रशंसित हुई। किस सेनापति द्वारा यह सेना पराजितकी गई। किस अध्यापक द्वारा ये छात्रो पढाई गई (पाठिताः)।

तृतीय पाठ।

कर्तृवाच्य।			कर्मवाच्य।		
अहं	पुस्तकं	पठितवान्।	मया	पुस्तकं	पठितं।
अहं	वने	दृष्टवान्।	मया	वने	दृष्टे।
पक्षी	फलानि	खादितवान्।	पक्षिणा	फलानि	खादितानि।
अग्निः	इंधनं	दग्धवान्।	अग्निना	इंधनं	दग्धं।
वीरः	धनूंषि	कांक्षितवान्।	वीरेण	धनूंषि	कांक्षितानि।
शिशुः	पयांसि	पीतवान्।	शिशुना	पयांसि	पीतानि।

हिंदी बनाओ—

नृपेण सुतं वीक्ष्य चिंतितं यत् (कि) मयाऽद्य स्वजन्मफलं लब्धं। मदीयं (मेरा) कुलमनेन पुत्रेण गुणैर्दीपितं। यथा कुसुमेन वृक्षाः, नवयौवनेन वपूंषि, प्रशमेन पंडिताः शोभिता भवंति तथा सुपुत्रेण कुलं दीप्तं भवति।

अथ केनचिद् दूतेन राजसभामागत्योक्तं-नृप ! स मत्प्रभुः स्वतेजसा उद्धतानपि राज्ञस्तत्रचानिति विनयरहितं त्वां कथितवान् यत् (कि) त्वदीया वंशजा मदीयान्वयजं सदा प्रणतवंतः परं त्वया सा पद्धतिर्लंघिता। मदेन मूढबुद्धिः-जन्मना अंधश्चक्षुषा इव बुद्ध्या स्वहितं न पश्यति। मदादयः षड् रिपवो नयविद्भिर्गदिताः। ते मदीयनृपेण पूर्व एव जिताः। यः स्वमनोभवं मदादिरूपं शत्रुं

जेतुं न शकस्तं त्यक्त्वा संपदः सत्वरमेव व्रजंति। मया त्वदीया शठता चिरमवधीरिता परं त्वया तद् सर्वं न विचारितं। "मदीयो द्विपाधिपः स्वयमागत्य त्वदीयं पुरं संविष्टवान्। स त्वया धृतः" (पकड लिया) इति शीघ्रगामिभिश्चरैः (दूतैः) निश्चित्य निवेदितं। अतः स्वयमेव तं गजराजं मदीयसमीपं प्रेषय (भेजो)। नो चेत् स मत्स्वामी त्वां अर्दिष्यति।

संस्कृत बनाओ—

उस रानीने सुंदर पुत्र जना। लडकोंने पुस्तकें पढीं। नौकरोंने भार ढोया। राजाने वहां एक हिरण देखा। हिरण हररोज (प्रत्यहं) धान्य खाता था। एक दिन (एकदा) वह किसानके द्वारा देखा गया। मेरे द्वारा पत्र लिखा गया।

नीचे लिखे शब्दोंसे वाक्य बनाओ—

दयावत्या, सुंदराणि, उद्योगिभिः पुरुषेण, नद्या, ऋजुनी, उदारचेतसा, पवित्रं, क्रंदत्या, गच्छंत्या, जिनं, अर्चत्या, किरणैः, रज्जुभ्यां, दृष्टेन, द्विपाधिपेन, चरैः, संप्रविष्टं, ऊढं।

चतुर्थ पाठ।

कर्तृवाच्य।		भाववाच्य।	
राजा	जीवितवान्।	राज्ञा	जीवितं।
धेनुः	गतवती।	धेन्वा	गतं।
निर्धनः	कठितवान्।	निर्धनेन	कठितं।
रूप्यकः	कांतवान्।	रूप्यकेण	कांतं।
वीरः	क्रांतवान्।	वीरेण	क्रांतं।
बालकाः	क्रीडितवंतः।	बालकैः	क्रीडितं।
हस्तिनः	नर्दितवंतः।	हस्तिभिः	नर्दितं।

७—भाववाच्यमें क्रिया सर्वदा एकवचनकी होती है कर्ता चाहे कोई-वचनका हो। और लिंग नपुंसक लिंग ही होता है।

सिंहः	गर्जितवान्।	सिंहेन	गर्जितं।
मृगाः	चरितवंतः।	मृगैः	चरितं।
सेनापतिः	जितवान्।	सेनापतिना	जितं।
शिशुः	ज्वरितवान्।	शिशुना	ज्वरितं।
औषधयः	ज्वलितवत्यः।	औषधिभिः	ज्वलितं।
मनः	तप्तवत्।	मनसा	तप्तं।
दैवं	फलितवत्।	दैवेन	फलितं।
सर्पाः	सृतवंतः।	सर्पैः	सृतं।
बालिका	ह्रीच्छितवती।	बालिकया	ह्रीच्छितं।
पुष्पाणि	स्फुटितवंति।	पुष्पैः	स्फुटितं।
नार्यः	ईर्षितवत्यः।	नारीभिः	ईर्षितं।
परिश्रमिणौ	ईहितवंतौ।	परिश्रमिभ्यां	ईहितं।
संपत्	पथितवती।	संपदा	पथितं।
वेशं	कम्पितवत्।	वेशेन	कम्पितं।
गुणग्राहिणः	कत्थितवंतः।	गुणग्राहिभिः	कत्थितं।
मनः	क्षुब्धवत्।	मनसा	क्षुब्धं।
अध्यवसायिनः	चेष्टितवंतः।	अध्यवसायिभिः	चेष्टितं।
ब्रह्मचारिणौ	दीक्षितवंतौ।	ब्रह्मचारिभ्यां	दीक्षितं।
रत्नानि	द्योतितवंति।	रत्नैः	द्योतितं।
वाराणसी	प्रथितवती।	वाराणस्या	प्रथितं।
साम्राज्यं	प्रसितवत्।	साम्राज्येन	प्रसितं।
चित्तं	मोदितवत्।	चित्तेन	मोदितं।
दीपः	वर्चितवान्।	दीपेन	वर्चितं।

नीचे लिखे शब्दोंसे वाक्य बनावो—

वर्द्धितं, व्यथितं, शंकितं, शिक्षितं, शोभितं, श्वेतितं, स्नितं, स्फुटितं, मृतं, उद्विग्नं, ग्लानं, अतितं, मिषितं, रुचितं, गर्वितं, क्षीणं, फुल्लं, उषितं, रुदितं।

पंचम पाठ।

वर्तमान (लट्विभक्ती) काल।

अन्यपुरुष

कर्तृवाच्य।			*कर्मवाच्य।	
१ छात्रः	जैनेंद्रं	पठति—छात्रेण	जैनेंद्रं	पठ्यते
शिष्यः	ग्रंथं	लिखति—शिष्येण	ग्रंथो	लिख्यते
श्रावकाः	धर्मं	चरंति—श्रावकैः	धर्मः	चर्यते
मुनिः	मोक्षं	इच्छति—मुनिना	मोक्षः	इष्यते
सेने	ग्रामं	रक्षतः—सेनाभ्यां	ग्रामो	रक्ष्यते
अग्निः	काष्ठं	दहति—अग्निना	काष्ठो	दह्यते
भृत्यः	ग्रामं	गच्छति—भृत्येन	ग्रामो	गम्यते
शिशुः	फलं	खादति—शिशुना	फलं	खाद्यते
विद्यार्थी	उपाध्यायं	पृच्छति—विद्यार्थिना	उपाध्यायः	पृच्छ्यते
स्वामी	सेवकं	वदति—स्वामिना	सेवकः	उद्यते
सर्पः	वृक्षं	दशति—सर्पेण	वृक्षा	दंश्यते
राजा	दासीं	आदिशति—राज्ञा	दासी	आदिश्यते
पिता	पुत्रं	चुंबति—पित्रा	पुत्रः	चुंब्यते
अहं	बालकं	पश्यामि—मया	बालको	दृश्यते
त्वं	मुनिं	अर्चसि—त्वया	मुनिः	अर्च्यते
आवां	वक्तारं	गदावः—आवाभ्यां	वक्ता	गद्यते

* कर्मवाच्यमें क्रियाके पुरुष और वचन कर्ताके अनुसार नहीं होते। कर्मके अनुसार होते हैं अर्थात् यदि कर्म एकवचन है और युष्मद्, अस्मद्से भिन्न है तो क्रिया भी एकवचन और अन्यपुरुषकी रक्खी जायगी कर्ता चाहे कोई वचनका और कोई पुरुषका हो। कर्मवाच्यमें (प्रथमपुरुषमें) धातुओंसे 'यते, येते, यंते' प्रत्यय, क्रमसे एकवचन, द्विवचन, बहुवचनमें लगते हैं। और परस्मैपदी, उभयपदी, आत्मनेपदी धातुओंसे केवल आत्मनेपद ही होता है।

युवां	शत्रुं	अर्दथः—युवाभ्यां	शत्रुः	अर्द्यते
वयं	जिनं	अर्हामः—अस्माभिः	जिनः	अर्ह्यते
यूयं	घटं	सृजथ—युष्माभिः	घटः	सृज्यते
२ पुत्राः	पितरौ	प्रणमंति—पुत्रैः	पितरौ	प्रणम्येते
भृत्याः	अश्वौ	स्पृशंति—भृत्यैः	अश्वौ	स्पृश्येते
राजा	शत्रू	प्रहरति—राज्ञा	शत्रू	प्रह्रियेते
सेवकः	तरू	आरोहति—सेवकेन	तरू	आरुह्येते
श्रावकाः	जिनौ	यजंति—श्रावकैः	जिनौ	इज्येते
अहं	विद्ये	लभे—मया	विद्ये	लभ्येते
त्वं	घटौ	यच्छसि—त्वया	घटौ	यम्येते
आवां	वस्तुनी	याचावः—आवाभ्यां	वस्तुनी	याच्येते
युवां	पुष्पे	जिघ्रथः—युवाभ्यां	पुष्पे	घ्रायेते
वयं	शंखे	धमामः—अस्माभिः	शंखे	ध्मायेते
यूयं	अजे	नयथ—युष्माभिः	अजे	नीयेते
३ जनाः	नारीः	मानंते—जनैः	नारीः	मान्यंते
कर्षकाः	क्षेत्राणि	उक्षंति—कर्षकैः	क्षेत्राणि	उक्ष्यंते
छात्राः	शास्त्राणि	मनंति—छात्रैः	शास्त्राणि	म्नायंते
धार्मिकाः	ग्रंथान्	वितरंति—धार्मिकैः	ग्रंथाः	वितीर्यंते
प्रभवः	अनुजीविनः	तर्जंति—प्रभुभिः	अनुजीविनः	तर्ज्यंते
अहं	विदुषः	शंसामि—मया	विद्वांसः	शंस्यंते
त्वं	जनान्	लुभसि—त्वया	जनाः	लुभ्यंते

८—ऋकारांत धातुओंके अंतके 'ऋ' कारको 'रि' आदेश होजाता है यदि 'यक्' (भाववाच्य, कर्मवाच्यका प्रत्यय) लिङ् (आगे कहेंगे) प्रत्यय हुये हों। जैसे हृ (हरना) धातुसे कर्मवाच्यका रूपबनानेके लिये यते प्रत्यय आये तो 'हृ+यते' एसी अवस्था हुई अब इस नियमसे ऋके स्थानमें रि होगया तो ह्रियते रूप हुआ इसी प्रकार द्विवचनादिकमें ह्रियेते, ह्रियंते, आदि समझना।

आवां	क्षेत्राणि	शीकावः—आवाभ्यां	क्षेत्राणि	शीक्यंते
युवां	जलानि	मथथः—युवाभ्यां	जलानि	मथ्यंते
वयं	शत्रून्	तर्दामः—अस्माभिः	शत्रवः	तर्द्यंते
यूयं	गृहाणि	प्रविशथ—युष्माभिः	गृहाणि	प्रविश्यंते

षष्ठ पाठ ।

उत्तम पुरुष ।

१	स	मां	महति—तेन	अहं	मह्ये
	बालो	मां	आमृशति—बालेन	अहं	आमृश्ये
	तौ	मां	जयतः—ताभ्यां	अहं	जीये
	जनाः	मां	प्रणमंति—जनैः	अहं	प्रणम्ये
	त्वं	मां	ईक्षते—त्वया	अहं	ईक्ष्ये
	युवां	मां	सेवेथे—युवाभ्यां	अहं	सेव्ये
	यूयं	मां	श्लाघध्वे—युष्माभिः	अहं	श्लाघ्ये
२	माता	आवां	उपदिशति—मात्रा	आवां	उपदिश्यावहे
	पितरौ	आवां	तर्जतः—पितृभ्यां	आवां	तर्ज्यावहे
	साधवः	आवां	पश्यंति—साधुभिः	आवां	दृश्यावहे
	त्वं	आवां	लोचसे—त्वया	आवां	लोच्यावहे
	युवां	आवां	कवेथे—युवाभ्यां	आवां	कव्यावहे
	यूयं	आवां	कांक्षथ—युष्माभिः	आवां	कांक्ष्यावहे
३	दुर्जनः	अस्मान्	तुदति—दुर्जनेन	वयं	तुद्यामहे
	वधकौ	अस्मान्	शसतः—वधकाभ्यां	वयं	शस्यामहे
	अग्नयः	अस्मान्	दहंति—अग्निभिः	वयं	दह्यामहे
	त्वं	अस्मान्	तिजसे—त्वया	वयं	तिज्यामहे
	युवां	अस्मान्	गर्हेथे—युवाभ्यां	वयं	गर्ह्यामहे
	यूयं	अस्मान्	महथ—युष्माभिः	वयं	मह्यामहे

सप्तम पाठ ।

मध्यम पुरुष ।

१ स	त्वां	स्पृशति—तेन	त्वं	स्पृश्यसे
बालौ	त्वां	पृच्छतः—बालाभ्यां	त्वं	पृच्छ्यसे
सज्जनाः	त्वां	प्रशंसंति—सज्जनैः	त्वं	प्रशंस्यसे
अहं	त्वां	महामि—मया	त्वं	महासे
आवां	त्वां	गदावः—आवाभ्यां	त्वं	गद्यसे
वयं	त्वां	दिशामः—अस्माभिः	त्वं	दिश्यसे
२ बाला	युवां	आमृशति—बालया	युवां	आमृश्येथे
नार्यौ	युवां	उद्वहेते—नारीभ्यां	युवां	उद्-उह्येथे
गुरवः	युवां	मानंते—गुरुभिः	युवां	मान्येथे
अहं	युवां	जयामि—मया	युवां	जीयेथे
आवां	युवां	तर्जावः—आवाभ्यां	युवां	तर्ज्येथे
वयं	युवां	कत्थामहे—अस्माभिः	युवां	कत्थ्येथे
३ नारी	युष्मान्	निंदति—नार्या	यूयं	निंद्यध्वे
आवां	युष्मान्	श्लाघावहे—आवाभ्यां	यूयं	श्लाघ्यध्वे
वयं	युष्मान्	गर्हामहे—अस्माभिः	यूयं	गर्ह्यध्वे

नीचे लिखे शब्दोंसे वाक्य बनाओ—

विकीर्यसे, तीर्यंते, गम्यते, तिज्यध्वे, लभ्यंते, पठ्यते, सेव्ये, अर्च्यसे, उह्यध्वे, दद्यामहे, दह्यते, मुच्यसे, शुच्ये, पीयंते, त्यज्यध्वे।

संस्कृत बनाओ—

दो गुरुओंसे दो विद्यार्थी तर्जित होते हैं। मेरे द्वारा इंद्रियसुख अनुभूत होते हैं। दो पुत्र द्वारा हम दो जने स्पर्श किये जाते हैं। सब लोगोंके द्वारा तुम प्रशंसित होते हो। दुर्जनोंके द्वारा हमलोग निंदित होते हैं। उनके द्वारा वे छोडे जाते हैं। पिताके द्वारा पुत्रको

उपदेश दिया जाता है। हमलोगोंके द्वारा जैनेंद्र पढा जाता है। श्रीरागसे सब लोग ठगे जाते हैं। (प्र—तृ) माता पिताके द्वारा पुत्र डांडा जाता है।

अष्टम पाठ।

कर्तृवाच्य।		भाववाच्य।
शिशुः	ज्वरति—शिशुना	ज्वर्यते
पक्षिणः	कूजंति—पक्षिभिः	कूज्यते
बाला	ह्रीच्छति—बालया	ह्रीच्छ्यते
दैवं	फलति—दैवेन	फल्यते
संपत्	एधते—संपदा	एध्यते
वेशं	कचति—वेशेन	कच्यते
रूप्यकं	कनति—रूप्यकेण	कन्यते
कन्याः	क्रीडंति—कन्याभिः	क्रीड्यते
उद्योगिनः	ईहंते—उद्योगिभिः	ईह्यते
ओषधयः	ज्वलंति—ओषधिभिः	ज्वल्यते
मृगाः	चरंति—मृगैः	चर्यते
सिंहः	गर्जति—सिंहेन	गर्ज्यते
छात्राः	वसंति—छात्रैः	उष्यते
गजौ	नर्दतः—गजाभ्यां	नर्द्यते
राजानः	जयंति—राजभिः	जीयते
पुष्पाणि	स्फुटंति—पुष्पैः	स्फुट्यते
त्वं	वर्द्धसे—त्वया	वर्द्ध्यते
अहं	भवामि—मया	भूयते

१।—भाववाच्यमें एकवचन, और अन्यपुरुषही होताहै द्विवचन, बहुवचन, उत्तमपुरुष, मध्यमपुरुष नहीं होते।

नीचे लिखे शब्दोंसे वाक्य बनाओ—

क्रम्यते, तप्यते, कर्ण्यते, फल्यते, स्फूर्ज्यते, भिष्यते, वर्ध्यते, पत्यते, अंच्यते, रुच्यते, रुध्यते, विलप्यते, गद्यते, वर्ण्यते, शिस्यते, दीस्यते, यत्यते, मोक्ष्यते, म्रियते, स्मर्यते, दीप्यते।

नीचे लिखे वाक्योंको वाच्य बदलकर लिखो—

बौद्धपरिव्राट् श्रेणिकं गदति स्म। "हे कुमार! त्वं यदि स्वपितृराज्यमिच्छसि तर्हि बौद्धधर्ममाचर। बौद्धधर्म एव एकः सत्यधर्मो वर्तते। विज्ञानादयः पंच संज्ञा एवात्र जीवान् तुदंति। इदं जगत् प्रतिक्षणं नाशं गच्छति। यान् पदार्थान् भगवान् बुद्ध उपदिशति स्म ते एव समीचीनाः" इति। तद्वाक्यं श्रुत्वा कुमार-श्रेणिको बौद्धधर्ममाचरति स्म। तथा तेन एव सह कंचित् कालं वसति स्म। अथ बहुदिनपर्यंतमनेन सह निवासोऽनुचित इति स कुमारस्ततः प्रतिष्ठते स्म। कुमारेण सह केनचित् श्रेष्ठिवर्येण इंद्रदत्तेनापि प्रस्थितं। कंचित् मार्गं गत्वा तौ कांचित् नदीं स्म पश्यतः। तां प्रवेष्टुं कुमारश्रेणिकः स्वकीये उपानहौ (जूते) हस्तमध्यं नयति स्म, इदं दृष्ट्वा श्रेष्ठिना विचारितं यत्-अवश्यमेवायं कुमारो निर्बुद्धिः, अन्यथा कथं लोकविरुद्धं कार्यमाचरति।

शुद्ध करो—

त्वया अहं प्रच्छ्यसे। मया त्वं आदिश्ये। छात्रेण पुस्तकं पठ्ये। तेन यूयं सेव्यंते। युवाभ्यां आवां श्लाघ्येथे। आवाभ्यां युवां संदिश्यावहे। युष्माभिः ईक्ष्यंते। मुनिना अहं भाष्यामहे। पंडितैः शास्त्राणि गाह्येते। मात्रा पुत्री स्वज्यसे। सर्वैः वयं उपहस्यंते।

संस्कृत बनाओ जिसमें क्रिया भाववाच्य वा कर्मवाच्य हो।

कुमार श्रेणिकने जिस समय (यदा) कुमारी द्वारा भेजा हुआ (प्रेषितं) थोडा पानी देखा उस समय विचारा कि (यत्) इतने (इयत्) जलसे इतनी कीचड (पंक) किस तरह (कथं) हुए हो-

सकी है। पश्चात् एक वस्त्रखंडसे अपने (स्वीय) पैर पोंछे (मार्जित) और जलसे उनको धोया (धौत) इस चातुर्यको देख कर कुमारी बोली-अहो जैसा (यथा) यह कुमार बुद्धिद्वारा कार्य करता है (आचरति) वैसा कोई नहीं करता। पश्चात् विनय सहित प्रार्थना की (प्रार्थ्यते स्म) कि महाभाग! आज यहां (अत्र) ही भोजन करें। ऐसे वचन सुन कर कुमारने कहा।

लोट् विभक्ति।

नवम पाठ।

अन्य पुरुष।

कर्तृवाच्य।			कर्मवाच्य।	
१ छात्रः	जैनेंद्रं	पठतु—छात्रेण	जैनेंद्रं	पठ्यतां
श्रावकः	धर्मं	चरतु—श्रावकेण	धर्मः	चर्यतां
क्षत्रियौ	ग्रामं	रक्षतां—क्षत्रियाभ्यां	ग्रामः	रक्ष्यतां
अहं	मोक्षं	गच्छानि—मया	मोक्षः	गम्यतां
आवां	ग्रंथं	इच्छाव—आवाभ्यां	ग्रंथः	इष्यतां
वयं	सेवकं	वदाम—अस्माभिः	सेवकः	उद्यतां
त्वं	गुरुं	पृच्छ—त्वया	गुरुः	पृच्छ्यतां
युवां	पुत्रं	चुंबतं—युवाभ्यां	पुत्रः	चुंब्यतां
यूयं	मुनिं	अर्चत—युष्माभिः	मुनिः	अर्च्यतां
२ पुत्रः	पितरौ	नमतु—पुत्रेण	पितरौ	नम्येतां
भृत्यौ	अश्वौ	स्पृशतां—भृत्येन	अश्वौ	स्पृश्येतां
श्रावकाः	जिनौ	यजंतु—श्रावकैः	जिनौ	इज्येतां
अहं	विद्ये	लभै—मया	विद्ये	लभ्येतां
आवां	धर्मार्थौ	याचावहे—आवाभ्यां	धर्मार्थौ	याच्येतां

वयं	शंखे	धमाम—अस्माभिः	शंखे	ध्मायेतां
त्वं	विद्ये	लभस्व—त्वया	विद्ये	लभ्येतां
युवां	पुष्पे	जिघ्रतं—युवाभ्यां	पुष्पे	घ्रायेतां
यूयं	अजे	नयत—युष्माभिः	अजे	नीयेतां
२ जनः	नारीः	मानतां—जनेन	नारीः	मान्यंतां
कृषीवलौ	क्षेत्राणि	उक्षंतु—कृषीवलाभ्यां	क्षेत्राणि	उक्ष्यंतां
छात्राः	शास्त्राणि	मनंतु—छात्रैः	शास्त्राणि	ज्ञायंतां
अहं	अनुजीविनः	तर्जानि—मया	अनुजीविनः	तर्ज्यंतां
आवां	गृहाणि	शीकाव—आवाभ्यां	गृहाणि	शीक्यंतां
वयं	शत्रून्	तर्दाम—अस्माभिः	शत्रवः	तर्द्यंतां
त्वं	जनान्	लुभ—त्वया	जनाः	लुभ्यंतां
युवां	जलानि	मथतं—युवाभ्यां	जलानि	मथ्यंतां
यूयं	गृहाणि	प्रविशत—युष्माभिः	गृहाणि	प्रविश्यंतां

दशम पाठ।

उत्तमपुरुष

१ स	मां	महतु—तेन	अहं	महै।
बालौ	मां	आमृशतां—बालाभ्यां	अहं	आमृश्यै।
जनाः	मां	नमंतु—जनैः	अहं	नम्यै।
त्वं	मां	ईक्षस्व—त्वया	अहं	ईक्ष्यै।
युवां	मां	भाषेथां—युवाभ्यां	अहं	भाष्यै।
यूयं	मां	श्लाघध्वं—युष्माभिः	अहं	श्लाघ्यै।
२ माता	आवां	उपदिशतु—मात्रा	आवां	उपदिश्यावहै।
पितरौ	आवां	तर्जतां—पितृभ्यां	आवां	तर्ज्यावहै।
साधवः	आवां	पश्यंतु—साधुभिः	आवां	दृश्यावहै।
त्वं	आवां	लोचस्व—त्वया	आवां	लोच्यावहै।

युवां	आवां	कथेथां—युवाभ्यां	आवां	कथ्यावहे।
यूयं	आवां	कांक्षत—युष्माभिः	आवां	कांक्ष्यावहे।
३ सज्जनः	अस्मान्	पृच्छतु—सज्जनेन	वयं	पृच्छ्यामहे।
वधकौ	अस्मान्	त्यजतां—वधकाभ्यां	वयं	त्यज्यामहे।
अग्नयः	अस्मान्	परिचरंतु—अग्निभिः	वयं	परिचर्यामहे।
त्वं	अस्मान्	तिजस्व—त्वया	वयं	तिज्यामहे।
युवां	अस्मान्	शंसतं—युवाभ्यां	वयं	शंस्यामहे।
यूयं	अस्मान्	महत—युष्माभिः	वयं	मह्यामहे।

एकादश पाठ।

मध्यम पुरुष

१ स	त्वां	स्पृशतु—तेन	त्वं	स्पृश्यस्व
बालौ	त्वां	पृच्छतां—बालाभ्यां	त्वं	पृच्छ्यस्व
सज्जनाः	त्वां	प्रशसंतु—सज्जनैः	त्वं	प्रशंस्यस्व
अहं	त्वां	महानि—मया	त्वं	मह्यस्व
आवां	त्वां	गदाव—आवाभ्यां	त्वं	गद्यस्व
वयं	त्वां	दिशाम—अस्माभिः	त्वं	दिश्यस्व
२ बाला	युवां	आमृशतु—बालया	युवां	आमृश्येथां
नार्यौ	युवां	उद्-वहेतां—नारीभ्यां	युवां	उद्-उह्येथां
गुरवः	युवां	मानंतां—गुरुभिः	युवां	मान्येथां
अहं	युवां	जयानि—मया	युवां	जीयेथां
आवां	युवां	तर्जाव—आवाभ्यां	युवां	तर्ज्येथां
वयं	युवां	कत्थामहै—अस्माभिः	युवां	कथ्येथां
३ नारी	युष्मान्	निंदतु—नार्या	यूयं	निंद्यध्वं
आवां	युष्मान्	श्लाघावहै—आवाभ्यां	यूयं	श्लाघ्यध्वं
वयं	युष्मान्	महाम—अस्माभिः	यूयं	मह्यध्वं

नीचे लिखे शब्दोंसे वाक्य बनाओ—

विकीर्यस्व, तीर्यंता, गम्यतां, त्तिज्यध्वं, लभ्यस्व, पठ्यतां, सेव्यै, अर्च्यै, उप्यंतां, उह्येतां, दृश्यामहे, दह्यतां, मुच्यस्व, शुच्यै, पीयतां, त्यज्यध्वं, उद्यतां, लुप्यंतां,

संस्कृत बनाओ—

दो गुरुओंसे दो विद्यार्थी पूछे जांय। मेरे द्वारा आत्मसुख अनुभूत हो। कर्मोंके द्वारा हमलोग छोडे जांय। विद्वानोंके द्वारा तुम उपदिष्ट होओ। विद्यार्थियोंके द्वारा जैनेंद्र पढा जाय। उनके द्वारा तुम पूजित होओ। ये दो वृक्ष दो बढइयोंके द्वारा काटे जांय। विद्यार्थी लोग गुरुको सेवें।

द्वादश पाठ।

कर्तृवाच्य।		भाववाच्य[१०]।
शिशुः	नंदतु—शिशुना	नंद्यतां
पक्षिणः	कूजंतु—पक्षिभिः	कूज्यतां
विद्या	फलतु—विद्यया	फल्यतां
संपत्	पद्यतां—संपदा	पद्यतां
कन्ये	क्रीडतां—कन्याभ्यां	क्रीड्यतां
जनाः	यतंता—जनैः	यत्यतां
मृगाः	चरंतु—मृगैः	चर्यतां
छात्राः	वसंतु—छात्रैः	उष्यतां
राजानः	जीवंतु—राजभिः	जीव्यतां
पुष्पाणि	स्फुटंतु—पुष्पैः	स्फुट्यतां

१०—कर्मवाच्य या भाववाच्यमें धातुके और आत्मनेपदमें आनेवाले 'ते, एते, अंते आदि प्रत्ययके बीचमें यक् (क इत् है) प्रत्यय आता है शेष 'ते आदि को ता आदि' कार्य सं० प्र० प्रथम भागके दशवें अध्यायकी टिप्पणीके अनुसार होवे हैं।

नीचे लिखे शब्दोंसे वाक्य बनाओ—

क्रम्यतां, तप्यतां, स्फूर्ज्यतां, जीव्यतां, भिष्यतां, वर्द्ध्यतां, पत्यतां, अंच्यतां, रुच्यतां, रुद्यतां, विलप्यतां, गद्यतां, चर्च्यतां, शिक्ष्यतां, दीक्ष्यतां, यत्यतां, मोद्यतां, म्रियतां* दीप्यतां।

वाच्य परिवर्तन करो—

कमठः श्रीमंतं पार्श्वनाथं गदितवान्–भिक्षो ! त्वं मया सह युद्धमाचर। त्वया पूर्वं महदपकृतं। अधुना मदीय अवसर इति व्यर्थः कालक्षेपः शीघ्रमेव योद्धुं सन्नद्धो (तय्यार) भव। त्वं मित्रं एतं तुंगं (पर्वत) आपृच्छस्व (पूंछ), अत्रस्थान् देवान् अनुसर, सिद्धिक्षेत्रं रामशैलं (चित्रकूटपर्वत) वा गच्छ, वा प्रेम्णा हर्षितचित्तः सन् मां निजभुजाभ्यां निगूह परमहं तु त्वां मंक्षु (शीघ्र) एव यमराजगृहं नयामि।

शुद्ध करो—

गजेन दुर्जनः तुद्यंतां, बालिकाभिः पुष्पाणि विकीर्यंतां, संपद्भिः पश्यंतां, गुणिभिः साधवः पृच्छ्यस्व, ब्रह्मचारिभिः शिक्ष्यंतां, आवाभ्यां पुस्तकं पठ्यै, कर्मभिः संसारिणः त्यज्यस्व।

भाववाच्य या कर्मवाच्यमें संस्कृत बनाओ—

तुम लोग हमेशा पुस्तकें पढाकरो। अधिक इंद्रिय सुखको न भोगो। मांस मद्य मधुको छोडो। जो सर्वदा सच्चे संयमको पालन करते हैं वे मुनि मेरे (मदीय) हृदयमें प्रविष्ट हों। जिसने संसारवर्ती समस्त जीवोंको जीत लिया है उस कामको भी जिन्होंने जीता है उन मुनियोंका दर्शन करो। जो सच्चे तपको करते हैं वे तुम्हें सच्चा मार्ग बतलावें।

---

* ४२ पृष्ठकी टिप्पणी देखो।

लृट्[११] विभक्ति ।

त्रयोदश पाठ ।

कर्तृवाच्य ।			कर्मवाच्य ।		
१ मुनिः	वनं	गमिष्यति—	मुनिना	वनं	गमिष्यते
२ छात्रः	पुस्तके	पठिष्यति—	छात्रेण	पुस्तके	पठिष्येते
३ विद्यार्थिनः	गुरून्	सेविष्यंते—	विद्यार्थिभिः	गुरवः	सेविष्यंते
१ पिता	मां	स्वङ्क्ष्यते—	पित्रा	अहं	स्वङ्क्ष्ये
२ माता	आवां	उपदेक्ष्यति—	त्रा	आवां	उपदेक्ष्यावहे
३ साधवः	अस्मान्	प्रक्ष्यंति—	साधुभिः	वयं	प्रक्ष्यामहे
१ अहं	त्वां	ईक्षिष्ये—	मया	त्वं	ईक्षिष्यसे
२ साधवः	युवां	श्लाघिष्यंते—	साधुभिः	युवां	श्लाघिष्येथे
३ वयं	युष्मान्	स्पर्क्ष्यामः—	अस्माभिः	यूयं	स्पर्क्ष्यध्वे

नीचे लिखे शब्दोंसे वाक्य बनावो—

अर्चिष्ये, द्रक्ष्येथे, लप्स्यते, जेष्यामहे, स्मेष्ये, स्मरिष्यामहे, धक्ष्यध्वे, याचिष्यध्वे, तोत्स्यसे, अंचिष्यते ।

चतुर्दश पाठ ।

कर्तृवाच्य		भाववाच्य	
१ छात्रः	वत्स्यति—	छात्रेण	वत्स्यते ।
कन्ये	क्रीडिष्यतः—	कन्याभ्यां	क्रीडिष्यते ।
उद्योगिनः	ईहिष्यंते—	उद्योगिभिः	ईहिष्यते ।
अहं	एधिष्ये—	मया	एधिष्यते ।
त्वं	जेष्यसे—	त्वया	जेष्यते ।

नीचे लिखे शब्दोंसे वाक्य बनावो—

नर्दिष्यते, ग्लायिष्यते, मोदिष्यते, स्फुटिष्यते, कूजिष्यते, वर्द्धिष्यते, ज्वलिष्यते ।

११–प्र० भा० नवम अध्यायकी टिप्पणी देखो ।

भाववाच्य या कर्मवाच्यमें संस्कृत बनाओ—

श्रेणिक तीर्थंकर होंगे। इन्द्रादि उनको पूजेंगे। वे जिससमय माताके गर्भमें (मातृगर्भे) प्रवेश करेंगे उससमय कुवेर रत्न विखेरेगा। जब माता उनको उत्पन्न करेगी (जनिष्यते) तब देव यहां आवेंगे। इंद्राणी इंद्राज्ञासे प्रसूतिगृहमें जावेगी। वहां माताके साथ पुत्रको सोता (शयानं) देख उसकी मनसे पूजा करेगी। माता दुःख न पावे इसलिये (अतः) इंद्राणी एक मायामयी पुत्रको रचेगी उसे वहां रखकर (निक्षिप्य) भगवान्को लावेगी (आ-नी) और इंद्रको देगी।

हिंदी बनाओ—

तीर्थंकरशरीरेण सप्तहस्तप्रमाणं भविष्यते, आयुषा च षोडशाधिकशतवर्ष (११६) प्रमाणं। त(द्)नारीभिः नानागुणगणमंडिताभिः सुवर्णसमकांतिधारिकाभिर्युवतिभिरधिकं शोभिष्यते। यथा आदिनाथपुत्रेण भरतेन चक्रवर्तिना भूयते स्म तथा एव पद्मनाभपुत्रेणापि चक्रवर्तिना भविष्यते। आदिनाथेन इव तेनापि प्रजाः रक्षिष्यंते, देशग्रामनगराणि स्रक्ष्यंते। एवं नीतिपूर्वकं राज्यं कृत्वा तेन स्वामिना विरंस्यते। एवं तीर्थंकरविरक्तिं ज्ञात्वा लौकांतिकदेवैरागमिष्यते।

—:०:—

पंचदश पाठ।

[१२] य, तव्य, अनीय।

पुंलिंग

कर्मवाच्य	कर्मवाच्य
१ छात्रेण गुरु स्पर्श्यते—	छात्रेण गुरुः स्प्रष्टव्यः, स्पृश्यः, स्पर्शनीयः।

१२–सकर्मक धातुसे कर्ममें और अकर्मक धातुसे भावमें तव्य, अनीय, य, ण्य [ण्-इत्] और क्यप् [क्, प-इत्] प्रत्यय होते हैं। तव्य प्रत्यय होनेसे धातुके अंतमें इट कार्य आदि तुम् के समान होते हैं पृष्ठ १५ देखो 'अनीय' प्रत्यय हो-

श्रावकेणातिथि सेविष्यते— केणातिथिः सेव्यः,सेवितव्यः, सेवनीयः

सेवकै वृक्ष धक्ष्यते—सेवकैः वृक्षः दाह्यः, दग्धव्यः, दहनीयः।

राज्ञा चौर मोक्ष्यते—राज्ञा चौरः मोच्यः मोक्तव्यः, मोचनीयः।

२ भृत्यै स्वामिनौ सेविष्येते—भृत्यैः . सेव्यौ, सेवितव्यौ, सेवनीयौ।

पुत्रेण पितरौ अर्चिष्येते—पुत्रेण पितरौ अर्च्यौ, अर्चितव्यौ अर्चनीयौ।

३ पित्रा पुत्रा स्वङ्क्ष्यंते—पित्रा स्वञ्ज्याः स्वङ्क्तव्याः स्वंजनीयाः।

वृष्ट्या वृक्षा उक्षिष्यंते—वृष्ट्या वृक्षाः उक्ष्याः, उक्षितव्याः, उक्षणीयाः

मया ग्रंथा पठिष्यंते—मया ग्रंथाः पाठ्याः, पठितव्याः पठनीयाः।

षोडश पाठ।

स्त्रीलिंग

१ तया नदी ईक्षिष्यते—तया नदी ईक्ष्या, ईक्षितव्या, ईक्षणीया।

मात्रा कन्या स्वंक्ष्यते—मात्रा कन्या स्वंज्या, स्वङ्क्तव्या, स्वंजनीया।

२ तेन पुस्तिके पठिष्येते—तेन पुस्तिके पाठ्ये, पठितव्ये, पठनीये।

गोपेन धेनू मोक्ष्येते—गोपेन धेनू मोच्ये, मोक्तव्ये, मोचनीये।

३ वृष्ट्या वीरुध सेक्ष्यंते—वृष्ट्या वीरुधः सेच्याः, सेक्तव्याः सेचनीयाः।

दुहित्रा जनन्यः सेविष्यंते—दुहित्रा . . सेव्याः सेवितव्याः, सेवनीयाः।

सप्तदश पाठ।

नपुंसकलिंग

१ मया वनं द्रक्ष्यते—मया वनं दृश्यं, द्रष्टव्यं, दर्शनीयं।

त्वया दुग्धं पास्यते—त्वया दुग्धं [13]पेयं, पातव्यं, पानीयं।

जैसे धातुके इ, उ, ऋको क्रमसे ए, ओ, अर् हो जाते हैं। ऋकारके सिवाय शेष स्वरांत धातुओंसे 'य' होता है। ऋकारांत और व्यंजनांत धातुओंसे 'ण्य' और जिनके अंतके अक्षरसे पहिले ऋ है उनसे क्यप् प्रत्यय होता है। १३–आकारांत धातुके अंतके 'आ' को 'ए' हो जाता है 'य' प्रत्यय होनेसे।

२ बालकेन पुष्पे घ्रास्येते—बालकेन पुष्पे घ्रेये, घ्रातव्ये, घ्राणीये ।
राज्ञा सरसी सृक्ष्येते—राज्ञा सरसी सर्ग्ये, स्रष्टव्ये, सर्जनीये ।
३ मया फलानि खादिष्यंते—मया खाद्यानि,खादितव्यानि,खादनीयानि
अग्निना काष्ठानि धक्ष्यंते—अग्निना दाह्यानि,दग्धव्यानि, दहनीयानि

अष्टादश पाठ ।

भाववाच्य	भाववाच्य
दैवेन फलिष्यते	—दैवेन फल्यं, फलितव्यं,फलनीयं ।
संपदा एधिष्यते	—संपदा एध्यं, एधितव्यं, एधनीयं ।
छात्रैः वत्स्यते	—छात्रैः वास्यं, वस्तव्यं, वसनीयं ।

साहित्य परिचय

अथ नगरं प्रविष्टः सोऽजितसेननामा राजकुमारः पलायमानं (भागतेहुये) लोकं विलोकते स्म। तत उपजातकौतुकः सन् एकं पुमांसमुपसृत्य (पास जाकर) पलायन (भागनेका) हेतुं पृष्टवान्। स राजपुत्रपृच्छया (प्रश्नेन) निर्विण्णमनाः (उदासीनचित्तः) सन् गदितवान् "किं त्वमेतद् प्रसिद्धमपि उदंतं (वृत्तांतं) न जानासि। अयमरिंजयाभिधानेन (नामसे) प्रथितो धनधान्याढ्यजनाकुलो देशो वर्तते। यत्रस्था धरित्री (जमीन) सदा नवसस्यांकुरैर्हरिद्वर्णा शोभते। तद्मध्यवर्ति विपुलाभिधां दधानं पुरं, यदुच्चसौधशृंगैर्विलसदाकाशं खचराधिवासतुल्यं राजते। तत् नगरं जयवर्मनामधेयः पृथ्वीपतिः शास्ति। तद्नृपदुहिता सर्वैजगल्ललामभूता शशिप्रभाख्या वर्तते। तां महेंद्रनामा कश्चित् क्षितीशो याचितवान्। परं तां प्रदातुं स जयवर्मा निमित्तिना (ज्योतिषी) निषिद्धः। अतो निराकृतप्रार्थनो महेंद्रवर्मा समस्तराजलोकैः सह संभूय, जयवर्मसेनां निहत्य पुरमावृत्य वितिष्ठते तद् स्वविनाशमीक्षमाणः सकलो राष्ट्रजन इतस्ततो धावति, इति।

हिंदी—इसके बाद नगरमें जाकर उस अजितसेन नामक कुमार ने भागतेहुये लोगोंको देखा इसलिये कतुकसहित हो एक आदमी के पास जाकर भागनेका कारण पूंछा। उस आदमीने राजपुत्रके प्रश्नसे उदासीनमन होकर कहा कि—"क्या तुम इस प्रसिद्ध वृत्तांतको भी नहीं जानते। यह अरिंजय नामसे प्रसिद्ध धन धान्यवाले जनोंसे व्याप्त देश है। यहां की भूमि सर्वदा नवीन नवीन धान्योंके अंकुरोंसे हरेवर्णकीसी शोभित होती है। इसदेशके मध्यमें "विपल" नामको धारण करनेवाला नगर है जोकि ऊंचे २ मकानोंके शिखरों से आकाशको घर्षण करनेवाले विद्याधरोंके निवासस्थानके समान शोभित जानपडता है। इस नगरको जयवर्मा नामक राजा पालता है। उस राजाकी लडकी संपर्ण जगत्की भूषणस्वरूप शशिप्रभा नामकी है। उस लडकीको महेंद्रनामक दूसरे राजाने मांगा लेकिन उस लडकी को देनेके लिये जयवर्माको ज्योतिषीने रोकदिया। प्रार्थना अस्वीकार होनेसे महेंद्रवर्मा संपूर्ण राजाओंके साथ जयवर्माकी सेनाको मारकर नगरको घेर बैठा है। इसलिये अपने नाशको देखते हुये संपर्ण देशवासी इधर उधर भागते हैं।

संस्कृत बनाओ—

मणिवतदेशवर्ती एक दारा नामक नगर है क्षत्रियवंशी मणिमाली नामक राजा उस नगरकी रक्षा करता था। उसके (तदीय) मणिशेखर नामक पुत्र था। वह राजा इंद्रिय सुखोंको अति भोगता था। किसी समय उसने अपने शिरमें (स्वशिरस्थं) श्वेत बालको देखा। उसको देखकर अपना मृत्युसमय निकट जाना। इसलिये राज्यभार पुत्रको देकर (पुत्रनिक्षिप्तराज्यभारः) वह वनको चलागया और वहां गुणसागर मुनिके समीप दीक्षाली तथा जैनसिद्धांत पढा। अंतमें जब कि उग्र तपस्वी होगया तब एकाकी विहार करनेलगा (विहरति स्म) राजन्! इस तरह विहार करते २ (विहरन्) वह उज्जयिनी पहुंचा;

और वहां श्मशानभूमिस्थ होकर (सन्) ध्यान करने लगा। उस समय रात थी इसलिये एक मंत्रवादी-जातिका (जात्या) कोली (कौलिकः) वैताली विद्याको सिद्ध करनेके लिये (साधयितुं) वहां आया। और उसके (तदीय) शरीरको मृत समझा इसलिये उसपर उसने (तत्र) अग्नि जलाई।

हिंदी बनाओ—

श्मशानभूमिमागत्य जिनदत्तादयः श्रावका मां भक्त्या प्रणतवंतः। मदीयां दुरवस्थां विलोक्य परमदुःखिताः संजाताः। केन दुष्टेन महानुपसर्गोऽयं रचित इति क्रुध्यन् (क्रोधकरता हुआ) जिनदत्तो मामुत्थाप्य (उठाकर) स्वगृहमानीतवान्। एवं तदा एव कंचित् वैद्यमाहूय (बुलाकर) मदीयां व्याधिं दूरीकर्तुमौषधिं याचितवान्। वैद्येन कथितं-भोः जिनदत्त! रोगोऽयमसाध्योऽतो लाक्षामलतैलं विना एतदीयं (इसका) दूरीभवन—(दूर-होना) मशक्यं। तद् तैलमानेतुं यतस्व। अत्र एव सोमशर्मनामा ब्राह्मणो निवसति। तदीयं गृहं गत्वा तत् तैलमानय" इति। अथ-तद् गृहं गतो जिनदत्तस्तत्र तुंकारीनामधेयां ब्राह्मणभार्यां दृष्टवान्। एवं तां भगिनी(बहिन) शब्देन संबोध्य (बुलाकर) तैलं च याचितवान्। तयोक्तं श्रेष्ठिन्! निर्भयः सन् मद्गृहं प्रविश्य तैलं च गृहाण (लेलेओ) जिनदत्तस्तत्र गत्वा घटमेकं गृहीत्वा चलितुं यदा प्रारब्धवान् तदा एव स घटः पतति स्म तथा तत्रस्थं सर्वं तैलं च विकीर्णं।

शुद्ध करो—

१ शीतं रविर्भवतः शीतरुचिः प्रतापी,
स्तब्धो नभो जलनिधी सरिदम्बुतृप्तः।
स्थायी मरुद् विदहनं दहनोपि जातु (कदाचित्)
लोभानलस्तु न कदाचिद (द् अ) दाहकं स्यात्।

इति श्रुत्य तेन गदितवान्। भोः पंडितः त्वं सत्यं उक्तं एवमेव पूर्वैः शास्त्रज्ञैः अपि उपदिष्टवंतः।

२ ब्रह्मारण्यस्थः कर्पूरतिलको नाम हस्तीः वर्तते। तं अवलोक्त्वा सर्वैः शृगालैः चिंततः। यदि अयं केन अपि उपायेन मृत्युं गच्छति तदा अस्माकं [हमारा] एतद् देहेन मासचतुष्टयपर्यंतं भोजनं भोष्यति। तत्र एकेन शृगालेन प्रतिज्ञातवान् अहं बुद्धिप्रभावेण अयं मारणीयः। अनंतरं स वंचकः कर्पूरतिलकसमीपं गत्य साष्टांगपातं प्रणत्वा गदितः। देव! दृष्टिप्रसादं कुरु। हस्ती गदितः। कः त्वं? कुतः समायातः? स उक्तं-जंबुकोऽहं सर्वै वनवासिभिः मिलित्य भवत्सकाशं प्रस्थापितवान् यद् विना राज्ञेण अवस्थातुं न युक्तं। तद् अत्र वनराज्यं कर्त्तुं भवान् सर्वस्वामिगुणोपेतः निरुपितवान् तद् यथा लग्नसमयो न विचलतः तथा कृत्वा शीघ्र आगम्यंतां देवेन। इति निगदित्वा उत्थित्वा च चलितवान्। ततोऽसौ राज्यलोभाकृष्टः कर्पूरतिलकः शृगालमार्गेण धावन्तः महापंकनिमग्नौ जाते ततः तेन हस्तिया उक्तं। मित्रः शृगाल! किम् अधुना विधेयं पंकमग्नवान् अहं प्राणा त्यजति। परावृत्वा पश्य। शृगालो गदितः। देव! मदीयपुच्छकावलंबनं कृत्य उत्तिष्ठ। यद् मदीयं वचनं विश्वस्तं तद् अनुभूयेतां अशरणः दुःखं।

चतुर्थी विभक्ति।[१४]

प्रथम पाठ।

१ श्रावकः छात्राय पुस्तकं वितरति—श्रावक विद्यार्थीके लिये पुस्तक देता है।

१४—कर्ता-कर्मके द्वारा जिसको प्राप्त करै उसे संप्रदान कहते हैं। जिसकी संप्रदान संज्ञा होती है उस शब्दसे चतुर्थी विभक्ती लानेका नियम है। जैसे श्रावक छात्राय आदि वाक्यमें कर्ता श्रावक है वह कर्म जो पुस्तक है उसकेद्वारा छात्रको प्राप्त करता है इसलिये छात्र शब्दसे चौथी विभक्ती हुई। अथवा—जिसके लिये कोई चीज दो और उसे फिर वापिस न लो तो जिसके लिये वह चीज दी गई है उससे चतुर्थी विभक्ती लायी जायगी।

दातव्यं भवति विदुषा संयताय अन्नशुद्धं—विद्वानको संयमीके लिये शुद्ध अन्न देना चाहिये।

नमः श्रीवर्द्धमानाय—श्रीवर्द्धमान् भगवानके लिये नमस्कार है।

मुनये चतुर्विधं दानं देयं—मुनिको चार तरहका दानदेना चाहिये।

बंधवे मोदको रोचते—बंधुको लाडू अच्छा लगता है।

गुरवे किं न प्रदेयं—गुरुको क्या देने योग्य नहीं है।

दात्रे कोऽपि न क्रुध्यति—दाताके लिये कोई भी क्रोध नहीं करता है।

पित्रे नमः—पिताको नमस्कार है।

अयं प्रस्तावः बालकाभ्यां सुखकरः—यह प्रस्ताव दो बालकोंके लिये सुखकारी है।

अश्वाभ्यां घासः आहृतः—दो घोडोंके लिये घास लाई गई है।

फलानि कपिभ्यां सुखानि—फल दो बंदरोंके लिये सुखकर हैं।

दुग्धं अहिभ्यां हितं—दूध दो सांपोंको हितकर है।

शिशुभ्यां फले आनीते—दो लडकोंको दो फल लाये गये हैं।

बंधुभ्यां चिरंजीवितं भवतु—दो भाई चिरायु हों।

पितृभ्यां नमः—माता पिताको नमस्कार है।

दातृभ्यां आशिषः प्रदत्तास्तैः—उनने दो दाताओंको आशीर्वादें दी।

१५–नमः, स्वस्ति, स्वाहा, वषड्, स्वधा, हित और "अलं" के पर्याय वाची शब्द जिसकेलिये प्रयोगमें लाये जाय उस शब्दसे चौथी विभक्ती होती है। १६–रुचि [अच्छा लगना] अर्थ वाली धातुओंका प्रयोग करने पर जो प्रीयमाण [जिसे अच्छी लगे] होगा उससे चौथी विभक्ती लायी जायगी जैसे ऊपरके वाक्य में लाडू बंधुको अच्छा लगता है तो बंधु शब्दसे चौथी विभक्ती होती है। १७–क्रोध, द्रोह, ईर्ष्या, असूया अर्थ वाली धातुओंके योगमें जिसके प्रति क्रोधादिक किये जाय उससे चौथी विभक्ती होती है।

१८–जहा "के लिये" एसा अर्थ मालूम पडे उस जगह जिस शब्द से "के लिये" का संबंध हो उससे चौथी विभक्ती होती है। १९–कल्याण, और आयु अर्थवाले शब्दोंके योगमें यदि आशीर्वाद हो तो जिसके लिये आशीर्वाद दिया गया है उस शब्दसे चौथी विभक्ती होती है।

३ बालकेभ्य मिष्टान्नं स्वदते बालकोंको मिठाई अच्छी लगती है।

मुनींद्रेभ्यो नमो नमः—मुनींद्रोंके लिये वार वार नमस्कार है।

मुनिभ्यः दानं देयं—मुनियोंको दान देना चाहिये।

कपिभ्यः दुःखं न विधेयं—बंदरोंको दुख न करना चाहिये।

गुरुभ्यः सर्वदा नमः—गुरुओंको हमेशा नमस्कार है।

साधुभ्यः कल्याणं भवतु—साधुओंका कल्याण हो।

उपकर्तृभ्य क्षेमं भवतु—उपकारियोंका कल्याण हो।

संस्कृत बनाओ—

पात्रके लिये धन देना योग्य है। मनियोंको जो भोजन देते हैं वे पुण्यभाग् होते हैं। दुखी लोग सुख चाहते हैं (स्पृहयंति) एक सेठने विद्यार्थियोंको पस्तकें बांटी। वह मल्ल उस मल्लके लिये काफी है (अलं)। लडकोंको कटु चीज अच्छी नहीं लगती। जीवंधरने साधुओंके लिये धर्मको उपदेशा। भव्यलोगोंका चिरजीवन हो। रथके लिये लकडी लाओ।

द्वितीय पाठ।

व्यंजनांत पुंलिंगशब्द

नीचे लिखे शब्दोंसे वाक्य बनाओ—

जलमुचे	जलमुग्भ्यां	जलमुग्भ्यः।
परिव्राजे	परिव्राड्भ्यां	परिव्राड्भ्यः।
सम्राजे	सम्राड्भ्यां	सम्राड्भ्यः।
पापकृते	पापकृद्भ्यां	पापकृद्भ्यः।
बुद्धिमते	बुद्धिमद्भ्यां	बुद्धिमद्भ्यः।
बलवते	बलवद्भ्यां	बलवद्भ्यः।
गायते	गायद्भ्यां	गायद्भ्यः।
सुहृदे	सुहृद्भ्यां	सुहृद्भ्यः।

राज्ञे	राजभ्यां	राजभ्यः।
मूर्द्ध्ने	मूर्द्धभ्यां	मर्द्धभ्यः।
दुरात्मने	दुरात्मभ्यां	दुरात्मभ्यः।
स्वामिने	स्वामिभ्यां	स्वामिभ्यः।
मंत्रिणे	मंत्रिभ्यां	मंत्रिभ्यः।
चंद्रमसे	चंद्रमोभ्यां	चंद्रमोभ्यः।
विदुषे	विद्वद्भ्यां	विद्वद्भ्यः।
जग्मुषे	जग्मिवद्भ्यां	जग्मिवद्भ्यः।
ज्यायसे	ज्यायोभ्यां	ज्यायोभ्यः।

सर्वादि

सर्वस्मै	सर्वाभ्यां	सर्वेभ्यः।
तस्मै	ताभ्यां	तेभ्यः।
यस्मै	याभ्यां	येभ्यः।
कस्मै	काभ्यां	केभ्यः।
अस्मै	आभ्यां	एभ्यः।
अमुष्मै	अमूभ्यां	अमीभ्यः।
मह्यं	आवाभ्यां	अस्मभ्यं।
तुभ्यं	युवाभ्यां	युष्मभ्यं।

संस्कृत बनाओ—

उन महात्मा लोगोंको नमस्कार है। विद्वानोंके लिये कल्याण हो। स्वामीके लिये सेवक प्राणोंको भी देदेता है। छोटे भाइयोंके लिये वडे भाई शुभकामनायोंको करते हैं। सबके लिये सुख चाहो। राजा मंत्रियों पर क्रोध करता है। मित्र [सुहृद्] के लिये दो किताबें दो। पाप करनेवालेको धर्मका उपदेश दो। तपस्वियोंके लिये चतुर्विधदान देना योग्य है। मुझे विद्वानोंकी संगति [विद्वत्संगति] अच्छी लगती है। तुम्हारा कल्याण हो।

तृतीय पाठ ।

स्त्रीलिंग

कन्यायै	कन्याभ्यां	कन्याभ्यः ।
बालायै	बालाभ्यां	बालाभ्यः ।
मत्यै	मतिभ्यां	मतिभ्यः ।
ऊर्म्यै	ऊर्मिभ्यां	ऊर्मिभ्यः ।
नद्यै	नदीभ्यां	नदीभ्यः ।
तस्थुष्यै	तस्थुषीभ्यां	तस्थुषीभ्यः ।
रेण्वै	रेणुभ्यां	रेणुभ्यः ।
धेन्वै	धेनुभ्यां	धेनुभ्यः ।
वध्वै	वधूभ्यां	वधूभ्यः ।
चम्वै	चमूभ्यां	चमूभ्यः ।
मात्रे	मातृभ्यां	मातृभ्यः ।
दुहित्रे	दुहितृभ्यां	दुहितृभ्यः ।
स्रजे	स्रग्भ्यां	स्रग्भ्यः ।
त्वचे	त्वग्भ्यां	त्वग्भ्यः ।
विपदे	विपद्भ्यां	विपद्भ्यः ।
परिषदे	परिषद्भ्यां	परिषद्भ्यः ।
वीरुधे	वीरुद्भ्यां	वीरुद्भ्यः ।
क्षुधे	क्षुद्भ्यां	क्षुद्भ्यः ।
योषिते	योषिद्भ्यां	योषिद्भ्यः ।
सरिते	सरिद्भ्यां	सरिद्भ्यः ।
सर्वस्यै	सर्वाभ्यां	सर्वाभ्यः ।
अपरस्यै, अपरायै	अपराभ्यां	अपराभ्यः ।
अन्यस्यै	अन्याभ्यां	अन्याभ्यः ।
तस्यै	ताभ्यां	ताभ्यः ।

यस्यै	याभ्यां	याभ्यः।
कस्यै	काभ्यां	काभ्यः।
अस्यै	आभ्यां	आभ्यः।
अमुष्यै	अमूभ्यां	अमूभ्यः।

संस्कृत बनाओ—

१। जिन (यदीय) नारियोंकी संतानसे यह पृथ्वी सफल है उनको मैं चाहती हूं (स्पृहयामि)

२। मुझे संतुष्ट करनेके लिये (परितर्पयितुं) ज्ञाति मित्रादि कोई भी समर्थ नहीं हैं।

३। एक समय राजा मित्रोंके साथ वन देखने [वनदर्शन] गया।

४। पापको नष्ट करनेके लिये [पापनाश] बहुत दूर जाकरके भी मुनि दर्शन करना चाहिये।

५। इस लड़कीके लिये वर ढूंढना चाहिये [अन्वेष्य]

६। सभाके लिये योग्य योग्य सभासद ढूंढने चाहिये।

७। गायको भूसा [बुस] अच्छा लगता है

८। माताके लिये हमेशा नमस्कार है। इसके सिवाय [विहाय] उसके लिये हम क्या कर सके हैं? जो उपकारके लिये काफी हो [अलं]

चतुर्थ पाठ।

नपुंसकलिंग

कुसुमाय	कुसुमाभ्यां	कुसुमेभ्यः।
दानाय	दानाभ्यां	दानेभ्यः।
वारिणे	वारिभ्यां	वारिभ्यः।
मधुने	मधुभ्यां	मधुभ्यः।
सानुने	सानुभ्यां	सानुभ्यः।

श्रीमते	श्रीमद्भ्यां	श्रीमद्भ्यः ।
गुणवते	गुणवद्भ्यां	गुणवद्भ्यः ।
शर्मणे	शर्मभ्यां	शर्मभ्यः ।
कर्मणे	कर्मभ्यां	कर्मभ्यः ।
पयसे	पयोभ्यां	पयोभ्यः ।
चेतसे	चेतोभ्यां	चेतोभ्यः ।
ज्योतिषे	ज्योतिर्भ्यां	ज्योतिर्भ्यः ।
हविषे	हविर्भ्यां	हविर्भ्यः ।
धनुषे	धनुर्भ्यां	धनुर्भ्यः ।
सर्वस्मै	सर्वाभ्यां	सर्वेभ्यः ।
तस्मै	ताभ्यां	तेभ्यः ।
अमुष्मै	अमूभ्यां	अमीभ्यः ।
अस्मै	आभ्यां	एभ्यः ।

चतुर्थी विभक्तीका व्यवहार

ज्ञातारं (विश्वतत्त्वानां) वंदे तद्गुणलब्धये । — [समस्ततत्त्वोंके] ज्ञाताको उसके गुणकी प्राप्तिके लिये मैं नमस्कार करता हूं

श्रयामि तानमलपदाप्तये यतीन्—उन यतियोंको निर्मलपदकी प्राप्तिकेलिये [आश्रयण करता हूं।

ते गुरवो विमुक्तये भवंतु—वे गुरु मुक्तिके लिये हों ।

स राजा राज्यस्थित्यै दंड्यान् दंडितवान् । — वह राजा राज्यकी स्थितिके लिये अपराधियोंको दंड देता था ।

ते प्रसूतये नारीरुद्वहंते स्म—वे संतानके लिये स्त्रियोंको विवाहते थे ।

सा बाला भवता विदेशकाय वितीर्णा-वह लडकी आपने विदेशीके लिये दी है

इति दूतमसौ विसृज्य राजाऽजितसेनाय कार्यं कथितवान् । — इसतरह दूतको विदाकरके राजाने अजितसेनके लिये कार्य कहा ।

राजा प्रजायै राज्यभारमावहति स्म । — राजाने प्रजाके लिये राज्यभारको धारण किया ।

मिपतिः पत्न्यै तत्कथयन् अति-क्रांतमपि मार्गं न ज्ञातवान्।	राजाने पत्नीके लिये वह बात कहते हुये बीता हुआ मार्ग भी न जाना।
दृष्टमात्रोऽपि गिरिर्गरीयान् प्रमोदाय भवति स्म।	वह देखागया ही महान् पर्वत हर्षके लिये हुआ।
सभार्याय तस्मै राज्ञे सर्वाः प्रजा अर्हणां कृतवत्यः।	पत्नीसहित उस राजाकी सब प्रजाने पूजाकी।
योद्धारः शस्त्रेभ्यः तोयं ददंति	योद्धा लोग शस्त्रोंपर जल चढ़ाते हैं [देते हैं।
धर्मार्थकामसेवकाय राज्ञे श्लाघते लोकः।	धर्म अर्थ कामको सेवनेवाले राजाकी लोग प्रशंसा करते हैं।
मह्यं धर्मः स्वदते	मुझे धर्म अच्छा लगता है।
निर्धना धनाढ्याय शतानि रूप्यकाणि धारयंति।	निर्धन लोग धनाढ्योंके सैंकड़ों रुपये धारते हैं [कर्जा करते हैं]।
यत्रस्था जनाः-अर्थं धर्माय सेवंते कामं संतानवृद्धये।	जहाके लोग-धनको धर्मके लिये, कामको संतानवृद्धिके लिये सेवते हैं।

मया छात्राय पुस्तकं प्रतिश्रुतं। मैंने विद्यार्थीकेलिये एक पुस्तककी प्रतिज्ञाकी।

पापिनो धार्मिकाय द्रुह्यंति—पापी लोग धर्मात्माका द्रोह करते हैं।

संयमाय श्रुतं धत्ते पुमान् धर्माय संयमं।	मनुष्य संयमके लिये शास्त्र और धर्मके लिये संयमको धारण करता है।
धर्मं मोक्षाय मेधावी धनं दानाय भक्तये।	बुद्धिमान् आदमी धर्मको मोक्षके लिये धनको दान और भक्तिके लिये धारण करते हैं

इदं मंगलाचरणं विघ्नध्वंसाय अलं—यह मंगलाचरण विघ्नध्वंसके लिये काफी है

"तुष्ट्या ददत् स्वसुतजन्म निवेदयद्भ्यो देयं न देयमित्यथवा क्षितीशः" नो बोधति स्म।	अपने पुत्रके जन्मको कहनेवालोंकेलिये संतोषसे दान देता हुआ राजा देय और अदेयको नहीं समझता हुआ।

१—श्लाघ्, न्हुङ्, स्था, शप धातुके योगमें जिसके श्लाघादिक किये जाते हैं उससे चौथी विभक्ती होती है।

नाम श्रीशब्दानुगतं कृतं मंगलाय—मंगलके लिये श्रीशब्दसे सहित नाम रक्खा

इति [त्या] आशास्य तं [मा] इस तरह आशीर्वाद और धैर्य देकर

आश्वास्य कृच्छ्रं स तपसे गतः। कष्टपूर्वक वह तपके लिये वनको गया।

ते विद्याभ्यासाय वाराणसीमागताः— वे विद्या पढने काशी आये।

संस्कृत बनाओ—

१। कुमार! हमें आपके [भवदीय] वचन अतिप्रिय लगते हैं। कृपाकर हमें ठंडे ही फल दीजिये।

२। श्रेणिकने चेलनाके लिये महादेवी पद प्रदान किया।

३। महाराज पुत्रके लिये युवराजपद देकर संसारसुखको भोगते हुवे

४। वह पुत्रके लिये मुनिसे प्रार्थना करता है।

५। वे दोनों धनके लिये परस्परमें [परस्परं] कलह करते थे।

६। उन स्त्रियोंने राजसभामें जाकर राजासे निवेदन किया।

७। अभयकुमारने उन स्त्रियोंको लानेके लिये नौकरसे कहा।

८। माता पुत्रके लिये दुख कभी नहीं चाहती। पर पुत्र माताके लिये कभी २ दुःख पहुंचाता है [यच्छति।]

९। कुमारने सब लोगोंसे यह बात कहकर वसुमित्राको पुत्र दिया।

१०। यदि आप मोक्षके लिये ही तप करते हैं तो वृद्धावस्था पाकर [प्राप्य] करना,, ऐसा उस दुश्चरित्राने मुनिसे कहा।

पंचमीविभक्ती[२०]।

प्रथम पाठ।

स्वरांत शब्द

१ भृत्यः अश्वात् पतति—सेवक घोडेसे गिरता है।

अहं सार्थात् अवहीनः—मैं सगसे छूट गया।

---

[२०]—जिस पदार्थसे साक्षात् या बुद्धि द्वारा किसी पदार्थका वियोग मालूम पडे तो उस पदार्थके अर्थको कहनेवाले शब्दसे पांचवीं विभक्ती होती है। जैसे—

देवदत्तो जिनदत्ताद् आगतः—देवदत्त जिनदत्तके पाससे आया।

शरः शृंगाद् जायते—बाण शींगसे उत्पन्न होता है।

अंकुरो बीजाद् अवरोहति—अंकुर बीजसे उगता है।

नद्यः अद्रेः उत्पतंति—नदिया पहाडसे गिरती हैं।

अहेः बालो बिभेति—सांपसे बालक डरता है।

पिता गुरोः नान्यः—पिता गुरुसे भिन्न नहीं है।

दस्यो धनं रक्षति—चोरसे धनकी रक्षा करता है।

गृहीतुः दाता श्रेष्ठः—लेनेवालेसे देनेवाला अच्छा है।

हंतुः निर्बलो बिभेति—मारनेवालेसे निर्बल डरता है।

२ वृक्षाभ्या फलानि पतंति—दो पेडोंसे फल गिरते हैं।

आसनाभ्या उत्तिष्ठेते छात्रौ—दो आसनोंसे दो विद्यार्थी उठते हैं।

शिशुः व्याघ्राभ्या रक्षितः—दो वाघोंसे लडकेकी रक्षाकी।

छात्रैरियं विद्या मुनिभ्या शिक्षिता—विद्यार्थियोंने यह विद्या दो मुनियोंसे सीखी

गुरुभ्या के श्लाघ्यतराः—दो गुरुओंसे अधिक कौन प्रशंसनीय है।

अहं पितृभ्या सदाचारं लब्धवान्—मैने माता और पितासे सदाचार पाया।

३ अलसाश्छात्रा उपाध्यायेभ्य अंतर्दधते—आलसी विद्यार्थी उपाध्यायोंसे छिपते हैं।

माथुराः पाटलिपुत्रकेभ्यः आढ्यतराः—मथुरावासी लोग पटनावासियोंसे अधिक धनाढय हैं।

जना जिनरथोत्सवं प्रासादेभ्यः पश्यंति—लोग जिनरथोत्सवको मकानोंसे देखते हैं।

'अश्वात् भृत्य पतित' इस उदाहरणमें घोडेसे नौकर वियुक्त साक्षात् मालूम होता है तो घोडेके अर्थवाले अश्व शब्दसे पाचवीं विभक्ती आती है इसीप्रकार पापसे डरता है इस उदाहरणमें 'पापसे दु ख होता है एसा विचार कर मनुष्य बुद्धिसे उसके पास जाता है फिर उसको भयका कारण जान लौट आता है तो पाप शब्दसे पाचवी विभक्ती होगी यहां बुद्धि द्वारा वियोग मालूम होता है। संक्षेपमें—जहा हिंदीमें 'से' लगता है वहा संस्कृतमें पाचवी विभक्ती होती है।

गीतानि ग्रथिकेभ्यः शृणोति राजा—राजा गीतोंको नटोंसे सुनता है।
कृषीवलः यवेभ्यो पशून् वारयति—किसान जौके खेतोंसे पशुओंको-
अहिभ्य सर्वदा भयं कार्यं—सांपोंसे सर्वदा भय करना चाहिये [रोकता है।
मुनिभ्यः उपदेशः श्रोतव्यः—मुनियोंसे उपदेश सुनना चाहिये।
गुरुभ्य विनयपूर्वकं विद्या पठनीया—गुरुओंसे विनयपूर्वक विद्या पढनी-
दस्युभ्यः द्रव्यं रक्षणीयं—चोरोंसे द्रव्यकी रक्षा करनी चाहिये [चाहिये।
हंतृभ्यो दूरीभवनमेव श्रेयः—हंताओंसे दूर होनाही अच्छा है।
दातृभ्यो धनानि याचति भिक्षुकाः—दाताओंसे भिखारी धन मागते हैं।

नीचे लिखे शब्दोंसे वाक्य बनाओ—

विभावसोः, अंशुभ्यः, गिरेः, मुनेः, शिशुभ्यः, अधर्मात्, कलेः, ग्रामाभ्यां, शिक्षयितुः, अध्ययनात्, भोजनात्, शत्रुभ्यः, नेतृभ्यः, वक्तृभ्यां, श्रोतुः।

संस्कृत बनाओ—

१ हमेशा पापसे दुःख होता है इसलिये इसको छोडो।
२ जो धर्ममें प्रमाद करता है वह अपनी हानि चाहता है।
३ गांवसे बाहिर चांडालों के घर होते हैं।
४ पर्वत समुद्रसे एक योजन है। वहां [तत्र] बहुत बंदर हैं।
५ द्वारपाल से यह वृत्तांत सुन कर राजा सिंहासन से उठा।
६ पूर्वजन्मकृतपुण्यसे जीव सुखी होते हैं।
७ अन्य से क्या यह जीव शरीरसे भी वियुक्त होजाता हैं, ऐसा विचारकर राजा संग्रामसे विरत हुआ।

२१—प्रमाद, निंदा, विराम और भय अर्थवाली धातुओंके योगमें जिससे प्रमाद आदि किये जाय उससे पांचवी विभक्ती होती है। जैसे "धर्ममें प्रमाद करता है" इस वाक्यमें प्रमाद धर्मसे किया गया है तो धर्म शब्दसे पांचवी विभक्ती होगी।

८ मुनि लोग गृहस्थोंके पाससे पूजाके योग्य हैं। [धानीको आया
९ सुधर्माचार्यसे धर्मोपदेश सुनकर श्रेणिक समवशरणसे राज-
१० जिसतरह मियान [कोप] से तलवार भिन्न है उसीतरह [तथा एव] शरीरसे आत्मा अलग है।

हिंदी बनाओ—

१ मित्र! विरम त्वं निष्फलात् आरम्भात्।
२ तदीयसंगात् [द] अखिलोऽपि [ही] भीरुरन्यो जनः शूरतरो बभूव [हुआ]।
३ अन्योन्यकृताद् स्पर्धाद् इव गुणा वृद्धिं गच्छंति स्म।
४ पितु [पिताकी] निंदेशाद् [द] अथ सुदपांगीं स राजकन्यां विधिना [नो] उपयेमे। [न युक्तः।
५ दुष्कर्मक्षयात् कथंचित् मानुषजन्म लब्ध्वा स्वहिताय प्रमादो
६ यावत् इमानि इंद्रियाणि प्रबलानि तावद् एव दुःखितं आत्मानं प्रयत्नात् भवात् यूयं मोचयितुं यतध्वं।
७ इति क्षितीशः सह शिक्षयाऽसौ विश्राणयामास [वितीर्णवान्] सुताय लक्ष्मीं। सोऽपि प्रतीयेष [स्वीकरोतिस्म] गुरूपरोधात् (गुरुके आग्रहसे)।
८ न काचिद् [दी] ईहा कृतकृत्यभावात् न च क्वचित् प्रेम शमत्वयोगात् [शांतिगुणसंयोगात्] इयं हि कल्याणकरी प्रवृत्तिर्जगद् हिताय [चैव] एव [भवादृशानां]।
९ नराधिप! त्वां प्रियविप्रयुक्तं [प्रियरहितं] विलोक्य दिव्येन सुलोचनेन। गुणानुरागाद् [द] अहमागतोऽस्मि [आया हूं]।

द्वितीय पाठ।

व्यंजनांत-पुंलिंग

१ जलमुचः वारि पतति—मेघसे पानी गिरता है।

परिव्राज उपदेशः श्रोतव्यः—संन्यासीसे उपदेश सुनना चाहिये।

सम्राज शत्रव पलायंते—चक्रवर्तीसे वैरी भागते हैं।

पापकृत भयमुचित—पापीसे डरना योग्य है।

बुद्धिमत शास्त्रमध्येयं—बुद्धिमानसे शास्त्र पढना चाहिये।

बलवत निर्बलो बिभेति—बलवानसे निर्बल डरता है।

गायत गीतं श्रुतवान् राजा—राजाने गानेवालेसे गीत सुना।

सुहृद अन्य स्वं न द्रष्टव्यं—मित्रमे भिन्न अपनेको न समझना चाहिये।

राज्ञ इतरः कोऽन्यः प्रजा रक्षति—राजाके सिवाय और कोन प्रजाकी रक्षा करता है।

मूर्ध्न शिरस्त्राणं पतितं—शिरसे टोपी गिरगई।

अश्मन वह्निर्वहिर्गतः—पत्थरसे अग्नि निकल आई।

स्वामिन अधिको धार्मिको भृत्यः—स्वामीसे नोकर अधिक धार्मिक है।

चन्द्रमस ज्योत्स्नाः निस्सरति—चन्द्रमासे चादनी निकलती है।

विद्वस मूर्खः पराजयते—विद्वान्से मूर्ख हार जाता है।

ज्यायस भेतव्यं—बडेसे डरना चाहिये।

नोट—व्यंजनांत शब्दोंके पंचमी विभक्तीके द्विवचन और बहुवचनके रूप चतुर्थी विभक्तिके रूपोंके समान होते हैं इसलिये यहां दुबारा नहीं लिखे गये हैं।

संस्कृत बनाओ।

१। राजासे बढकर कोई उपकारी नहीं है इसलिये उसके साथ विरोध न करना चाहिये।

२। हिमवान् [हिमवत्] से गंगा और महाहिमवान्से रोहित् नदी निकली है।

३। हे राजन्! मैंने तेरा (त्वदीय) वृत्तांत सुधर्मनामा मुनींद्रसे सुना है।

४। देवोंसे मनुष्य वर मांगते हैं।

५। विद्वान्से मूर्ख दुःखी हैं। ६ छोटोंसे भी विद्या पढनी चाहिये।

तृतीय पाठ।

सर्वनाम

सर्वस्मात्	सर्वाभ्यां	सर्वेभ्यः।
तस्मात्	ताभ्यां	तेभ्यः।
यस्मात्	याभ्यां	येभ्यः।
कस्मात्	काभ्यां	केभ्यः।
अस्मात्	आभ्यां	एभ्यः।
अमुष्मात्	अमूभ्यां	अमीभ्यः।
मत्	आवाभ्यां	अस्मत्।
त्वत्	युवाभ्यां	युष्मत्।

ऊपर लिखे हुये शब्दोंसे वाक्य बनाओ।

संस्कृत बनाओ।

१ इस मोही [मोहिन्] मुनिसे तो [तु] व्रती गृहस्थ अच्छा है।
२ किसी शत्रुसे भयभीत हुआ मनुष्य राजाके समीप आया।
३ मुझसे वह गांव बहुत दूर है इसलिये मैं वहां नहीं जा सक्ता।
४ जो शास्त्रज्ञाता मुनि हों उनसे पढना योग्य है।
५ इस पेडसे गिरे हुये सब फल मीठे [मधुर] हैं।
६ तुम कहांसे आये हो? मैं पटनासे आया हूं।
७ समंतभद्र स्वामी भट्टाकलंकसे पहिले हुये हैं।
८ आचार्य देवनंदिके बाद श्रीगुणनंदी हुये।
९ गंगा कहां से निकलती है और रोहित् कहां से। [कहा।
१० माम? मुझसे भिन्न पद्मास्यको मत जानो [पश्य] ऐसा जीवंधरने
११ जो शरीरमात्र से भिन्न होते हैं वे ही सांचे मित्र हैं।
१२ दारिद्र्य से दूसरी चीज कोई अधिक दुःखदायक नहीं है।
१३ तत्त्वज्ञानसे सर्वत्र सुख मिलता है।
१४ शिथिल दो हाथों से पुस्तक गिरगई।
१५ उदारचेताओं से भिन्न कौन दान दे सक्ता है?

चतुर्थ पाठ।

स्त्रीलिंग

कन्यायाः	कन्याभ्यां	कन्याभ्यः।
बालायाः	बालाभ्यां	बालाभ्यः।
मत्याः, मतेः	मतिभ्यां	मतिभ्यः।
ऊर्म्याः ऊर्मेः	ऊर्मिभ्यां	ऊर्मिभ्यः।
नद्याः	नदीभ्यां	नदीभ्यः।
तस्थुष्याः	तस्थुषीभ्यां	तस्थुषीभ्यः।
रेण्वाः रेणोः	रेणुभ्यां	रेणुभ्यः।
धेन्वाः धेनोः	धेनुभ्यां	धेनुभ्यः।
वध्वाः	वधूभ्यां	वधूभ्यः।
चम्वाः	चमूभ्यां	चमूभ्यः।
मातुः	मातृभ्यां	मातृभ्यः।
दुहितुः	दुहितृभ्यां	दुहितृभ्यः।
ऋचः	ऋग्भ्यां	ऋग्भ्यः।
त्वचः	त्वग्भ्यां	त्वग्भ्यः।
विपदः	विपद्भ्यां	विपद्भ्यः।
परिषदः	परिषद्भ्यां	परिषद्भ्यः।
वीरुधः	वीरुद्भ्यां	वीरुद्भ्यः।
क्षुधः	क्षुद्भ्यां	क्षुद्भ्यः।
योषितः	योषिद्भ्यां	योषिद्भ्यः।
सरितः	सरिद्भ्यां	सरिद्भ्यः।
सर्वस्याः	सर्वाभ्यां	सर्वाभ्यः।
अपरस्याः	अपराभ्यां	अपराभ्यः।
अन्यस्याः	अन्याभ्यां	अन्याभ्यः।
तस्याः	ताभ्यां	ताभ्यः।

यस्याः	याभ्यां	याभ्यः ।
कस्याः	काभ्यां	काभ्यः ।
अस्याः	आभ्यां	आभ्यः ।
अमुष्याः	अमूभ्यां	अमूभ्यः ।

१ । कामपीडितो जनः पराराधनात् उत्पन्नाया दीनतायाः, पिशुनतायाः, परिवादात् पराभवात् अपि न बिभेति ।	कामसे पीडित मनुष्य दूसरे लोगोंकी सेवा शुश्रषासे उत्पन्न हुई दीनतासे, चुगली खानेसे, निंदासे, और तिरस्कारसे भी नही डरता है ।
२ । इति ईशवाक्यं शुश्रूषी महिषी तन्मुखग्लानेर्मूर्छिता भवति स्म ।	इस तरह पतिके वाक्यको सुनती हुई पटरानी राजाके मुखकी मलिनतासे [को देखकर] मूर्छित हो गई ।
३ । तद्वाण्याः सर्वे सभ्याः त्रासं गच्छंति स्म ।	उसकी वाणीसे संपूर्णसभाके लोग त्रासको प्राप्त हुये ।
४ । गुरुगोचराभ्यः प्रश्रयशुश्रूषाचतुरताभ्यः विद्याः स्मृता इव भवंति ।	गुरुके लिये की गई विनय, सेवा और चतुराईसे विद्यायें याद सगीखी हो जाती हैं ।
५ । विद्यायाः परं किं श्लाघ्यभूतं वस्तु ।	विद्यासे दूसरी कौनसी वस्तु प्रशंसनीय है ।
६ । तस्याः परिषदः शिक्षार्थिनो ज्ञानं लभंते ।	उस सभासे विद्यार्थी लोग ज्ञान पाते हैं ।
७ । आक्रोशवचःश्रुतेः काष्ठागारो रुष्टो जातः ।	चिल्लानेके वचन सुननेसे काष्ठागार क्रुद्ध हुआ ।
८ । अमुष्याः कन्यायाः पराजिताः पार्थिवाः ।	इस लडकीसे राजा लोग हार गये ।
९ । अस्याः महिष्याः चक्रवर्ती सुतो भूतः ।	इस महारानीने चक्रवर्ती पुत्र पैदा हुआ

१० । गुणसंपदः परं किं लभ्यं । गुणरूपी संपत्तिसे दूसरी क्या चीज प्राप्त करने योग्य है ।

संस्कृत बनाओ—

१ । गुरुवाणीसे अधिक कोई हित करने वाला नहीं है ।

२ । मातासे किसने ज्ञान नहीं पाया क्योंकि [यस्मात्] सब उससे उत्पन्न हुये हैं ।

३ । संपूर्ण सेनासे एक आदमी हारगया तो क्या आश्चर्य है ।

४ । गुरुभक्तिसे दूसरी कोई भी वस्तु कठिन नहीं है ।

५ । उपाध्यायीसे लडकियां छिपती हैं ।

पंचम पाठ ।

नपुंसकलिंग

नीचे लिखे शब्दोंसे वाक्य बनाओ—

पुष्पात्	पुष्पाभ्यां	पुष्पेभ्यः ।
वनात्	वनाभ्यां	वनेभ्यः ।
दानात्	दानाभ्यां	दानेभ्यः ।
वारिणः	वारिभ्यां	वारिभ्यः ।
मधुनः	मधुभ्यां	मधुभ्यः ।
सानुनः	सानुभ्यां	सानुभ्यः ।
श्रीमतः	श्रीमद्भ्यां	श्रीमद्भ्यः ।
गुणवतः	गुणवद्भ्यां	गुणवद्भ्यः ।
शर्मणः	शर्मभ्यां	शर्मभ्यः ।
कर्मणः	कर्मभ्यां	कर्मभ्यः ।
पयसः	पयोभ्यां	पयोभ्यः ।
चेतसः	चेतोभ्यां	चेतोभ्यः ।
ज्योतिषः	ज्योतिर्भ्यां	ज्योतिर्भ्यः ।

हविषः	हविर्भ्यां	हविर्भ्यः।
धनुषः	धनुर्भ्यां	धनुर्भ्यः।
सर्वस्मात्	सर्वाभ्यां	सर्वेभ्यः।
तस्मात्	ताभ्यां	तेभ्यः।
अमुष्मात्	अमूभ्यां	अमीभ्यः।
अस्मात्	आभ्यां	एभ्यः।
यस्मात्	याभ्यां	येभ्यः।
कस्मात्	काभ्यां	केभ्यः।

१। वनाद् बहिर्न गंतव्यं—वनके बाहर न जाना चाहिये।

२। आशैशवात् चपलः सः—वह लड़कपनसे चपल है।

३। सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रेभ्यः ऋते न मुक्तिर्भवति। सम्यग्दर्शन ज्ञान और चारित्रके विना मोक्ष नहीं होती है।

४। मधुभक्षणात् महती हिंसा भवति। मधुखानेसे बड़ी हिंसा होती है।

५। पयसः नवनीतं उत्पद्यते—दूधसे मक्खन पैदा होता है।

६। धनुषः शरं निर्गच्छति—धनुषसे वाण निकलता है।

७। किमतिदीनोद्धरणात् परं तपः—दीनोंके उद्धारसे अधिक बड़ा कौनसा तप है।

७। वाराणस्याः परं कालिकात्ता वर्तते—बनारसके बाद कलकत्ता है।

८। पतितं कुसुममपि दुर्भाग्यवशात् वज्राद् अपि निष्ठुरं भवति। गिरा हुआ फूल भी दुर्भाग्यके वशसे वज्रसे भी ज्यादा निष्ठुर हो जाता है।

९। पुण्यात् वज्रोऽपि कुसुमं जायते। पुण्यसे वज्रभी फूल हो जाता है।

१०। दारुणः अग्निः, अग्नेः उष्णता उत्पद्यते। काठसे आग, आगसे गरमी पैदा होती है।

सस्कृत बनाओ—

१। एक दूत स्वामिवचनसे राजसभामें आकर कहने लगा।

२। छलसे जो किसीको मारता है वह अवश्य ही पापी है।

३। राजा चार (चतुर्भिः) उपायोंसे शत्रुको वश करते हैं (न-
यंति) उनमें (तत्र) दानसे धनहानि, दंडसे बलहानि, भे-
दसे निंदा होती है इसलिये सामके सिवाय दूसरा कोई
अच्छा उपाय नहीं है।

४। इसतरह मंत्रिमुख्योंसे सम्मति लेकर राजाने कहा।

५। तृणसे हलकी (लघु) रुई [तूल] होती है और रुईसे भी
हलका याचक होता है। [ऊंगा (आनेष्यामि)।

६। मैं तुम्हारे लिये मुम्बई [मोहमयी] से बहुत सी किताबें ला-

७। मेरे [मदीय] वचनोंसे तुमने यह दुष्कर्म किया है इसलिये-

८। मोहसे लोग अति दुष्कृत्य कर्म भी करते हैं। [मुझसे वर मांगो

९। तिरस्कृत होनेपरभी स्वामीसे विरक्त न होओ। [ने चाहिये।

१०। तत्त्वज्ञान कठिन है इसलिये तत्त्वज्ञसे प्रयत्नपूर्वक तत्त्व जान-

११। दुर्जन स्वभावसे सज्जनोंकी निंदा करते हैं।

१२। मैंने बडे भारी वैयाकरणसे व्याकरण पढा है।

१३। जो लोग संसारसे डरते हैं उन्हें जिनधर्म सेवना चाहिये।

१४। तुमसे उसने पढा ? और तुमने किससे पढा ?।

१५। मकानोंसे गिरता हुआ जल अतिशोभता है।

साहित्य परिचय।

हिंदीमें अनुवाद करो—

गर्वेण मातृपितृबांधवमित्रवर्गाः सर्वे भवंति विमुखा विहितेन पुरुषात्१
वर्द्धस्व, जीव, जय, नंद, विभो! चिरं त्वमित्यादि चाटुवचनानि
विभाषमाणः। दीनाननो (दीनमुखः) मलिननिंदितरूपधारी लोभा-
कुलो भवति ॥२॥ चौरं कुलं विशति लोभवशेन मर्त्यो नो धर्मकर्म
विदधाति कदाचिद् (व) अद्यः॥३॥ तिष्ठंतु बाह्यधनधान्यपुरःसरार्थाः
सवर्धिताः प्रचुरलोभवशेन पंसा (जनेन) कायोऽपि नश्यति निजोऽय-

मिति प्रचिंत्य लोभारिं (मु) उग्रं (मु) उपहंति विरुद्धतत्त्वं ॥ ४ ॥
वरं हालाहलं पीतं सद्यः प्राणहरं विषं।
न पुनर्भक्षितं शश्वद् दुःखदं मधु (देहिनां-प्राणियोंको) ॥ ५ ॥
प्रमादेन (नापि) अपि यत् पीतं भवभ्रमणकारणं।
तद् (द) अश्नाति (खादति) कथं विद्वान् भीतचित्तो भवात् मधु ॥६॥
योऽश्नाति मधु निस्त्रिंशः (राक्षसः) तज्जीवास्तेन मारिताः।
येद् नास्ति खादकः कश्चिद् वधकः स्याद् (होगा) तथा कथं ॥७॥
दीनैर्मधुकरैर्वैगैः संचितं मधु कृच्छ्रतः।
यः स्वीकरोति निस्त्रिंशः सोऽन्यत् त्यजति किं नरः ॥ ८ ॥
संसारभीरुभिः सद्भिर्जिनाज्ञां परिपालितुं।
यावज्जीवं (जीवनभर) परित्याज्यं सर्वथा मधु मानवैः ॥ ९ ॥
प्रवर्तंते यतो दोषा हिंसारंभभयादयः।
सत्यमपि न वक्तव्यं तद् वचः सत्यशालिभिः ॥ १० ॥
इह दुःखं नृपादिभ्यः परत्र (परलोकमें) नरकादितः [नरकादेः]।
प्राप्नोति स्तेयत (चौर्यात्)स्तेन स्तेयं त्याज्यं सदा बुधैः ॥ ११ ॥
येऽपि (प्य) अहिंसादयो धर्मास्तेऽपि नश्यंति चौर्यतः।
मत्वा (त्वे) इति न त्रिधा ग्राह्यं परद्रव्यं विचक्षणैः ॥ १२ ॥
मातृस्वसृसुतातुल्या निरीक्ष्य परयोषितः।
स्वकलत्रेण (नार्या) यस्तोषश्चतुर्थं तदणुव्रतं ॥ १३ ॥
किं सुखं लभते मर्त्यः सेवमानः परस्त्रियं।
केवलं कर्म बध्नाति श्वभ्र (नरक) भूम्यादिकारणं ॥ १४ ॥
हिंसातो विरतिः सत्यं (म) अदत्तपरिवर्जनं।
स्वस्त्रीरतिः प्रमाणं [तृष्णा रोकना] च पंचधाऽणुव्रतं मतं ॥ १५ ॥
चेतो निवारितं येन धावमानं [मि] इतस्ततः।
किं न लब्धं सुखं तेन संतोषामृतलाभतः ॥ १६ ॥
निर्ग्रंथं (परिग्रहशून्य) निर्मलं तथ्यं पूतं (पवित्रं) जैनेंद्रशासनं १७

मैथुनं [स्त्रीसंगं] भजते मर्त्यो न दिवा [दिनमें] यः कदाचन।
दिवा मैथुननिर्मुक्तः स बुधैः परिकीर्तितः ॥ १८ ॥
संसारभयं [मा] आपन्नो मैथुनं भजते न यः ।
सदा वैराग्यं [मा] आरूढो ब्रह्मचारी स भण्यते ॥ १९ ॥
सप्तधा पृथिवीभेदात् नारकोऽपि प्रभिद्यते ।
अधोलोकस्थिताः सप्त पृथिव्यः परिकीर्तिताः ॥ २० ॥
आद्या [प्रथमा] रत्नप्रभा नाम द्वितीया शर्कराप्रभा ।
सिकतादिप्रभान्या च परा पंकप्रभा मता ॥ २१ ॥
धूमप्रभा ततो ज्ञेया परा तस्यास्तमःप्रभा ।
महातमा प्रभा च [चे] इति [तासां] नामानि (न्य) अनुक्रमं ॥ २२ ॥
रक्षार्थे प्रजया दत्तं षष्ठांशं [छठवां भाग] वेतनोपमं [नौकरीके समान]
गृह्णन् भृतकवत् मूढो राजाहं [मि] इति मन्यते ॥ २३ ॥
भ्रातॄन् हंति पितॄन् हंति बंधून् [न] अपि निरागसः [निरपराधिनः]
हंति [त्मा] आत्मानं [म] अपि क्रोधात् धिक् क्रोधं [म] अविचारकः २४
भोगान् धिग् धिग्, धनं धिग् धिग् धिग् धिग् (गिं) इंद्रियजं सुखं
धिग् धिग् परोपघातेन (परहिंसया) यद् (द) अन्यदपि जायते।२५।
न परं बंधनं प्रेम्णो न विषं विषयात् परं ।
न कोपाद् [द] अपरः शत्रुर्न दुःखं जन्मनः परं ॥ २६ ॥
विशुद्ध्यति दुराचारः सर्वोऽपि तपसा ध्रुवं ॥ २७ ॥
अंगारसदृशी नारी नवनीतसमा नराः ।
तत् (इसलिये) तत्सांनिध्यमात्रेण द्रवेत् (पुसां) हि मानसं ॥ २८ ॥
संलापवासहासादि तद् वर्ज्यं (त्याज्यं) पापभीरुणा ।
बालया, वृद्धया, मात्रा, दुहित्रा वा व्रतस्थया ॥ २९ ॥
भुक्तपूर्वं (मि) इदं सर्वं त्वयाऽऽत्मन् भुज्यते ततः [(प्राणियोंकेजन्म)
उच्छिष्टं (जूठा) त्यज्यतां राज्यं (म) अनंता हि (ह्य) असुभृद्भवाः
पाकं (पवित्रतां) त्यागं (दानं) विवेकं च वैभवं मानितां [म] अपि

कामार्त्ताः [कामपीडिताः] खलु मुचंति किं [म]अस्थैः स्वं च जीवितं
गुरुभक्तो भवाद् भातो विनीतो धार्मिकः सुधीः।
शांतस्वांतो [शांतचित्तः] हि [ह्य] अतंद्रालुः [परिश्रमी] शिष्टः शिष्योऽयं
(मि) इष्यते। ३२।

ऊपर लिखे हुये श्लोकोंमें वाच्यपरिवर्तन करो।

संस्कृत बनाओ—

मुनिश्रेष्ठ यशोधरने श्रेणिकसे कहा—नरनाथ! तुमको विपरीत बात न विचारनी चाहिये। पापविनाशार्थ जो तुमने आत्महत्या विचारी है सो अयोग्य है आत्महत्यासे थोडाभी पाप नष्ट नहीं होता है। इसकर्मसे पुण्यके स्थानमें पाप ही होता है। मगधेश! जो जीव अज्ञानवशसे तलवार विष आदि द्वारा आत्महत्या करते हैं कि हमारी (अस्मदीय) आत्मा कष्टोंसे मुक्त हो जायगी और सुख मिलेगा वे दुःख पाते हैं। आत्मघात से कदापि सुख नही मिलता। आत्मघातसे परिणाम संक्लेशमय होते हैं। संक्लेशमय परिणामोंसे अशुभकर्मबंध होता है और अशुभबंधसे नरक आदि दुर्गतियां मिलती हैं। राजन्! यदि तुम स्वहित चाहते हो तो इस अशुभ संकल्पको छोडो। अपनी आत्माकी निंदा करो। एवं इस पापकेलिये शास्त्रविहित प्रायश्चित्त आचरो। पापोंसे विनिर्मुक्त होनेका यही उपाय है।

मुनिराजसे यह उपदेश सुनकर महाराज श्रेणिक आश्चर्यान्वित होगये वे महारानीकी तरफ देखकर बोले "सुंदरि! यह क्या बात है? मुनिने मेरे मनोभिप्रायको कैसे जाना अहो! ये मुनि साधारण मुनि नही किंतु कोई महामुनि हैं" महाराजसे यह बात सुन कर चेलनाने कहा—नाथ! हस्तरेखाके समान समस्त पदार्थोंके जाननेवाले ये मुनिराज हैं। प्राणनाथ! भवदीयमनोवार्ता मुनिराने स्वकीय परमपवित्र ज्ञानसे जानी है। आप आश्चर्य न करें। मुनि-

राज आपके पूर्वभवोंको भी कह सक्ते हैं। यदि पूछनेकी इच्छा हो तो पूछिये" चेलनासे इसतरह अपूर्वमहिमान्वित ज्ञानधारी मुनिको जान कर श्रेणिकने अपने [स्वकीय] पूर्वभव पूछे।

प्रश्नमाला—

आत्महत्यया किं भवति? श्रेणिकेन किं विचारितं? पापनिर्मुक्तये क उपायः ? मुनिज्ञानं कीदृशं ? चेलनया कं प्रति किं मुक्तं ? श्रेणिकः किं श्रोतुमिच्छतिस्म। आत्महत्याफलं लिख्यतां।

षष्ठी विभक्ती।[22]

प्रथम पाठ।

स्वरांत पुलिंग

१ वीरस्य चरणं सेवते लक्ष्मीः—वीरके चरण लक्ष्मी सेवती है।

जंबूद्वीपस्य मंडनं भरतक्षेत्रं—जबूद्वीपका भूषण भरत क्षेत्र है।

मुने वचसा स धर्ममाश्रितः—मुनिके वचनसे उसने धर्मका आश्रयण किया

हरेः गर्जनं श्रुत्वा स भीतः—सिंहकी गर्जना सुनकर वह डर गया।

गुरो आज्ञया गृहं गतः—गुरुकी आज्ञासे घर गया।

विभावसोः तेजोऽसह्यं—अग्नि या सूर्यका तेज असह्य है। [विनाहा।

पितुर्नियोगात् तेन भार्या परिणीता—पिताकी आज्ञासे उसने भार्याको

दातुः सत्कारः कार्यः—दाताका सत्कार करना चाहिये।

२ बालकयोः पुस्तकानि अपहृतानि—दो लडकोंकी पुस्तकें चुराली हैं।

मुन्यो ग्रंथोऽयं—दो मुनियोका यह ग्रंथ है।

गुर्वो पुस्तकानि इमानि—दो गुरुओंकी ये पुस्तकें हैं।

पित्रोः आज्ञा अनुष्ठेया—माता पिताकी आज्ञा करनी चाहिये।

२२—संबंध अर्थमें षष्ठी विभक्ती होती है जैसे "वीरके चरण" यहा वीरका और चरणका अवयव अवयवी संबंध है सामान्यसे हिंदीमें जहा "का—की—के" बोले जाते हैं वहा संस्कृतमें छठी विभक्ती है।

३ जीवानां ज्ञानं महत् हितकरं—जीवोंको ज्ञान बडा हितकारी है।
खलानां वाणी असह्या भवति—दुर्जनोंकी वाणी असह्य होती है।
कवीनां रसवत् वचः—कवियोंका वचन रसीला होता है।
मुनीनां देहोऽपि अप्रियः—मुनियोंको देह भी प्यारा नहीं होता है।
गुरूणां मधुरं वाक्यं भवति—गुरुओंके मीठे वचन होते हैं।
शिशूनां चपलता दृश्या भवति—बचोंकी चंचलता देखने योग्य होती है।
भ्रातॄणां मनांसि प्रफुल्लानि—भाईयोंके मन प्रफुल्लित हैं।
उपकर्तॄणां उपकारो विधेयः—उपकारियोंका उपकार करना चाहिये।

हिंदी बनाओ—

१। अलंघ्यं हि गुरोर्वाक्यमपत्यैः (पुत्रैः) पथ्यकांक्षिभिः।
२। वित्तैरपि सुतो मदीयामाशामप्राप्य इमां भूमिमागंतुं न अलं।
३। दुहितुश्चित्तवृत्तिं स्वकीयचित्तवृत्तेः सदृशीं ज्ञात्वा भूपः हृष्टो [भवति स।
४। कामस्य वशं गतो जीवो हिताहितं न विचारयति।
५। सत्यंधरस्य अतिगुणी पुत्रो जीवंधरो जातः।

द्वितीय पाठ।

अन्यान्य पुंलिंग शब्द

नीचे लिखे शब्दोंसे वाक्य बनाओ—

जलमुचः	जलमुचोः	जलमुचां।
परिव्राजः	परिव्राजोः	परिव्राजां।
सम्राजः	सम्राजोः	सम्राजां।
पापकृतः	पापकृतोः	पापकृतां।
बुद्धिमतः	बुद्धिमतोः	बुद्धिमतां।
बलवतः	बलवतोः	बलवतां।
गायतः	गायतोः	गायतां।
सुहृदः	सुहृदोः	सुहृदां।

राज्ञः	राज्ञोः	राज्ञां।
मूर्ध्नः	मूर्ध्नोः	मूर्ध्नां।
अश्मनः	अश्मनोः	अश्मनां।
स्वामिनः	स्वामिनोः	स्वामिनां।
चंद्रमसः	चंद्रमसोः	चंद्रमसां।
विदुषः	विदुषोः	विदुषां।
ज्यायसः	ज्यायसोः	ज्यायसां।
सर्वस्य	सर्वयोः	सर्वेषां।
तस्य	तयोः	तेषां।
यस्य	ययोः	येषां।
कस्य	कयोः	केषां।
अस्य	अनयोः	एषां।
अमुष्य	अमुयोः	अमीषां।
मम	आवयोः	अस्माकं।
तव	युवयोः	युष्माकं।

हिंदी बनाओ—

१। परस्परदर्शनस्य उत्सुका इव सकलाः नरनाथविद्यास्तं राजानं
२। स्वस्वामिनो मनो वशीकर्तुं सा राज्ञी अलं। [प्रासबत्यः।
३। स राजा तमालतरुमूलगतस्य तपस्विनश्चरणौ मूर्ध्ना नमति स्म।
४। विशुद्धपाठः स महर्षिरपि आत्मनो योगं परिसमाप्य आशीर्वचांसि पठति स्म।
५। भवतः पुत्रोदयेऽपि जन्मांतरस्य अंतरायोऽस्ति।
६। इयं तव अग्रमहिषी अस्य नगरस्य एव देवांगदस्य वणिजः सुनंदा नाम्नी पुत्री वर्तते स्म।
७। रागादिदोषाणामगारो (घर) देवः प्राणिनां मोक्षदायको न।
८। अस्य विदुषोऽपि कश्चिद् विसंवादो न जातः।

९। अत्र विद्याप्रदायिनां का प्रत्युपक्रिया अस्ति ?
१०। ज्यायसो लघीयसो वा भ्रातुर्विलोकनं प्रीत्यै भवति यदि ते वियुक्ताश्चेद् पुनः किं ?
११। सुहृदां हितकामानां वचांसि विधेयानि भवंति।

संस्कृत बनाओ—

१। जब उस राजपुत्रका जन्म हुआ तब वैरियोंके हृदय भी विक- [सित हो गये।
२। विद्वानोंका सत्कार विद्वान् ही करते हैं।
३। जो जिसके गुण नहीं जानता वह उसकी हमेशा निंदा करता है।
४। मेरा मन संसारके भोगोंसे विरक्त हो गया है।
५। हमारा यश चिरस्थायी हो ऐसी भावना सज्जनोंकी होती है।
६। जयशाली, गुणोंसे भूषित, गुरुवंशसमुद्भूत राजाके थोडासा [मनाक्] भी मद नहीं हुआ।
७। चंद्रकान्ति नामक दैत्यने पृथिवीपतिके पुत्रको हरा था।
८। हे पुत्र ! तू मेरे यश, सुख और तेजका कारण था।
९। संपूर्ण देहियोंको अनिष्टका संयोग और इष्टका वियोग होता है।
१०। चंद्रमाका प्रकाश ठंडा और मनको मोदक होता है।
११। पत्थरके आघातसे शिर फूटगया [भिन्नं]

तृतीय पाठ।

स्त्रीलिंग

नीचे लिखे शब्दोंसे वाक्य बनाओ—

कन्यायाः	कन्ययोः	कन्यानां।
बालायाः	बालयोः	बालानां।
मत्याः, मतेः	मत्योः	मतीनां।
नद्याः	नद्योः	नदीनां।
तस्युष्याः	तस्युष्योः	तस्युषीणां।

रेण्वाः	रेण्वोः	रेणूनां।
धेन्वाः	धेन्वोः	धेनूनां।
बध्वाः	बध्वोः	बधूनां।
चम्वाः	चम्वोः	चमूनां।
मातुः	मात्रोः	मातॄणां।
दुहितुः	दुहित्रोः	दुहितॄणां।
ऋचः	ऋचोः	ऋचां।
त्वचः	त्वचोः	त्वचां।
विपदः	विपदोः	विपदां।
परिषदः	परिषदोः	परिषदां।
वीरुधः	वीरुधोः	वीरुधां।
क्षुधः	क्षुधोः	क्षुधां।
योषितः	योषितोः	योषितां।
सरितः	सरितोः	सरितां।
सर्वस्याः	सर्वयोः	सर्वासां।
अपरस्याः	अपरयोः	अपरासां।
अन्यस्याः	अन्ययोः	अन्यासां।
तस्याः	तयोः	तासां।
कस्याः	कयोः	कासां।
अस्याः	अनयोः	आसां।
अमुष्याः	अमुयोः	अमूषां।

चतुर्थ पाठ।

नपुंसकलिंग

नीचे लिखे शब्दोंसे वाक्य बनाओ—

पुष्पस्य	पुष्पयोः	पुष्पाणां।
धनस्य	धनयोः	धनानां।

दानस्य	दानयोः	दानानां।
धारिणः	धारिणोः	धारीणां।
मधुनः	मधुनोः	मधूनां।
सानुनः	सानुनोः	सानूनां।
श्रीमतः	श्रीमतोः	श्रीमतां।
गुणवतः	गुणवतोः	गुणवतां।
शर्मणः	शर्मणोः	शर्मणां।
कर्मणः	कर्मणोः	कर्मणां।
पयसः	पयसोः	पयसां।
चेतसः	चेतसोः	चेतसां।
ज्योतिषः	ज्योतिषोः	ज्योतिषां।
हविषः	हविषोः	हविषां।
धनुषः	धनुषोः	धनुषां।
सर्वस्य	सर्वयोः	सर्वेषां।
अपरस्य	अपरयोः	अपरेषां।
तस्य	तयोः	तेषां।
यस्य	ययोः	येषां।
कस्य	कयोः	केषां।
अस्य	अनयोः	एषां।
अमुष्य	अमुयोः	अमीषां।

हिंदी बनाओ—

१। असंख्यजीवानां घातात् एको मधुनः कणो जायते।

२। भ्रमरा एकस्य एकस्य पुष्पस्य रसमादाय (लेकर) मधु एकत्र [कुर्वंति।

३। जना दानस्य प्रभावेण स्वर्गसुखमनुभवंति।

४। चेतसो मलिनतया अशुभकर्मणां बंधो भवति।

५। हविषो धूम्र ऊर्ध्वं वेगेन गच्छति।

पंचम पाठ।

षष्ठी विभक्तीका व्यवहार।

१। स राजपुत्रस्तस्य योद्धुर्वचोभिः क्रुद्धः सन् एकस्य करात् धनुर्हरति स्म।

उस राजपुत्रने उस योद्धाके वचनोंसे क्रुद्ध होते हुये एकके हाथसे धनुष छीन लिया।

२। पूर्वजन्मकृतपुण्यकर्मणः पाकशासनसमानतेजसः। चक्ररत्नमथ तस्य खंडितारातिचक्रमुदपादि चक्रिणः॥

अनंतर–पूर्वजन्ममें किये हैं पुण्यकर्म जिसने ऐसे तथा इंद्रके समान तेजवाले उस चक्री (चक्रवर्ती) के खंडित किया है शत्रुचक्र (समूह) जिसने ऐसा चक्ररत्न उत्पन्न हुआ।

३। कामकल्पवपुषं नगरीं प्रविशंतं तं सम्राजं वीक्ष्य पुरसुंदरीणां निवहः क्षुब्धः।

कामके तुल्य शरीरवाले, नगरीमें प्रवेश करते हुये उस सम्राट्को देखकर नगरकी सुंदरियोंका समूह क्षुब्ध होगया।

४। जनैः संकुले मार्गे गच्छंत्याः कस्याश्चित् कृशांग्या हारलतिका त्रुटिता।

लोगोंसे व्याप्त मार्गमें चलती हुई किसी कृश अंगवाली स्त्रीकी हारलता टूटगई।

५। क्रम-सरोज-नताया जनताया रक्षकः स भूपो राजमंदिरं विशति स्म।

चरण कमलोंमें नम्रहुये जनसमुदायका रक्षक वह राजा राजमंदिरमें प्रवेश करता हुआ।

६। नव-नवांकुर-लीनामलीनां संहतिं द्रष्टुं विरहिणो न समर्थाः।

नये नये अंकुरोंमें लीन भ्रमरोंके समूहको देखनेके लिये विरही समर्थ न थे।

७। वियोगिनीनां हृदि कलिकालं मधुकरं धारयंती केसर-तरोः कलिकाऽलंव्यथां कृतवती।

वियोगिनियोंके हृदयमें कलियुगके समान काले भ्रमरको धारण करती हुई केसर वृक्षकी कली खूब पीडा करती हुई।

८। हे मानिनि ! मम तांतं मानसं मधुदिनानि नितांतं तापयंति।	हे मानशीले ! मेरे क्षात मनको वसंतऋतुके दिन अत्यंत संतप्त करते हैं।
९। अविचारितरम्यं हि रागांधानां विचेष्टितं।	रागांधोंका काम विना विचारे रमणीय होता है।
१०। अस्वप्नपूर्वं जीवानां न हि जातुश्शुभाशुभं।	जीवोंका शुभ, अशुभ विना स्वप्नके नहीं होता।
११। नृणां विपदः परिहाराय शोको न उचितः।	मनुष्योंको विपत्ति दूर करनेके लिये शोक करना ठीक नहीं है।
१२। जीविताद् तु पराधीनात् जीवानां मरणं वरं।	पराधीन जीवनसे तो प्राणियोंका मरना अच्छा है।
१३। अर्थिनां जीवनोपायमपायं चाभिमाविनां। कुर्वंतः खलु राजानः सेव्या हव्यवहा यथा।	याचकोंके जीवनके उपायको शत्रुओंके नाशको करनेवाले राजा लोग होमाग्निके समान सेवनीय हैं।
१४। पित्तज्वरवतः क्षीरं तिक्तमेव भासते।	पित्तज्वरवालेको दूध कडुवा ही लगता है।

संस्कृत बनाओ—

१। अनुनय महात्मा लोगोंके माहात्म्यको बढाता है।

२। माताओंके स्थूलप्राण पुत्र होते हैं।

३। तत्त्वज्ञानके अभावमें रागादिक निरंकुश हो जाते हैं।

४। संपत्ति और विपत्तियोंकी प्राप्ति किसी छलसे होती है।

५। स्त्रियोंका भूषण लज्जा है उद्दण्डता नहीं।

६। नदियोंके जलसे समुद्रको विकार नहीं होता।

७। प्राणियोंके मनोरथ करोड [कोटि] से भी अधिक होते हैं।

१–पृष्ठ २२-२३ की टिप्पणी देखो।

८। संपत्तिके लाभका फल विद्वानोंका पोषण करना है।

९। जो स्वामीके गुप्तमंत्रको प्रकट करदेता है वह अवश्य ही नरक को जाता है।

१०। जिस आदमीके धन है वही बडा है क्योंकि सम्पूर्ण गुण सुवर्णका आश्रय करते हैं।

११। मनुष्यका रूप विद्या है विद्या गुरुओंकी गुरु है विद्याके अभावमें मनुष्य पशु है।

१२। जिस जिसको देखो उस उसके सामने दीन वचन मत कहो।

१३। बहुत कहनेसे क्या! राजाके समक्ष ही हम दोनों की परीक्षा होगी।

१४। सुखके अनंतर दुःख, दुःखके अनंतर सुख होता है ऐसी संसारकी रीति है।

१५। पक्षियोंका भूषण एक चातक है क्योंकि या तो वह पिपासासे मर जाता है या फिर प्रथम मेघकी ही बूंद पीता है।

१६। हे विद्वन्! शोक मतकर। तेरा नाश नहीं है और संसार सिंधुके तरनेका उपाय है।

१७। सुर असुरोंसे नमस्कृत श्रीजिनेंद्रको नमस्कार कर गृहस्थोंके व्रतोंको कहूंगा।

१८। शोकके वशीभूत हुये आदमीका सुख चला जाता है।

१९। जो भव्यकमलोंको हर्ष देती है, अज्ञान अंधकारके प्रभावको हरती है, संपूर्ण पदार्थोंको प्रकाशित करती है ऐसी जिनेंद्रकी वाणी हमलोगोंका कल्याण करे।

२०। इन्द्रियविषय देवताओंको भी दुख देता है।

२१। जो जीव-देव, देवेंद्र, चक्रवर्तियोंके भोगोंसे तृप्त नहीं हुआ वह सामान्य मनुष्यके भोगोंसे कैसे तृप्त हो सक्ता है।

साहित्य परिचय।

सूचना–श्लोकोंका अर्थ विचारते समय विद्यार्थियोंको चाहिये कि वे सबसे पहिले श्लोकोंके संधिसे जुड़े हुये पदोंको अलहदा करें उसके बाद उनकी विभक्ती विभक्तियोंका अर्थ, धातु, धातुसे आये हुये प्रत्यय और उनके अर्थ तथा एक दूसरेके साथ उनका संबंध विचारें और तब हिंदी बनावें।

तव रूपस्य सौंदर्यं दृष्ट्वा तृप्तिं (म) अनापिवान् (अप्राप्तः)।
द्व्यक्षः (द्विनेत्रः) शक्रः सहस्राक्षो बभूव (जातः) बहुविस्मयः ॥ १ ॥
आपगा (नदी) सागरस्नानं (मु) उच्चयः (संग्रहः) सिकताऽश्मनां।
गिरिपातोऽग्निपातश्च लोकमूढं निगद्यते ॥ २ ॥
प्रहतं मरणेन जीवितं जरसा (बुढापेसे) यौवनं (मे) एव पश्यति।
प्रतिजंतु, जनस्तद् (द) अपि (प्य) अहो स्वहितं मंदमतिन पश्यति ॥३॥
न संति (हैं) बाह्या मम केचनार्था भवामि तेषां न कदाचन (ना) अहं।
इत्थं विनिश्चित्य, विमुंच बाह्यं, स्वस्थः सदा त्वं भव भद्र! मुक्त्यै ॥४॥
स्वयं कृतं कर्म यद् (दा) आत्मना पुरा, फलं तदीयं लभते शुभाशुभं।
परेण दत्तं यदि लभ्यते स्फुटं, स्वयं कृतं कर्म निरर्थकं तदा ॥ ५ ॥
निजार्जितं कर्म विहाय देहिनो, न कोऽपि कस्यापि ददाति किंचन।
विचारयन्(न्ने) एवं (म) अनन्यमानसः, परो ददाति (ती) इति विमुंच शेमुषीं (बुद्धि) ॥ ६ ॥ शरीरतः कर्तुं (म) अनंतशक्तिं विभिन्नं (मा) आत्मानं (म) अपास्तदोषं। जिनेंद्र! कोपाद् (दि) इव खड्गयष्टिं, तव प्रसादेन मम (मा) अस्तु (हो) शक्तिः ॥ ७ ॥ एकेंद्रियाद्या यदि देव! देहिनः, प्रमादतः संचरता इतस्ततः। क्षता विभिन्ना मिलिता निपीडितास्तद् (द) अस्तु मिथ्या दुरनुष्ठितं (दुष्कार्य) तदा ॥ ८ ॥ विमुक्तिमार्गप्रतिकूलवर्तिना मया कषायाक्षवशेन दुर्धिया। चारित्रशुद्धेर्यद् (द) अकारि लोपनं, तद् (द) अस्तु मिथ्या मम दुष्कृतं प्रभो ॥ ९ ॥
अतिक्रमं यं विमतेर्व्यतिक्रमं, जिन! (ना) अतिचारं सुचरित्रकर्मणः।
व्यधास् [किया हो] (म) अनाचारं (म) अपि प्रमादतः, प्रतिक्रमं

तस्य करोमि शुश्रूषां ॥ १० ॥ अर्हन् मतःशुद्धिविधिंगतिरूपं, व्यतिकरं शीलवृतेर्विलंघनं । प्रभो ! ऽ(अ)तिचारं विषयेषु [विषयमें] वर्तनं, वदंति (त्य) अनाचार (मि) इह (इन) आतिसक्तितां ॥ ११ ॥ यद् (द) अर्थमात्रापदवाक्यहीनं, मया प्रमादाद् यदि किंचन (नो) उक्तं । तत् मे क्षमित्वा विदधातु (करे) देवी, सरस्वती केवलबोधलब्धिं ॥ १२ ॥

सुखितस्य दुःखितस्य च संसारे [संसारमें] धर्म एव तव कार्यः ।
सुखितस्य तदभिवृद्ध्यै दुःखभुजस्तदुपघाताय ॥ १३ ॥
धर्मः सुखस्य हेतुर्हेतुर्न विरोधकः स्वकार्यस्य ।
तस्मात् सुखभंगभिया मा भूः [मतहो] धर्मस्य विमुखस्त्वं ॥ १४ ॥
कृत्वा धर्मविघातं विषयसुखानि (न्य) अनुभवंति ये मोहात् ।
आच्छिद्य [काटकर] तरुं मूलात् फलानि गृह्णंति [लेते हैं] ते पापाः ॥ १५ ॥
स धर्मो यत्र न (ना) अधर्मस्तत् सुखं यत्र न (ना) असुखं ।
तत् ज्ञानं यत्र न (ना) अज्ञानं सा गतिर्यत्र न (ना) आगतिः ॥ १६ ॥
अर्थिनो धनं [म] अप्राप्य धनिनोऽपि [प्य] अवितृप्तितः ।
कष्टं सर्वेऽपि सीदंति परं [मे] एको मुनिः सुखी ॥ १७ ॥
पलित [श्वेतकेश] च्छलेन देहात् निर्गच्छति शुद्धिरेव तव बुद्धेः ।
कथं [मि] इव परलोकार्थं जरी वराकस्तदा स्मरति ॥ १८ ॥
प्रज्ञा [ज्ञ] एव दुर्लभा सुष्ठु, दुर्लभा साऽन्यजन्मनि [दूसरे भवमें] ।
तां प्राप्य ये प्रमाद्यंति ते शोच्याः खलु धीमतां ॥ १९ ॥ [(किया)
कंठस्थकालकूटोऽ [विष] पि शंभोः किं [म] अपि न (ना) अकरोत् ।
सोऽपि दंदह्यते [जलाया जाता है] स्त्रीभिः, स्त्रियो हि विषमं विषं ॥ २० ॥
लोकद्वयहितं वक्तुं श्रोतुं च सुलभाः पुरा ।
दुर्लभाः कर्तुं, [म] अद्यत्वे [आजकल] वक्तुं श्रोतुं च दुर्लभाः ॥ २१ ॥
निर्धनत्वं धनं येषां मृत्युरेव हि जीवितं ।
किं करोति विधिस्तेषां सतां ज्ञानैकचक्षुषां ॥ २२ ॥
जीविताशा धनाशा च येषां तेषां विधिर्विधिः ।

किं करोति विधिस्तेषां, येषां [भा] आशा निराशता [निराशा होगई है]२३
परां कोटिं समारूढौ द्वौ [द्वावे] एव स्तुतिनिंद्योः ।
यस्त्यजेत् [छोड़दे] तपसे चक्रं यस्तपो विषयाशया ॥ २४ ॥
अपि रोगादिभिर्वृद्धैर्न मुनिः खेदं [मू] ऋच्छति [गच्छति] ।
उडुपस्थस्य [नावमें बैठे हुयेको] कः क्षोभः प्रवृद्धेऽपि नदीजले ॥२५॥
पापाद् दुःखं धर्मात् सुखं [मि] इति सर्वजनसुप्रसिद्धं [मि] इदं ।
तस्माद् विहाय पापं, चरतु सुखार्थी सदा धर्मं ॥ २६ ॥

संस्कृत बनाओ ।

मुनिराज यशोधरके मुखसे अपने पूर्वभवके वृत्तांतको सुनकर राजा श्रेणिकको जातिस्मरण होगया। जातिस्मरणके प्रभावसे शीघ्र ही उनने पूर्वभवका वास्तविक हाल जान लिया। वे मुनिराजके गुणोंकी प्रशंसा कर ऐसा विचार करने लगे "अहो ! मुनि यशोधरका ज्ञान धन्य है। उत्तमक्षमा इनकी प्रशंसनीय है। परीषह जय तो लोकोत्तर है। इनके प्रत्येक गुणोंसे जाना जाता है (ज्ञायते) कि ये अद्वितीय मुनि हैं मुनियोंके शिरोमणि हैं। इनके आगमज्ञानको भी धन्य है। इनके प्रतिपादित पदार्थ सत्य हैं पदार्थोंका जिस रीतिसे स्वरूप कहा गया है ये वैसा [तादृशं] ही कहते हैं। जीवादितत्त्वोंसे भिन्न तत्त्व मिथ्या हैं"।

इसके बाद [अथ] श्रेणिकने श्रावकके व्रत ग्रहण किये और पट्टराज्ञी चेलना सहित विनयसे मुनिके चरणोंको नमस्कार कर अपने राजमंदिरकी तरफ प्रस्थान किया। कदाचित् बौद्धसाधुओंको समाचार मिला कि महाराज श्रेणिकने किसी मुनिके उपदेशसे अन्य धर्मको धारण कर लिया है उनके परिणाम बौद्धधर्मसे विचलित होगये हैं। तो वे बौद्धसाधु महाराजके पास आकर धर्मका उपदेश देने लगे। उनके उपदेशसे जिसतरह जलके न होनेसे नवीन लता

मुरझा जाती है उसीतरह श्रेणिकका अभिनव अन्य धर्मका ज्ञान मुरझा गया। उसका चित्त संशययुक्त होगया।

कदाचित् मंडलेश्वर श्रेणिकने मुनियोंकी परीक्षाके लिये एक गढा खुदवाया। उसमें [तत्र] हड्डी [अस्थि] चर्म आदि अपवित्र चीजें रखदीं [नि-क्षिप] और रानीसे जाकर कहा—

"प्रिये ! मैं अब उस धर्मका भक्त होगया हूं इसलिये कदाचित् कोई मुनि उस धर्मके आवें तो उन्हें भक्तिसे अहार देना"।

ऊपर लिखे गद्यमें प्रश्नोत्तर माला रचो।

सप्तमी विभक्ती।

प्रथम पाठ।

१। वादे वादे जायते तत्त्वबोधः—फिरफिर वाद होनेपर यथार्थ ज्ञान होता है।

अतत्त्वज्ञेऽपि तत्त्वज्ञैर्भवितव्यं दयालुभिः—मिथ्या तत्त्व जाननेवालों पर भी तत्त्वज्ञोंको दयालु होना चाहिये।

कूपे पातुमिच्छन् शिशुर्न केन अपि उपेक्ष्यते—कुएमें गिरनेकी इच्छा करनेवाला बच्चा किसीसे भी उपेक्षित नही होता है।

अहौ विषं तिष्ठति—सांपमें विष होता है।

मुनौ वयं विश्वस्ताः—मुनिमें हम विश्वासू हैं।

गुरौ भक्तिर्गुरौ भक्तिर्गुरौ भक्तिः सदाऽस्तु—सर्वदा गुरुमे भक्ति हो।

पशौ कृपा उचिता—पशुमें दया करना योग्य है।

दातरि कृतज्ञता विधेया—दातामें कृतज्ञता करनी चाहिये।

पितरि शिशवोऽनुरक्ताः—पितामें लडके अनुरक्त हैं।

२। वृक्षयो पुष्पाणि शोभंते—दो वृक्षोंके फूल शोभते हैं।

ग्रामयोः पंडिता निवसंति—दो गावोंमें पंडित रहते हैं।

मुन्यो विद्वांसो भक्तिमंतः—दो मुनियोंमें विद्वानलोग भक्तिवाले हैं।

१-हिंदीमें जहां 'में, पै, पर' अर्थ होता है वहा सातवी विभक्ती होती है।

गिर्योः बहवो वानराः—दो पहाडोंपर बहुत बंदर हैं।

गुर्वोः शिष्या अनुरक्ताः—दो गुरुओंमें शिष्य अनुरक्त हैं।

शिश्वो बांधवाः स्निग्धाः—दो लडकोंमें बाधव स्नेही हैं।

दातृगृहीत्रोः दाता श्रेष्ठः—दाता और गृहीतामें दाता श्रेष्ठ है।

पित्रोः को महान्—माता और पितामें कौन बडा है।

३। खलेषु उपकारो न कार्यः—दुर्जनोमें उपकार न करे।

विवादेषु अहं साक्षी भवामि—विवादमें मैं साक्षी [गवाही] दूंगा।

अद्रिषु हिमवान् उच्चः—पहाडोंमें हिमालय ऊंचा है।

मुनिषु क्षमावान् श्रेष्ठः—मुनियोंमें क्षमाधारी मुनि अच्छा है।

शिशुषु विश्वासो न विधेयः—लडकोंमें विश्वास न करना चाहिये।

शत्रुषु अपि क्षमा विधेया—शत्रुओंमें भी क्षमा करना चाहिये।

भ्रातृषु को बलवान्—भाईयोंमें कौन बलवान है।

पितृषु भक्तिः कार्या—पिताओंमें भक्ति करना चाहिये।

हिंदी बनाओ—

१। दुष्प्रवेशे ऽपि पुराणसागरे यथाशक्ति यतिष्ये।

२। फलकाले समागते किं पुष्पसमुदायः प्राप्तो भविष्यति ?।

३। तत्र सर्पकुलेषु द्विजिह्वता, मुनिषु ध्यानतत्परता दृश्यते।

४। स राजा समीपस्थे जलगर्ते पयः परिपीय उत्तरंतं गोगणं पश्य-

५। यः हितकरे मार्गे न प्रवर्तते सोऽवश्यं दुःखं लप्स्यते। [तिस्म।

६। सुखं [मि] इष्टसमागमे यथा विरहे तस्य तथैव च [चा] असुखं।

७। चारुचेताः स मुनिमार्गे चेतसा विशति स्म।

८। देव ! देवोचितस्थाने सुगंधिपवने वने।

मुनिरेकः समायातः शब्दार्थाभ्यां मनोहरे॥

९। दृष्टो [दृश्यते स्म] च मुनिस्तेन स्थितो नीलशिलातले।

१०। दैवसाध्ये पदार्थे शोको न युक्तः। [गमिष्यति।

११। सर्वमनोऽभिरामे सूनौ [पुत्रे] राज्यभारं निक्षिप्य नगरे त्वं

संस्कृत बनाओ—

१। प्रसूति समय प्राप्त होनेपर शुभदिनमें रानीने पुत्र जना।

२। घरकी छत्त [गृहपृष्ठ] पर बैठे हुये राजाने आकाशसे गिरती हुई विजुली देखी उसको देखकर वह विषयोंमें विरक्तबुद्धि होगया।

३। उसने श्रीप्रभ मुनिके चरणसमीपमें तप करके मुक्ति पाई।

४। उसने द्वीपोंमें दुर्गोंमें देशोंमें कोई भी वैरी नहीं छोड़ा।

५। दैव अनुकूल होनेपर क्या अनुकूल नहीं होता।

६। धार्मिक राजाके रक्षा करनेपर पृथ्वी बढ़ती है।

७। मन सांसारिक पदार्थोंमें स्वयं चला जाता है।

८। तत्त्वज्ञानसे उभयलोकमें सुख मिलता है।

९। दीपकोंसे प्रकाशित देशमें अंधकार नहिं जा सक्ता।

१०। सज्जनलोग यशरूपी कायमें प्रीति करते हैं पौद्गलिक शरीरमें [नहीं।

११। अविवेकी लोग विपाक होनेपर हितकर वाक्योंका विश्वास करते हैं [विश्वसंति]।

द्वितीय पाठ।

अन्यान्य पुंलिंग शब्द।

नीचे लिखे शब्दोंसे वाक्य बनाओ—

जलमुचि	जलमुचोः	जलमुक्षु।
परिव्राजि	परिव्राजोः	परिव्राट्सु।
सम्राजि	सम्राजोः	सम्राट्सु।
पापकृति	पापकृतोः	पापकृत्सु।
बुद्धिमति	बुद्धिमतोः	बुद्धिमत्सु।
बलवति	बलवतोः	बलवत्सु।
गायति	गायतोः	गायत्सु।
सुहृदि	सुहृदोः	सुहृत्सु।

राज्ञि	राज्ञोः	राजसु।
मूर्ध्नि	मूर्ध्नोः	मूर्धसु।
अश्मनि	अश्मनोः	अश्मसु।
स्वामिनि	स्वामिनोः	स्वामिषु।
चंद्रमसि	चंद्रमसोः	चंद्रमःसु।
विदुषि	विदुषोः	विद्वत्सु।
ज्यायसि	ज्यायसोः	ज्यायःसु।
सर्वस्मिन्	सर्वयोः	सर्वेषु।
तस्मिन्	तयोः	तेषु।
यस्मिन्	ययोः	येषु।
कस्मिन्	कयोः	केषु।
अस्मिन्	अनयोः	एषु।
अमुष्मिन्	अमुयोः	अमीषु।
मयि	आवयोः	अस्मासु।
त्वयि	युवयोः	युष्मासु।

संस्कृत बनाओ—

१। विद्वानोंमें भक्ति, गुणियोंमें प्रमोद, क्लिष्टजीवोंमें दया, शत्रुओंमें माध्यस्थभाव सर्वदा करना चाहिये।

२। सज्जन-सुखमें, दुःखमें, वैरीमें, मित्रमें, संयोगमें, वियोगमें और जंगलमें समान भाव रखते हैं।

३। मैंने अपनेमें ही पुण्य पाप दोनों देखे।

४। स्थायी आत्मामें अपनी बुद्धि स्थिर करो।

५। इस कार्यकारण रूप प्रवंधके अनादि होनेपर जिस पदार्थसे तुम दुःख पाते हो उसको छोड़ दो।

६। तेजोनिधि, कल्याणधाम, सुवर्णनाभ नामवाले पुत्रमें युवराजपद व्यवहृत कर [प्रवर्त्य] वह राजा भोगोंका अनुभव करने लगा।

७। उस सम्राट्के रक्षक होनेपर प्रजा सुखी हुई। [ई।
८। दूसरे आदमियोंमें तो क्या? देवताओंमें भी अभ्युदय नित्य नहीं
९। प्रणयी आदमीमें कोप ठीक नहीं है क्योंकि पश्चात्ताप होता है।
१०। कृतार्थ! तुम्हारे दीखनेपर सब कार्य सफल होते हैं।

हिंदी बनाओ—

१। स कृती रात्रिषु तरुमूलं आस्थितो घोरघनांधकारिणि वर्षाकाले वारिधाराः सहते स।
२। तमसूचिसदृशैः रविकिरणैः पीडितोऽपि स योगतो न चलति स। सत्यं-"स्थिरा हि संतः करणीयवस्तुनि"।
३। "वसुधातले प्रवृत्तैर्नृपसैन्यैर्मदीयो महिमा खंडितः" इति लज्जया इव नभः अश्वखुराघातैः प्रवृद्धे रजसि तिरोभवति स।
४। परिचितेऽपि महीश्वरे पतंति नगरनारीनयनानि तोषं न गच्छं-
५। सुरमुक्तानि पुष्पाणि पतंति स महीनाथस्ये। [ति स।
६। जिनजन्मदिवसे देवसदसि मणिघंटिकाः करताडनं विना शब्दं कृतवत्यः। [जिनं हृतवती।
७। इंद्राणी जिनमातृवक्षसि मायया निर्मितं शिशुं निधाय [रक्षकः]
८। हे प्रभो! यदीये हृदयसरसि त्वदीयं चरणकमलं प्रतिदिनं स्फुरति स एव अस्मिन् साररहिते संसारे सारवान्। [संतो भवंति।
९। ईश्वर! त्वदीयचरणसमीपं आगताः पशवोऽपि त्वयि भक्ति-
१०। तस्मिन् नृपे मही रक्षितरि अखिलेषु अपि जंतुषु अकालमरणं न जातं।

तृतीय पाठ।

स्त्रीलिंग।

नीचे लिखे शब्दोंसे वाक्य बनाओ—

कन्यायां	कन्ययोः	कन्यासु।
बालायां	बालयोः	बालासु।

मत्यां, मतौ	मत्योः	मतिषु।
ऊर्म्यां, ऊर्मौ	ऊर्म्योः	ऊर्मिषु।
नद्यां	नद्योः	नदीषु।
तस्थुष्यां	तस्थुष्योः	तस्थुषीषु।
रेण्वां, रेणौ	रेण्वोः	रेणुषु।
धेन्वां, धेनौ	धेन्वोः	धेनुषु।
वध्वां	वध्वोः	वधूषु।
चम्वां	चम्वोः	चमूषु।
मातरि	मात्रोः	मातृषु।
दुहितरि	दुहित्रोः	दुहितृषु।
स्रुचि	स्रुचोः	स्रुक्षु।
त्वचि	त्वचोः	त्वक्षु।
विपदि	विपदोः	विपत्सु।
परिषदि	परिषदोः	परिषत्सु।
वीरुधि	वीरुधोः	वीरुत्सु।
क्षुधि	क्षुधोः	क्षुत्सु।
योषिति	योषितोः	योषित्सु।
सरिति	सरितोः	सरित्सु।
सर्वस्यां	सर्वयोः	सर्वासु।
अपरस्यां	अपरयोः	अपरासु।
अन्यस्यां	अन्ययोः	अन्यासु।
तस्यां	तयोः	तासु।
यस्यां	ययोः	यासु।
कस्यां	कयोः	कासु।
अस्यां	अनयोः	आसु।
अमुष्यां	अमुयोः	अमूषु।

चतुर्थ पाठ।

नपुंसक लिंग

कुसुमे	कुसुमयोः	कुसुमेषु।
दाने	दानयोः	दानेषु।
वारिणि	वारिणोः	वारिषु।
मधुनि	मधुनोः	मधुषु।
सानुनि	सानुनोः	सानुषु।
श्रीमति	श्रीमतोः	श्रीमत्सु।
गुणवति	गुणवतोः	गुणवत्सु।
शर्मणि	शर्मणोः	शर्मसु।
कर्मणि	कर्मणोः	कर्मसु।
पयसि	पयसोः	पयःसु।
चेतसि	चेतसोः	चेतःसु।
ज्योतिषि	ज्योतिषोः	ज्योतिःषु।
हविषि	हविषोः	हविःषु।
धनुषि	धनुषोः	धनुःषु।
सर्वस्मिन्	सर्वयोः	सर्वेषु।
तस्मिन्	तयोः	तेषु।
कस्मिन्	कयोः	केषु।
यस्मिन्	ययोः	येषु।
अमुष्मिन्	अमुयोः	अमीषु।
अस्मिन्	अनयोः	एषु।

ऊपर लिखे शब्दोंसे वाक्य रचना करो—

पंचम पाठ।

सप्तमी विभक्तीका व्यवहार।

१ भूतपतिपदेषु भक्तिः, सत्यतत्त्वे भावनाः, विषयसुखेषु विरक्तिः, प्राणिवर्गे मित्रता, श्रुतौ, शमे, यमे च शक्तिः, अन्यदोषकथने मूकता करणीया।	ईश्वरके चरणोंमें भक्ति, वास्तविक पदार्थोंमें चिंतवन, इंद्रियसुखोंमें विरागीपना, जीवोंके समूहमें मित्रता, शास्त्र, शांति और संयममें समर्थता दूसरेके दोषोंके कहनेमें गूंगापन करना चाहिये।
२ कोपो दृशोः रागं, वपुषि कंपं, चित्ते वैक्लव्यं, बुद्धौ मालिन्यं विदधाति, अतो बुद्धिमता स त्याज्यः।	क्रोध-आखोंमे लालिमा, शरीरमें कपकपी, मनमे विक्लवपना, बुद्धिमे मलीनता करता है इसलिये बुद्धिमानसे वह छोडने योग्य है।
३ दोषेषु सत्सु यदि कोऽपि ददाति शापं, सत्यं ब्रवीति (त्य) अयं [मि] इति प्रविचिंत्य सह्यं। दोषेषु [ष्व] असत्सु यदि कोऽपि ददाति शापं मिथ्या ब्रवीति [त्य] अयं [मि] इति प्रविचिंत्य सह्यं॥	दोषोंके रहनेपर यदि कोई गाली दे तो यह सत्य कहता है ऐसा विचार कर सह लेना चाहिये। दोषोंके न रहनेपर यदि कोई गाली दे तो यह झूठ बोलता है ऐसा समझ सह लेना योग्य है।
४ माने कृते यदि भवेद् [दि] इह कोऽपि लाभः, यदि [द्य] अर्थहानिरथ काचन मार्दवे स्यात्। तदा मानः सफलः॥	मान करनेपर यदि यहा कोई लाभ होता और नम्रता करनेपर कोई धनकी हानि होती तो मान करना सफल होता।
५ इति मानदोषं चेतसि प्रविचिंत्य गुणदोषविचारदक्षोऽहंकारं न आचरति।	इसतरह मानकरनेके दोषको दिलमें विचार कर गुण दोषके विचार करनेमें चतुर आदमी अहंकार नहीं करता है।
६ नरो निकृत्या मलिनर्निंदितरूपासु नारीषु भवं लभते।	मनुष्य मायासे मलिन और निंदित रूपवाली स्त्रियोंमें जन्म लेता है।

७ यथा वारिणि प्रच्छादितं वर्चो प्रकाशमुपगच्छति तथा एव लोके कपटेन संछादितोऽपि दोषः प्रकटतामटति।	जिस तरह जलमें छिपाई हुई विष्टा प्रकट होजाती है उसीतरह संसारमें कपटसे छिपाया हुआ भी दोष प्रकट हो जाता है।
८ अतिविमले विपुले जले तिष्ठन् भ्रमरः जिह्वावशात् निष्कारणं मरणं लभते।	अतिनिर्मल बहुतसे जलमें बैठा हुआ भ्रमर जीभके वशसे निष्कारण मरणको पाता है।
९ येऽनपेक्षाः संतोऽपकारकारिणि जने अपि उपकारमाचरंति ते मान्याचारा जना विरलाः।	जो अपेक्षारहित हुये अपकारकरनेवाले आदमीमें भी उपकार करते हैं वे मान्य आचरण वाले लोग विरले हैं।
१० कल्पांते [तेऽ] अपि व्रजति विकृतिं सज्जनो न स्वभावात्।	कल्पात होनेपर भी सज्जन स्वभावसे विकारको प्राप्त नहीं होते।
११ पृथिव्यां विमुक्तपापे विचित्रे सुलभे आहारवर्गे विद्यमाने ये मांसं खादंति ते नरा नृशंसाः।	पृथिवीपर पापरहित नानाप्रकारके सुलभ आहारोंके रहनेपर जो मासखाते हैं वे लोग राक्षस हैं।

संस्कृत बनाओ—

१। जिन शास्त्रोंमें प्राणिवध लिखा है वे अपठनीय हैं। [भोगते हैं।

२। कुयोनियोंमें जो २ दुख होते हैं उन सबको मांसभक्षक लोग

३। कामपीडित आदमी घरमे, नगरमें, कुटुम्बियोंमें, तथा अन्य लोगोंमें कहीं भी शांतिको नहीं पाता है।

४। जो द्रव्य देनेवाले अकुलीन मनुष्यमें भी प्रीति करती है और निर्धनको छोड देती है उस वेश्याको बुद्धिमान नहीं सेवते हैं।

५। जो वचनमें कोमल और चित्तमें कठोर है ऐसी गणिका छोडने

६। सत्यवचनोंमें रत तपस्वी मुझे सुखदें। [योग्य है।

७। जिसप्रकार वनमें भ्रमणकरने वाले सिंहकेमुखमें प्रविष्ट मृगकी रक्षा करनेमें कोई भी नहीं समर्थ है उसीतरह संसारमें भ्रांत और

यमसुखमें प्रविष्ट जीवकी रक्षा करनेमें भी कोई समर्थ नही है।

८। यदि मृतक मनुष्य शोक करनेपर पुराने शरीरको पाले अथवा अपना मरण होजाय तो शोक करना उचित है।

९। हे विद्वानो! तुम लोग सर्वदा सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्ररूप नदियोंमें स्नान करो।

१०। नगरको जाते हुये लोग वृक्षच्छायामे वैठते हैं।

११। गंगाप्रभृति नदियोंमें वडे २ मत्स्य रहते हैं।

१२। करणीयवस्तुमे भाग्य ही प्रमाण है।

१३। चंद्रवदने! मैं तेरी (त्वदीय) सरल, आज्ञानुकूल प्रवर्त्तन करनेवाली दासियोंमें भी अविनयकी संभावना नहीं करता हूं (न संभावयामि)।

साहित्य परिचय।

यदि भवति समुद्रः सिंधु [नदी]तोयेन तृप्तो यदि कथमपि वह्निः काष्ठसंघाततश्च। अयमपि विषयेषु प्राणिवर्गस्तदा स्यात् [होगा] इति मनसि विदंतो [जानते हुये] मा व्यधुः (मत करो) तेषु यत्नं॥१॥ सततविविधजीवध्वंसनाद्यैरुपायैः स्वजनतनु [शरीर] निमित्तं कुर्वते [करते हैं] पापमुग्रं। व्यथिततनुमनस्का जंतवोऽमी सहंते नरकगतिं [मु] उपेताः [प्राप्त हुये] दुःखमेकाकिनस्ते॥२॥ किमिह परमसौख्यं निस्पृहत्वं यदेतत्, किमथ परमदुःखं सस्पृहत्वं यदेतत्। इति मनसि विधाय [करके] त्यक्तसंगाः [परिग्रहरहित] सदा ये विदधति (धारते हैं) निजधर्मं ते नराः पुण्यवंतः॥३॥

त्यजत युवतिसौख्यं क्षांतिसौख्यं श्रयध्वं [होओ)
विरमत (विरक्तहोओ) भवमार्गात् मुक्तिमार्गे रमध्वं (आसक्त-
जहित (छोड़ो) विषयसंगं ज्ञानसंगं कुरुध्वं (करो)
अमितगति (मोक्ष) निवासं येन नित्यं लभध्वं॥४॥

आत्मानं (म) अन्यं (म) अथ हंति (मारता है) जहाति (छोड़ता है) धर्मं
पापं समाचरति शुक्तं (म) अपाकरोति (दूर करता है) ।
पूज्यं न पूजयति वक्ति (वदति) विनिंद्यवाक्यं
किं किं करोति न नरः खलु कोपयुक्तः ॥ ५ ॥
तावद् नरो भवति तत्वविद् (द) अस्तदोषो
मानी मनोरमगुणो मननीयवाक्यः ।
शूरः समस्तजनता(जनसमूह) महितः कुलीनो
यावद् हृषीक (इंद्रिय) विषयेषु न सक्तिमेति (प्राप्त होता है) ॥६॥
यथाऽन्धकारांधपटावृतो जनो
विचित्रचित्रं न विलोकितुं क्षमः ।
यथोक्त (वास्तविक) तत्त्वं भवनाथभाषितं
निसर्ग (स्वभाव) मिथ्यात्वतिरस्कृतस्तथा ॥ ७ ॥
वरं विषं भुक्तं [म] असु [प्राण] क्षयक्षमं
वरं वनं श्वापदवद् (हिंस्रजंतु) निषेवितं ।
वरं कृतं वह्निशिखाप्रवेशनं
परं न मिथ्यात्वयुतं हि जीवितं ॥ ८ ॥
विचित्रवर्णाचित (सहित) चित्रं (मु) उत्तमं
यथा गताक्षो (अंधः) न जनो विलोकते ।
प्रदर्श्यमानं न तथा प्रपद्यते (विश्वास करता है)
कुदृष्टि (मिथ्यादृष्टि) जीवो भवनाथशासनं ॥ ९ ॥
सुरेंद्रनागेंद्रनरेंद्रसंपदः सुखेन सर्वा लभते भ्रमन् भवे । अशेष (सर्व) दुःखक्षयकारणं परं न दर्शनं पावनं (म) अश्नुते (पाता है) जनः ॥१०॥ न बांधवा नो सुहृदो न वल्लभा न देहजा नो धनधान्यसंचयाः । तथा हिताः संति शरीरिणा (जीवोंको) यथाऽत्र सम्यक्त्वं [सच्चे पदार्थोंका श्रद्धान करना] (म) अदूषितं हितं ॥११॥ विनश्वरं पापसमृद्धिदक्षं विपाक (अंतमें) दुःखं बुधनिंदनीयं । तदन्यथाभूतगुणेन (विप-

रीत गुणवाले) तुल्यं ज्ञानेन राज्यं न कदाचिद् (द) अस्ति ॥ १२ ॥
पूज्यं स्वदेशे भवति (ती) इह राज्यं, ज्ञानं त्रिलोकेऽपि सद् (द) अर्चनीयं। ज्ञानं विवेकाय, मदाय राज्यं, ततो न ते तुल्यगुणे भवेतां [हैं] ॥१३॥ सर्वेऽपि लोके विधयो यथार्था ज्ञानाद् ऋते नैव भवंति जातु [कभी]। अनात्मनीयं [आत्माके अहितको] परिहर्तुकामा-स्तदर्थिनो [आत्माके हितेच्छु] ज्ञानमत: श्रयंति॥ १४ ॥
धर्मार्थकामव्यवहारशून्यो विनष्टनिःशेष [सर्व] विचारबुद्धि:।
रात्रिंदिनं भक्षणसक्तचित्तो ज्ञानेन हीनः पशुरेव शुद्धः ॥ १५ ॥
वरं विषं भक्षितं [मु] उग्रदोषं वरं प्रविष्टं ज्वलने (अग्नौ) ऽतिरौद्रे।
वरं कृतांताय [यमाय] निवेदितं स्वं, न जीवितं तत्त्वविवेक [ज्ञान]मुक्तं १६
परोपदेशं स्वहितोपकारं ज्ञानेन देही वितनोति [करता है] लोके।
जहाति [छोड़ता है] दोषं श्रयते गुणं च ज्ञानं जनैस्तेन समर्चनीयं ॥१७॥
निरस्तभूषो [भूषणरहित] ऽपि यथा विभाति [शोभते] पवित्रचा-रित्रविभूषितात्मा। अनेकभूषाभिरलंकृतोऽपि विमुक्तवृत्तो [चारित्रशून्य] न तथा मनुष्यः ॥ १८ ॥
विनश्वरमिदं वपुर्युवतिमानसं चंचलं
भुजंगकुटिलो विधिः पवनगत्वरं[हवाके समान गमनशील]जीवितं।
अपायबहुलं धनं बत परिप्लवं [विनाशीक] यौवनं
तथापि न जना भवव्यसनसंततेर्बिभ्यति [डरते हैं] ॥ १९ ॥
बांधवमध्येपि जनो दुःखानि समेति [पाता है] पापपाकेन।
पुण्येन वैरिसदनं [घर] यातो [गतः] ऽपि न मुच्यते सौख्यैः॥ २० ॥
द्वीपे जलनिधि [समुद्र] मध्ये गहनवने वैरिणां [वैरियोंके] समूहेऽपि।
रक्षति मर्त्यं सुकृतं पूर्वकृतं भृत्यवत् सततं ॥ २१ ॥
तावत् नरो कुलीनो मानी शूरः प्रजायतेऽत्यर्थं।
यावत् जठर [उदर] पिशाचो वितनोति न पीडनं देहे ॥ २२ ॥
दासीभूय मनुष्यः परवेश्मसु नीचकर्म विदधाति।

चाटुशतानि [सैकड़ों मीठे वचन] च कुरुते जठरदरी [कंदरा] पूरणा-
संस्कृत बनाओ। [कुलितः ॥ २३ ॥

अति विनयी श्रेणिकसे मुनिने कहा कि—यदि तुम स्वकीयपूर्व-भव सुनना चाहते हो तो ध्यानपूर्वक सुनो-[शृणु] मैं कहता हूं—

इस लोकमें एकलक्षयोजनपरिमित जम्बूनामक द्वीपमें भरतक्षेत्र है उसमें सूर्यकांत देश है वह देश धनधान्यादि पदार्थोंसे सर्वदा शोभित रहता है वहांके सूरपुर नामक नगरमें एक मित्र राजा राज्य करता था। जो कि नीतिमार्गानुसार संपूर्ण प्रजाकी रक्षा करनेमें प्रसिद्ध था। कालबीतनेपर महारानी श्रीमती-सुमित्र और मंत्रिपत्नी सुषेण नामक पुत्रोंको जनती हुई [सूतवत्यौ] उनमें सुमित्र अभिमानवशसे सुषेणको दुःख देता था और सुषेण भयवश उस दुःखको सहता था। बादको जब मित्रके मरनेसे सुमित्र राजसिंहासन पर विराजा तब मंत्रिसुत सुषेण अतिचिंतान्वित हुआ उसने यह विचारकर कि-"सुमित्र अति क्रूर है उसने मुझे लड़कपनमें अति दुःख दिया है। इस समय वह राजा होगया है इससे अधिक कष्ट देगा इसलिये इसके राज्यमें रहना ठीक नहीं है" कुटुंबमोहको छोड़ दीक्षा लेली।

जबसे सुषेण वनको गये तबसे राजमंदिरको न आये। राजा सुमित्र भी राज्य पाकर भोगोंका अनुभव करने लगा। एकदिन राजा एकांतमें बैठा था कारणवश उसको सुषेणकी याद आई (सुषेणं स्मृतवान्) पूछनेपर किसी पार्श्वचरने कहा कि वे तो दिगंबर मुनि होगये हैं। उन्होंने समस्त संसारसे मोह छोड़ दिया है। किसी समय मुनि सुषेणको सूरपुरके बगीचे [सूरपुरारामे] में आया जानकर राजा सुमित्र अतिप्रसन्न हुआ। तत्काल वह दर्शनके लिये गया। प्रबल मोहनीयोदयसे मुनिमुद्राको न विचार राजा कहनेलगा

"प्रियमित्र! मेरा राज्य अतिविशाल है शुभकर्मसे मैंने उसे पाया है। ऐसे विशाल राज्यको छोड़कर मेरे विना पूछे आपने

दीक्षा लेली यह ठीक न किया। आप मेरा आधा राज्य के इंद्रिय सुखोंका अनुभव करें।

राजा सुमित्रके मुखसे मोहपूर्ण वचन सुनकर मुनि सुषेणने कहा—"राजन् मैं अपनी आत्माको शांतिमयी अवस्थामें लाना चाहता हूं। परभवमें मेरी आत्मा शांतिस्वरूपका अनुभव करे इसलिये मैंने दुष्कर तप आचरा है। मैं विश्वास करता हूं कि उत्तम तपस्यासे मैं अवश्यही अपरिमित सुखका अनुभव करूंगा।"

मुनिराज सुषेणसे यह उपदेश सुन राजाने कहा—"मुनिनाथ! आप तप छोडना नहीं चाहते तो कृपाकर मेरे राजमंदिरमें आहारार्थ अवश्य आवें। मुनिने कहा—" मैं यह काम करनेमें भी असमर्थ हूं। दिगंबरमुनिको ऐसा करनेका पूर्णतया निषेध है"

राजाने इसतरह विरक्त मुनिको देख नमस्कारकर राजमंदिरकी तरफ प्रस्थान किया।

उपसंहार।

हिंदी बनाओ—

वीरो वीरनराग्रणीर्गुणनिधिर्वीरं हि वीराःश्रिताः।
वीरेण (णे) इह भवेत् [हो] सुवीरविभवं वीराय नित्यं नमः।
वीरात् धीरगुणा भवंति सुधियां [विद्वानोंको] वीरस्य नित्या गुणाः।
वीरे मे दधतो मनोऽरिविजये हे वीर शक्तिं कुरु ॥ १ ॥
यो जानाति समं समस्तमनिशं यं सूरयः [आचार्य] संश्रिताः
येन (ना) अदर्शि [देखा] विमुक्तिवर्त्म सुधियो यस्मै स्पृहां कुर्वते।
यस्मात् तत्त्वविनिश्चयोऽप्रतिहतं यस्य [स्यै] एव शास्त्रं जयो
यस्मिन् विस्मयनीयपुण्यमहिमा भूयात् (हो) स वः (युष्माकं)
श्रीजिनं त्रिगन्नाथैः समर्चितपदद्वयं। [श्रेयसे ॥ २ ॥
नत्वा पद्मरथस्य (स्यो) च्यैर्जिनभक्तिकथा (थो) उच्यते ॥ १ ॥

देशेऽत्र मागधे रम्ये मिथिलायां महापुरी ।
राजा पद्मरथो जातो विख्यातो मुग्धमानसः ॥ २ ॥
एकदाऽसौ महाटव्यां पापवृद्धयै (शिकारखेलने) भूपतिर्गतः ।
दृष्ट्वा (ष्ट्वे) एकं शशकं पृष्ठे तस्य (स्या) अश्वं वाहयद् द्रुतं ॥
भूत्वा (त्वै) एकाकी वने कालगुहां प्राप्तः स्वपुण्यतः ॥ ३ ॥
तत्र दीप्ततपो-योगात् विस्फुरद्कांतिमद्भुतं ।
सुधर्ममुनिमालोक्य रत्नत्रयविराजितं ॥
शांतो बभूव संतप्तो लोहपिंडो यथाऽम्भसा (जलेन) ॥ ४ ॥
तुरंगाद् (द) अवतीर्याशु तं प्रणम्य महामुदा ।
धर्ममाकर्ण्य जैनेंद्रं सुरेंद्राद्यैः समर्चितं ॥
सम्यक्त्वाणुव्रतानि (न्यु) उच्चैः समादाय सुभक्तितः ।
संतुष्टः पृष्टवान् (नि) इत्थं सुधीः पद्मरथो नृपः ॥ ५ ॥
भो मुने ! भुवनाधार ! जैनधर्माम्बुधौ विधो !
वक्तृत्वादिगुणोपेतस्त्वादृशः पुरुषोत्तमः ॥
किं कोऽपि वर्तते क्वाऽपि परो वा न [नि] इति धीधन ।
संदेहो मानसे मेऽ [मम]स्ति ब्रूहि [कहिये] त्वं करुणापर ॥ ६ ॥
तत् श्रुत्वा स मुनिः प्राह (बोले) सुधर्मो जैनतत्त्ववित् ।
शृणु त्वं भो महीनाथ ! चम्पायां विबुधार्चितः ।
तीर्थकृत् वासुपूज्योऽस्ति द्वादशो भवशर्मदः ॥ ७ ॥
तस्य वासुपूज्यस्य ज्ञानदीप्तिगुणोदये ।
अतरं मे [मम] तरां चाऽस्ति मेरुसर्षपयोरिव ॥ ८ ॥
तदाऽऽकर्ण्य मुनेर्वाक्यं धर्मप्रीतिविधायकं ।
तत्पादवंदनाभक्त्यै संजातः सोत्सवो नृपः ॥ ९ ॥
यावत् चचाल [चला] सद्भूत्या प्रभाते प्रीतिनिर्भरः ॥ १० ॥
तावत् धन्वंतरिर्नाम्ना सुधीर्विश्वानुलोमवाक् ।
तौ सखायौ [सुहृदौ] सुरौ भूत्वा-समागत्य महीतले ।

तस्य भक्तेः परीक्षार्थं मार्गे संगच्छतो मुदा।
दर्शयामासतुः (दिखलाते हुये) कष्टं कालसर्पं तिरोगतं ॥ ११ ॥
मायया छत्रभंगं च पुरोदाहादिकं पुनः।
अकालेऽपि महावृष्टिं निमग्नं कर्दमे द्विपं ॥ १२ ॥
मंत्री [न्त्र्या] आदिभिस्तदा वार्यमाणोऽपि बहुधा नृपः।
"अमंगलशते जाते गम्यते नैव भूपते" ॥ १३ ॥
"नमः श्रीवासुपूज्याय" भणित्वा [त्वे] इति प्रसन्नधीः।
कर्दमे प्रेरयामास [हांक दिया] भक्तिमान् निजकुंजरं ॥ १४ ॥
तथाभूतं तमालोक्य जिनभक्तिभरान्वितं।
स्वमायां (मु) उपसंहृत्य संप्रशस्य सुरोत्तमौ।
सर्वरोगापहरं हारं भेरीं योजन-नादिनीं।
धर्मानुरागतस्तस्मै दत्त्वा स्वस्थानकं गतौ ॥ १५ ॥
यस्य चित्ते जिनेंद्राणां भक्तिः संतिष्ठते सदा।
सिध्यंति सर्वकार्याणि तस्य नैव (वा) अत्र संशयः ॥ १६ ॥
ततः पद्मरथो राजा प्रहृष्टहृदयांबुजः।
गत्वा चंपापुरीं तत्र दृष्ट्वा त्रैलोक्यमंगलं ॥
वासुपूज्यं जिनाधीशं समभ्यर्च्य सुभक्तितः।
स्तुत्वा स्तोत्रैस्तथा नत्वा श्रुत्वा तत्त्वं जिनोदितं।
दीक्षां (मा) आदाय जैनेंद्रीं पादमूले जिनेशिनः
संजातो गणभृत् चारुचतुर्ज्ञानविराजितः ॥ १७ ॥
अतो भव्यैः सदा कार्या जिनभक्तिः सुशर्मदा।
त्यक्त्वा मिथ्यामतं शीघ्रं स्वर्ग-मोक्ष-सुखाप्तये ॥ १८ ॥
यथा पद्मरथो राजा जिनभक्तिपरोऽभवत् (हुआ)।
अन्यैश्चाऽपि महाभव्यैर्भवितव्यं तथा श्रिये (लक्ष्म्यै) ॥ १९ ॥

संस्कृत बनाओ—

काशीके राजा पाकशासनने एक समय अपनी प्रजाको महा-

मारी (अतिदारुणरोग) से पीड़ित देखकर ढिंढोरा (राजाज्ञा) पिटवाया (निःसारिता) कि–"नंदीश्वर पर्वमें आठदिन पर्यंत किसी जीवका वध न हो, इस राजाज्ञाका उल्लंघयिता प्राणदंडसे दंडित होगा" वहीं एक सेठपुत्र धर्मनामक रहता था वह महा अधर्मी सप्तव्यसनका सेवक था। वह मांसभक्षणके विना एक दिन भी न रह सका था। एकदिन वह राजाके बगीचे (उद्यान) में गया। वहां राजाका एक मेंढा (मेष) था उसको उसने मारडाला और वह उसके कच्चे (अपक्व) ही मांसको खागया।

दूसरे दिन जब राजाने बगीचेमें मेंढा न देखा तब उसके अन्वेषण करनेको बहुतसे गुप्तचर नियुक्त किये उनमेंसे एक गुप्तचर राजाके बागमें भी गया। वहांका माली (आरामरक्षक) रातको सोते समय सेठपुत्रद्वारा मेंढेके मारे जानेका वृत्तांत अपनी स्त्रीसे कह रहा था। सो वह उस गुप्तचरने सुनलिया और महाराजासे जा यह बात कह दी। राजाको श्रेष्ठिसुतपर बड़ा गुस्सा आया और कोतवालको कहा कि–"पापी धर्मने जीवहिंसा तथा राजाज्ञोल्लंघन किया है अतः इसको शूलिपर चढ़ा (आरोप्य) मारडालो।" कोतवाल धर्मको शूलिगृहमें लेगया और नौकर यमपालनामक चांडालको बुलानेको भेजे क्योंकि यह कार्य उसीका था यमपालने एक दिन सर्वौषधिऋद्धिधारी मुनिराजसे धर्मोपदेश सुन प्रतिज्ञा ली थी कि "मैं चतुर्दशीके दिन जीववध न करूंगा" इसलिये उसने राजसेवकोंको आते हुये देख अपने व्रतकी रक्षाकेलिये अपनी स्त्रीसे कहा कि– "प्रिये! किसीको वध करनेकेलिये मुझे बुलाने (आह्वयितुं) राजसेवक आरहे हैं। सो तुम उनसे कहदेना कि घरमें वे नहीं हैं दूसरे गांव गये हुये हैं" इसप्रकार कहकर वह गृहके एक कोने (कोण) में छिप रहा। जब राजनौकर उसके घरपर आये तब चांडालप्रियाने उसीतरह कहदिया। इसबातको सुनकर नौकरोंने कहा-हाय! (हंत)

वह बड़ा अभागी है दैवने उसे ठग लिया (वंचितः) आज ही तो एक सेठसुतके मारनेका अवसर हाथ आया। आजही वह ग्रामांतर चला गया। यदि वह आज यहां होता (स्यात्) तो उसे वस्त्र-भूषण प्राप्त होते (प्राप्येत्) चांडालिनीने इस बातको सुनकर अंगुली के इशारे (संज्ञया) से उसे बता दिया (दर्शितः)।

राजनौकरोंने उसे घरसे बाहर निकाला चांडालने निर्भय हो कहा कि "मैं आज चतुर्दशीको वध न करूंगा" यह सुन राजकिंकर उसे राजाके पास ले आये। वहां भी उसने वैसा ही कहा। राजा ने ऐसा सुन आज्ञा दी कि इन दोनोंको मकर मत्स्यादि क्रूर जीवोंसे पूर्ण तालावमें डाल दो। राजाज्ञाके अनुसार तालावमें डालते ही पापी धर्मको तो जलजंतु खागये और यमपालकी उस व्रतमें दृढ़ता देख देवोंने सहायता की। उसको तालावमें ही सिंहासनपर वस्त्र-आभूषणोंसे सज्जितकर बैठाया [स्थापितः]।

जब राजा और प्रजाको यह मालूम हुआ तब उनने भी उसका सत्कार किया और बहुत पारितोषक दिया।

यद्यपि यमपाल जाति (जात्या) का चांडाल था पर उसके हृदयमें दृढ़ प्रतिज्ञापालनकी पवित्र वासना थी इसलिये उसका देवोंने भी सत्कार किया।

परिशिष्ट।

पुलिंग

	पति[1]शब्द			दीर्घ ईकारांत ग्रामणी[2] शब्द		
	एक०	द्वि०	बहुव०	एक०	द्वि०	बहुव०
तृ०	पत्या	पतिभ्यां	पतिभिः	ग्रामण्या	ग्रामणीभ्यां	ग्रामणीभिः।

१ सखि शब्दके रूपभी इसीके समान होंगे। २ सुधी और नी आदि एक स्वरवाले शब्दोंको छोडकर शेष दीर्घ ईकारांत शब्दोंके रूप इसके समान होंगे।

	एक०	द्विव०	बहुव०	एक०	द्विव०	बहुव०
च.	पत्ये	पतिभ्यां	पतिभ्यः	ग्रामण्ये	ग्रामणीभ्यां	ग्रामणीभ्यः।
पं.	पत्युः	पतिभ्यां	पतिभ्यः	ग्रामण्यः	ग्रामणीभ्यां	ग्रामणीभ्यः।
ष.	पत्युः	पत्योः	पतीनां	ग्रामण्यः	ग्रामण्योः	ग्रामण्यां।
स.	पत्यौ	पत्योः	पतिषु	ग्रामण्यां	ग्रामण्योः	ग्रामणीषु।

	सुधीशब्द			क्रोष्टुशब्द		
तृ.	सुधिया	सुधीभ्यां	सुधीभिः	क्रोष्ट्रा, क्रोष्टुना	क्रोष्टुभ्यां	क्रोष्टुभिः।
च.	सुधिये	सुधीभ्यां	सुधीभ्यः	क्रोष्ट्रे, क्रोष्टवे	क्रोष्टुभ्यां	क्रोष्टुभ्यः।
पं.	सुधियः	सुधीभ्यां	सुधीभ्यः	क्रोष्टुः, क्रोष्टोः	क्रोष्टुभ्यां	क्रोष्टुभ्यः।
ष.	सुधियः	सुधियोः	सुधियां	क्रोष्टुः, क्रोष्टोः	क्रोष्ट्रोः, क्रोष्ट्वोः	क्रोष्टूनां।
स.	सुधियि	सुधियोः	सुधीषु	क्रोष्टौ, क्रोष्टरि	क्रोष्ट्रोः, क्रोष्ट्वोः	क्रोष्टुषु।

	दीर्घ ऊकारांत खलपूशब्द			लूशब्द		
तृ.	खलप्वा	खलपूभ्यां	खलपूभिः	लुवा	लूभ्यां	लूभिः।
च.	खलप्वे	खलपूभ्यां	खलपूभ्यः	लुवे	लूभ्यां	लूभ्यः।
पं.	खलप्वः	खलपूभ्यां	खलपूभ्यः	लुवः	लूभ्यां	लूभ्यः।
ष.	खलप्वः	खलप्वोः	खलप्वां	लुवः	लुवोः	लुवाम्।
स.	खलप्वि	खलप्वोः	खलपूषु	लुवि	लुवोः	लूषु।

३—नी शब्दके रूप इसके समान होंगे परंतु सप्तमीके एक वचनमें 'नियां' रूप होगा। ४ दृन्भू, करभू, पुनर्भू, वर्षाभूको छोडकर शेष शब्द जिनके अंतमें 'भू' है उनके रूप 'लू' के समान होते हैं और दृन्भू आदि चारोंके 'खलपू' के समान

	एक.	द्वि.	बहु	एक	द्वि	बहु.
	ओकारात गोशब्द			ऐकारात रैशब्द		
तृ.	गवा	गोभ्यां	गोभिः	राया	राभ्यां	राभिः।
च.	गवे	गोभ्यां	गोभ्यः	राये	राभ्यां	राभ्यः।
पं.	गोः	गोभ्यां	गोभ्यः	रायः	राभ्यां	राभ्यः।
ष.	गोः	गवोः	गवां	रायः	रायोः	रायां।
स.	गवि	गवोः	गोषु	रायि	रायोः	रासु।
	औकारात ग्लौशब्द			जकारात भिषज्[1]शब्द		
तृ.	ग्लावा	ग्लौभ्यां	ग्लौभिः	भिषजा	भिषग्भ्यां	भिषग्भिः।
च.	ग्लावे	ग्लौभ्यां	ग्लौभ्यः	भिषजे	भिषग्भ्यां	भिषग्भ्यः।
पं.	ग्लावः	ग्लौभ्यां	ग्लौभ्यः	भिषजः	भिषग्भ्यां	भिषग्भ्यः।
ष.	ग्लावः	ग्लावोः	ग्लावां	भिषजः	भिषजोः	भिषजां।
स.	ग्लावि	ग्लावोः	ग्लौषु	भिषजि	भिषजोः	भिषक्षु।
	श्वन् शब्द			युवन् शब्द		
तृ.	शुना	श्वभ्यां	श्वभिः	यूना	युवभ्यां	युवभिः।
च.	शुने	श्वभ्यां	श्वभ्यः	यूने	युवभ्यां	युवभ्यः।
पं.	शुनः	श्वभ्यां	श्वभ्यः	यूनः	युवभ्यां	युवभ्यः।
ष.	शुनः	शुनोः	शुनां	यूनः	यूनोः	यूनां।
स.	शुनि	शुनोः	श्वसु	यूनि	यूनोः	युवसु।
	नकारात पथिन् शब्द			तकारात ददत् शब्द		
तृ.	पथा	पथिभ्यां	पथिभिः	ददता	ददद्भ्यां	ददद्भिः।
च.	पथे	पथिभ्यां	पथिभ्यः	ददते	ददद्भ्यां	ददद्भ्यः।
पं.	पथः	पथिभ्यां	पथिभ्यः	ददतः	ददद्भ्यां	ददद्भ्यः।

१—जिन शब्दोंके अंतमें भृज्, सृज्, मृज्, यज् राज्, भ्राज् हैं उनसे तथा परि-ब्राज् युज इन शब्दोंसे भिन्न शब्दोंके रूप इसके समान होंगे।

	एक.	द्वि.	बहु.	एक.	द्वि.	बहु.
प.	पथः	पथोः	पथां	ददतः	ददतोः	ददतां।
स.	पथि	पथोः	पथिषु	ददति	ददतोः	ददत्सु।
	पुम्स् शब्द				द्विशब्द	त्रिशब्द
तृ.	पुंसा	पुंभ्यां	पुम्भिः	०	द्वाभ्यां	त्रिभिः।
च.	पुंसे	पुंभ्यां	पुंभ्यः	०	द्वाभ्यां	त्रिभ्यः।
पं.	पुंसः	पुंभ्यां	पुंभ्यः	०	द्वाभ्यां	त्रिभ्यः।
ष.	पुंसः	पुंसोः	पुंसां	०	द्वयोः	त्रयाणां।
स.	पुंसि	पुंसोः	पुंसु	०	द्वयोः	त्रिषु।

स्त्रीलिंग

	जरा शब्द				त्रिशब्द	
तृ.	जरसा, जरया	जराभ्यां	जराभिः	०	०	तिसृभिः।
च.	जरसे, जरायै	जराभ्यां	जराभ्यः	०	०	तिसृभ्यः।
पं.	जरसः, जरायाः	जराभ्यां	जराभ्यः	०	०	तिसृभ्यः।
ष.	जरसः, जरायाः	जरसोः, जरयोः	जरसां, जराणां	०	०	तिसृणां।
स.	जरसि, जरायां	जरसोः जरयोः	जरासु	०	०	तिसृषु।
	श्रीशब्द[1]				चतुर् शब्द	
तृ.	श्रिया	श्रीभ्यां	श्रीभिः	०	०	चतसृभिः।

१ ह्री, भी, धीके रूपभी इसके समान होंगे।

	एक.	द्विव.	बहुव	एक.	द्विव.	बहुव.
च.	श्रियै, श्रियै	श्रीभ्यां	श्रीभ्यः	०	०	चतसृभ्यः ।
पं.	श्रियाः, श्रियः	श्रीभ्यां	श्रीभ्यः	०	०	चतसृभ्यः ।
ष.	श्रियाः, श्रियः	श्रियोः	श्रीणां	०	०	चतसृणां ।
स.	श्रियि, श्रियां	श्रियोः	श्रीषु	०	०	चतसृषु ।

	दीर्घ ऊकारांत भू[1]शब्द			इर् भागात गिर्[2]शब्द		
तृ.	भुवा	भूभ्यां	भूभिः	गिरा	गीर्भ्यां	गीर्भिः ।
च.	भुवे	भूभ्यां	भूभ्यः	गिरे	गीर्भ्यां	गीर्भ्यः ।
पं.	भुवाः	भूभ्यां	भूभ्यः	गिरः	गीर्भ्यां	गीर्भ्यः ।
ष.	भुवाः	भुवोः	भुवां	गिरः	गिरोः	गिरां ।
स.	भुवां	भुवोः	भूषु	गिरि	गिरोः	गीर्षु ।

	भकारांत ककुभ् शब्द					अप् शब्द
तृ.	ककुभा	ककुब्भ्यां	ककुब्भिः	०	०	अद्भिः ।
च.	ककुभे	ककुब्भ्यां	ककुब्भ्यः	०	०	अद्भ्यः ।
पं.	ककुभः	ककुब्भ्यां	ककुब्भ्यः	०	०	अद्भ्यः ।
ष.	ककुभः	ककुभोः	ककुभां	०	०	अपां ।
स.	ककुभि	ककुभोः	ककुप्सु	०	०	अप्सु ।

	दिश् शब्द			आशिष्शब्द		
प्र.	दिक्	दिशौ	दिशः	आशीः	आशिषौ	आशिषः ।

१–दृन्भू, करभू, पुनर्भू, वर्षाभूके सिवाय शेष शब्दोंके जिनके कि अंतमें 'भू' है उनके रूप इसके समान होंगे । २–पुर् आदि उर् भागात शब्दोंके रूप भी इसके समान होंगे ।

	एक	द्विव.	बहुव	एक	द्विव.	बहुव
द्वि.	दिशं	दिशौ	दिशः	आशिषं	आशिषौ	आशिषः।
तृ.	दिशा	दिग्भ्यां	दिग्भिः	आशिषा	आशीर्भ्यां	आशीर्भिः।
च.	दिशे	दिग्भ्यां	दिग्भ्यः	आशिषे	आशीर्भ्यां	आशीर्भ्यः।
पं.	दिशः	दिग्भ्यां	दिग्भ्यः	आशिषः	आशीर्भ्यां	आशीर्भ्यः।
ष.	दिशः	दिशोः	दिशां	आशिषः	आशिषोः	आशिषां।
स.	दिशि	दिशोः	दिक्षु	आशिषि	आशिषोः	आशीःषु।

दिव् शब्द

	एक	द्विव	बहुव
प्र.	द्यौः	दिवौ	दिवः।
द्वि	दिवं	दिवौ	दिवः।
तृ	दिवा	द्युभ्यां	द्युभिः।
च.	दिवे	द्युभ्यां	द्युभ्यः।
पं.	दिवः	द्युभ्यां	द्युभ्यः।
ष.	दिवः	दिवोः	दिवां।
स.	दिवि	दिवोः	द्युषु।

नपुंसकलिंग

अक्षि[1] शब्द कर्तृ शब्द

	एक	द्विव	बहुव	एक	द्विव	बहुव.
तृ.	अक्ष्णा	अक्षिभ्यां	अक्षिभिः	कर्तृणा	कर्तृभ्यां	कर्तृभिः।
च.	अक्ष्णे	अक्षिभ्यां	अक्षिभ्यः	कर्तृणे	कर्तृभ्यां	कर्तृभ्यः।
पं.	अक्ष्णः	अक्षिभ्यां	अक्षिभ्यः	कर्तृणः	कर्तृभ्यां	कर्तृभ्यः।
ष.	अक्ष्णः	अक्ष्णोः	अक्ष्णां	कर्तृणः	कर्तृणोः	कर्तृणां।
स.	अक्ष्णि	अक्ष्णोः	अक्षिषु	कर्तृणि	कर्तृणोः	कर्तृषु।

१—दधि, अस्थिके रूप भी इसके समान होंगे।

	नामन् शब्द			पायिन् शब्द		
	एक	द्विव.	बहुव.	एक	द्विव.	बहुव.
प्र.	नाम	नाम्नी	नामानि	पायि	पायिनी	पायीनि।
द्वि.	नाम	नाम्नी	नामानि	पायि	पायिनी	पायीनि।
तृ.	नाम्ना	नामभ्यां	नामभिः	पायिना	पायिभ्यां	पायिभिः।
च.	नाम्ने	नामभ्यां	नामभ्यः	पायिने	पायिभ्यां	पायिभ्यः।
पं.	नाम्नः	नामभ्यां	नामभ्यः	पायिनः	पायिभ्यां	पायिभ्यः।
ष.	नाम्नः	नाम्नोः	नाम्नां	पायिनः	पायिनोः	पायिनां।
स.	नाम्नि	नाम्नोः	नामसु	पायिनि	पायिनोः	पायिषु।

अहन् शब्द

	एक.	द्विव.	बहुव.
प्र.	अहः	अहनी, अह्नी	अहानि।
द्वि.	अहः	अहनी, अह्नी	अहानि।
तृ.	अह्ना	अहोभ्यां	अहोभिः।
च.	अह्ने	अहोभ्यां	अहोभ्यः।
पं.	अह्नः	अहोभ्यां	अहोभ्यः।
ष.	अह्नः	अह्नोः	अह्नां।
स.	अह्नि, अहनि	अह्नोः	अहःसु।

त्रिलिंग शब्द

	पंचन् शब्द	षष् शब्द	अष्टन् शब्द
	बहुवचन	बहुवचन	बहुवचन
प्र.	पंच	षट्	अष्टौ, अष्ट।
द्वि.	पंच	षट्	अष्टौ, अष्ट।

१–सप्तन्, नवन्, दशन् आदि नकारांत संख्यावाचक शब्दोंके रूप इसके समान होंगे एकोनविंशति [१९] से आगेकी संख्याके अर्थको कहनेवाले सब शब्दोंके रूप एकवचनमें ही चलते हैं और वे अपने समान शब्दवालोंके समान ही होते हैं।

	बहुवचन	बहुवचन	बहुवचन
तृ.	पंचभिः	षड्भिः	अष्टभिः, अष्टाभिः।
च.	पंचभ्यः	षड्भ्यः	अष्टभ्यः, अष्टाभ्यः।
प.	पंचभ्यः	षड्भ्यः	अष्टभ्यः, अष्टाभ्यः।
ष.	पंचानां	षण्णां	अष्टानां।
स.	पंचसु	षट्सु	अष्टसु, अष्टासु।

नोट—प्रथमभागके परिशिष्टमें तो जो शब्द दिये हैं और यहां नहीं दिये गये हैं उनके तृतीया आदि विभक्तियोंके रूपोंमें कुछ अंतर नहीं समझना, उनके रूप उन सरिखे शब्दोंके समान ही चलेंगे।

चतुर्थ अध्याय।

(भ्वादि और तुदादिगणीय धातुओंका विधि [लिङ्] अर्थमें व्यवहार)

प्रथम पाठ।

परस्मैपदी धातु।

१ ज्ञानार्थी विद्वांसं श्रयेत्—ज्ञानका इच्छुक विद्वानका सहारा ले।
तृष्णार्त्तः जलं पिबेत्—पिपासाकुल पानीको पीवे।
सुखार्थी ईश्वरं अर्चेत्—सुखका इच्छुक ईश्वरको पूजे।
तपस्वी सत्तपः चरेत्—तपस्वी सच्चे तपको करे।
जिज्ञासुः गुरुं पृच्छेत्—जाननेका इच्छुक गुरुसे पूछे।
ब्रह्मचारी असंयमं त्यजेत्—ब्रह्मचारी असंयमको छोडे।
जनः सदा सत्यं वदेत्—मनुष्य सदा सच बोले।

१-विधि (नियोग, आज्ञा करना) निमंत्रण, आमंत्रण (इच्छानुसार करनेकी आज्ञा देना) अधीष्ट (सत्कारपूर्वक किसी कामको करने कहना) संप्रश्न (पूछना) प्रार्थना (याचा करना) इन अर्थोंमें लिङ् लकारका प्रयोग होता है।

२ शिशू खेलेतां—दो लडके खेलें।

क्षत्रियौ कवचं वहेतां—दो क्षत्रिय कवच पहिनें।

राजानौ दुर्जनान् अर्देतां—दो राजा दुर्जनोंको दंड दें।

कारू तरू कृंतेतां—दो बढई दो पेड कार्टें।

३ मुनयः कर्माणि संहरेयुः—मुनि कर्मोंको नष्ट करें।

कुलालाः घटान् सृजेयुः—कुम्हार घडोंको बनावें।

केऽपि कानपि न रिषेयुः—कोई भी किसीको न मारें।

जनाः मा मुधा लपेयुः—लोग व्यर्थ न बोलें।

नीचे लिखे शब्दोंसे वाक्य बनावो—

वांछेत्, ध्यायेतां, सरेयुः, अर्हेत्, पश्येतां, अंचेयुः, स्पृशेत्, दिशेतां, कांक्षेयुः, निंदेत्, तुदेतां, रिषेयुः, नमेत्, भ्रणेतां, यजेयुः, अटेत्, यच्छेत्, याचेयुः, शपेत्, विशेतां, कुंचेयुः, सरेत्, कूजेतां, भ्रमेयुः, जिघ्रेत्, धमेतां, नयेयुः, धावेत्, पतेतां, तिष्ठेयुः, मनेत्।

हिंदी बनाओ—

सत्यपूतां वदेत् वाणीं। कश्चित् काणो भवेत् साधुः। वर्तमानेन कालेन, विहरेत् हि सदा बुधः। अज्ञातकुलशीलेषु न कदाचन विश्वसेत्। सर्वदेवमयो राजा मनुना संप्रकीर्तितः, तस्मात् तं देववत् पश्येत् न व्यलीकेन [मिथ्या] कर्हिचित्॥ दहेत् स्वमेव रोषाग्निना [अ] परं विषयं ततः। प्राप्ते तु षोडशे वर्षे पुत्रं मित्रमिव [वा] आचरेत्। यस्तु भोगान् परित्यज्य शरीरेण तपश्चरेत्, न तेन किंचित् न प्राप्तं तद् मे बहुमतं फलं। यस्मिन् देशे न सन्मानं न प्रीतिर्न बांधवाः, न च विद्यागमः कश्चित् तं देशं झटिति त्यजेत्॥ अर्थनाशं मनस्तापं गृहे दुश्चरितानि च, वंचनं चापमानं च मतिमान्नो बहिर्वदेत्॥ अनित्यं यौवनं रूपं जीवितं द्रव्यसंचयः, आरोग्यं प्रियसंसर्गो गृध्येत् तत्र न पंडितः॥ अध्यात्मरतिरासीनो निरपेक्षो निरामिषः, आत्मनैव सहायेन यश्चरेत् स सुखी भवेत्॥

संस्कृत बनाओ—

प्रतिदिन ईश्वरकी पूजा करनी चाहिये। विद्यार्थी गुरुकी सेवा करें। रथसे उतरते समय ऊपरकी तरफ देखना न चाहिये। जो इस ग्रंथको पढ़े वह अवश्य ही ज्ञानी होवे। वह सर्वज्ञ हमको सुख दे जिसने सच्चे धर्मका उपदेश दिया। विद्वान् लोग गरीबोंको विना मूल्य शिक्षा दें। धनाढ्य गरीबोंका पालन करें। दो शिष्य गुरुके चरणोंको प्रणाम करें। आपके रक्षक रहनेपर हमारा घर क्यों निरापद न होगा। आत्मा अपने स्वभावको प्राप्त करे। यदि अर्थ, मात्रा, पद और वाक्योंमें कुछ भी अशुद्ध कहा हो तो सरस्वती-माता उसे क्षमा करे। हे भगवन्! तुम्हारे प्रसादसे संसारमें शांति हो।

द्वितीय पाठ।

आत्मनेपदी धातु।

१ जनः गुणिनं कत्थेत—लोगोंको गुणी आदमीकी प्रशंसा करनी चाहिये।
शिशुः चंद्रं ईक्षेत—लड़का चन्द्रमाको देखे।
पापभीरुः अनृतं न भाषेत—पापसे डरनेवाला आदमी झूठ न बोले।
परिखा दुर्गं वेष्टेत—खाई किलेको वेष्टित करे।
कश्चिदपि न म्रियेत—कोई भी न मरे।

२ इमौ विद्यार्थिनौ ईहेयातां—ये दो विद्यार्थी यत्न करें।
वस्त्रे शरीरं कवेयातां—दो कपड़े शरीरको ढकें।
बालिके स्मयेयातां—दो लड़कियोंको मुस्कराना चाहिये।
वर्षायां नद्यौ एधेयातां—वर्षामें दो नदियोंको बढ़ना चाहिये।
सूर्याचंद्रमसौ द्योतेयातां—सूर्य और चंद्रमाको प्रकाशित होना चाहिये।

३ धार्मिकाः सुखं लभेरन्—धर्मात्मा लोग सुख पावें।
जनाः गुणिनो न ईर्जेरन्—लोगोंको गुणियोंकी निंदा न करनी चाहिये।
विद्वांसः गभीरान् ग्रंथान् गाहेरन्—विद्वानोंको गंभीर ग्रंथोंका अवगाहन

साधवः सर्वान् तितिक्षेरन्—साधुलोग सबको क्षमा करें। [करना चाहिये

कर्मवीराः जगति प्रथेरन्—काम करनेमें वीर आदमी संसारमें प्रसिद्ध हों।

नीचे लिखे शब्दोंसे वाक्य बनाओ—

भिक्षेत, मानेयातां, मोदेरन्, म्रियेत, रोचेयातां, वर्चेत, वल्भेरन्, उल्लङ्घेत, वर्द्धेयातां, व्यथेत, वेपेयातां, शंकेरन्, शिक्षेत, श्वेतेयातां, स्वादेरन्, स्फुटेत, स्यंदेयातां, सयेयातां, आद्रियेरन्, उद्विजेत, प्यायेरन्, भ्रसेत, गार्द्धेत, याचेरन्, दधेयातां, ददेत, यतेरन्, श्रंथेत, चंडेयातां, कंपेत, त्रपेरन्, काशेत, घूर्णेयातां, ऊहेरन्।

संस्कृत बनाओ—

विद्यार्थियोंको तर्क वितर्क करना चाहिये। राजाको प्रजाकी रक्षा करना चाहिये। मनुष्योंको पापसे डरना चाहिये। कायर आदमी सिंहसे डरें। लड़कोंको खेल देखना चाहिये। जहां कहीं वे रहें पर उनको साधुओंकी सेवा करनी चाहिये। वह राज्य बढ़े। इससमय दिये जलने चाहिये।

हिंदी बनाओ—

परलोकं प्रयातस्य न गर्हेत कदाचन। माऽनृतं कदापि कत्थेरन्। अप्राप्ये न ईहेत। स्वजननीं निरीक्ष्य मोदेत प्राणेभ्योऽपि गरीयसीं। सखायौ सखायौ ईक्षेयातां। आपत्सु मित्रं परीक्षेत। विनयिनश्छात्रान् पाठकाः शिक्षेरन्।

शुद्ध करो—

जनः शत्रोरपि गुणान् वदेरन्। सर्पाः शनैः सरेयातां। पक्षिणौ मधुरं कूजेत्। मयाहि शाखान् छात्राः धमेरन्। पापशांत्यर्थं धर्मं ईहेत्। रुग्ण औषधं स्वदेयातां। सज्जनो दुर्जनान् दूरात् परित्यजेरन्। केऽपि कानपि न याचेयुः। श्रावको मुनिं वीक्ष्य ह्लादेत्।

तृतीय पाठ ।

उभयपदी धातु ।

१ कर्षकः गर्तं खनेत् [त]—किसान गड्ढा खोदे ।

निर्धनः धनिनं भजेत् [त]—गरीब धनवालेकी सेवा करे ।

पुण्यात्मा दरिद्रं भरेत् [त]—पुण्यात्मा दरिद्रका पोषण करे ।

२ रजकौ वस्त्राणि रजेतां [यातां]—दो धोबी (रंगरेज) कपडे रंगे ।

नृपौ बद्धान् मुंचेतां [यातां]—दो राजा कैदियोंको छोडें ।

मृगौ अद्रिं श्रयेतां [यातां]—दो मृग पहाडका सहारा लें ।

३ दुर्जनाः हृदयं मा तुदेयुः [रन्]—दुर्जन हृदयको व्यथा न दें ।

भृत्या भारं वहेयुः [रन्]—नौकर भार ढोवें ।

शिष्याः समिधः आहरेयुः [रन्]—शिष्य लकडी लावें ।

नीचे लिखे शब्दोंसे वाक्य बनाओ ।

गृहेत, क्षपेयातां, भजेरन्, यजेत्, याचेतां, वयेतां, भृज्जेत् लुंपेयुः, तुदेयातां, चषेत ।

संस्कृत बनाओ—

मनुष्योंको कोई जीव न मारना चाहिये । शूद्रको तीनों वर्णोंकी सेवा करनी चाहिये । जुलाहोंको कपडा बुनना उचित है । मुनियों को सच्चे तपका सहारा लेना ठीक है । मनस्वियोंको याचना करनी ठीक नहीं । दो विद्यार्थियोंको वनसे लकडियां लाना चाहिये । समर्थोंको दीन दुखियोंकी सेवा करनी चाहिये ।

चतुर्थ पाठ ।

उत्तम पुरुष ।

परस्मैपदी धातु ।

१ अहं पुस्तकानि पठेयं—मुझे पुस्तकें पढनी चाहिये ।

अहं किमपि न इच्छेयं—मैं कुछ भी न चाहूं ।

अहं क्लिष्टं सततं रक्षेयं—मुझे दुःखियाकी हमेशा रक्षा करनी चाहिये।

अहं व्यर्थं न वदेयं—मैं व्यर्थ न बोलूं।

२ आवां उचितसमये खेलेव—हम दोनों उचित समयमें खेलें।

आवां भिक्षार्थं चरेव—हम दोनो भिक्षाकेलिये चलें।

आवां सुपात्रदानं अर्पेव—हम दोनों सुपात्रदान देवें।

३ वयं पूज्यान् नमेम—हमलोग पूज्योंको नमस्कार करें।

वयं दुग्धं पिबेम—हमलोग दूध पीवें।

वयं अस्पर्श्यं न स्पृशेम—हमलोग अस्पर्श्यको न छूवें।

नीचे लिखे शब्दोंसे वाक्य बनाओ—

यच्छेयं, लिखेव, गच्छेम, नमेयं, वितरेम, विकिरेव, क्रीडेयं, अतेव, जीवेम, कूजेयं, गर्जेम, तपेयं।

संस्कृत बनाओ—

मैं कभी भी झूठ न बोलूं। हमें बुरा काम न करना चाहिये। हम दोनोंको प्रतिदिन ईश्वरकी पूजा करनी चाहिये। मुझे गुरुके पास जाना चाहिये। भाई! हमको शत्रु जीतने चाहिये। हमलोग विद्यार्थी हैं हमें इससमय ध्यानसे पढ़ना चाहिये। हम दोनोंको अभक्ष्य न खाना चाहिये। हमलोग क्षत्रियां हैं हमें शर्म करना योग्य है। मुझे क्यों खेलना चाहिये। तुम दोनों पंडितोंको अच्छे अच्छे ग्रंथ देखने चाहिये।

हिंदी बनाओ—

अहं सदा धर्मतत्परो भवेयं। वयमेव पर्वतं किं गच्छेम। आवां सर्वदा विद्यादानं यच्छेव। दूतोऽहं नृपमर्चेयं। शठ! त्वया सह नाहं वदेयं। हा! तामावां पश्येव।

पंचम पाठ।

आत्मनेपदी धातु।

१ अहं सुखं लभेय—मैं सुख प्राप्त करूं।

अहं अपराधिनं तिजेय—मैं अपराधीको क्षमा करूं।

अहं सततं ईहेय—मैं सर्वदा काम करूं।

२ आवां शत्रोर्न क्षोभेवहि—हम दोनों शत्रुसे न क्षुब्ध हों।

आवां कमपि न गर्हेवहि—हम दोनों किसीकी भी निंदा न करें।

आवां शास्त्राणि गाहेमहि—हम दोनोंको शास्त्रोंका अवगाहन करना चाहिये।

३ वयं सत्तपसि दीक्षेमहि—हमलोग सचे तपमें दीक्षित हों।

वयं शंकेमहि—हमलोगोंको शंका करनी चाहिये।

वयं कदाचन न उद्विजेमहि—हमलोग कभी भी उद्विग्न न हों।

नीचे लिखे शब्दोंसे वाक्य बनाओ—

आद्रियेवहि, प्यायेमहि, ईक्षेमहि, कत्थेय, ईर्ष्येवहि, ईजेमहि, भिक्षेय, द्योतेमहि, पद्येय, प्रथेमहि, मानेवहि, वल्भेय, वर्द्धेमहि।

शुद्ध करो—

वयं साधून् कत्थेयरन्, आवां स्मयेव, अहं स्वादेयं, आवां शिक्षेयातां, वयं शेमेयुः, अहं व्यथेत्, वयं क्षोभेय, आवां गर्हेमहि, अहं ईहेमहि।

हिंदी बनाओ—

अहं सर्वोत्कृष्टं वार्त्तिकादिरहितं व्याकरणं गाहेय। आवां सज्जनं कत्थेवहि। अहं भगवद्विषयकं गीतं शिक्षेय। विपदाऽभिभूतोऽप्यहं धर्मं न त्यजेयं। शिष्यस्याविनयमहं न सहेय। प्रजानामनुरंजनाय राजनो वयं यतेमहि। वर्धमानं व्याधिं जयंतं शत्रुं च नोपेक्षेमहि।

संस्कृत बनाओ—

मुझे गुरुके पास न्यायशास्त्र पढ़ना चाहिये। हमलोगोंको शुद्ध अंतःकरणसे ईश्वरपूजा करनी चाहिये। हम दोनोंको गरीब आदमि-

योंकेलिये धन देना चाहिये। मैं उसके साथ लड़ाई करूं? । यदि मैं खराब काम करूं तो मुझे तर्जना देनी चाहिये। मा बाप प्रसन्न हों इसलिये मुझे सदाचारी होना चाहिये।

षष्ठ पाठ।

उभयपदी धातु।

१ कर्षकोऽहं गर्तं खनेयं [य]—मुझ किसानको एक गड्ढा खोदना चाहिये।
अहं परपरिवादं गूहेयं [य]—मैं दूसरेकी निंदाको छिपाऊं।
अहं भक्ष्यं चर्वेयं [य]—मुझे भक्ष्य चीज खानी चाहिये।

२ आवां शत्रुं छर्पेव [वहि]—हम दोनोंको शत्रु मारना चाहिये।
आवां निस्वं भरेव [वहि]—हम दोनो निर्धनको पालें।
आवां ईश्वरं यजेव [वहि]—हम दोनों ईश्वरको पूजें।

३ वयं बीजं वपेम [महि]—हमलोगोंको बीज बोना चाहिये।
वयं विदुषं भजेम [महि]—हमलोगोंको विद्वानका सहारा लेना चाहिये।
वयं वनं श्रयेम [महि]—हमलोग वनका आश्रय लें।

नीचे लिखे शब्दोंसे वाक्य बनाओ—

आहरेयं, तुदेम, आदिशेमहि, भृज्जेय, लिंपेव, लुंपेवहि, सिंचेम, भृज्जेमहि, वहेयं, नयेमहि।

संस्कृत बनाओ—

यदि मैं काशी जाऊं तो बहुतसी पुस्तकें लाऊं। मुझे जहर न खाना चाहिये। हम दोनोंको धनाढ्योंका सहारा न लेना चाहिये। हमलोगोंको शरीर लेपना चाहिये। मैं किसीका भी धन न हरूं।

हिंदी बनाओ—

पंडितानां समाजेऽपंडिता वयं मौनं भजेमहि। कुसुमैः सुरभिणि भवनेऽध्वखेदं अपनयेयं। धर्मे रता वयं सर्वेशं पश्येम। विपत्तौ धर्मं न परित्यजेम।

शुद्ध करो—

अहं ज्यायांसं श्रयेमहि। आवां वृक्षान् लुम्पेमहि, वयं वस्त्राणि वयेय।

सप्तम पाठ।

मध्यम पुरुष।

परस्मैपदी धातु।

१ त्वं चिरं जीवेः—तुम चिरकाल तक जीवो।

त्वं शीघ्रं जवेः—तुम जल्दी चलो।

त्वं कदापि मा कर्वेः—तुम्हें कभी भी घमंड न करना चाहिये।

त्वं सततं मा क्रीडेः—तुम्हें हमेशा खेलना न चाहिये।

२ युवां मत्तौ मा गर्जेतं—तुम दोनों मत्तोंको गर्जना न चाहिये।

युवां व्याकरणं पठेतं—तुम दोनोंको व्याकरण पढना चाहिये।

युवां पत्रं लिखेतं—तुम दोनोंको पत्र लिखना चाहिये।

युवां ग्रामं गच्छेतं—तुम दोनों गावको जाओ।

३ यूयं शिवं इच्छेत—तुमलोग मोक्षको चाहो।

यूयं तत्त्वं पृच्छेत—तुमलोग तत्त्व पूछो।

यूयं दरिद्रान् रक्षेत—तुमलोगोंको दारिद्रोंकी रक्षा करनी चाहिये।

यूयं मा मृषा वदेत—तुमलोग झूठ न बोलो।

नीचे लिखे शब्दोंसे वाक्य बनाओ—

क्रंदेः, खेलेतं, अर्देत, अर्चेः, दिशेतं, भजेत, कृंतेः, इच्छेत, गदेः, स्पृशेः, अर्हेत, उपदिशेः, कांक्षेत, अवेः, पश्येतं, विकिरेः, सृजेत, रिपेतं।

हिंदी बनाओ—

मा मुधा त्वं लपेः। यूयं बहून् दिवसान् जीवेत। युवां दुग्धं पिबेतं। यूयं स्वनयनैरीश्वरं पश्येत। त्वमतीतं वृत्तांतं कथं न स्मरेः। सद्धर्मं सदा उपदिशेः। अलभ्यं न कांक्षेत। युवां निरपराधिनं न निंदेतं।

संस्कृत बनाओ—

तुमको जीवोंकी हिंसा न करनी चाहिये। तुमलोग प्रतिदिन स्नान करो। तुम दोनोंको पेड़ सींचने चाहिये। तुम संसाररूपी समुद्रको तरो। तुम दोनोंको प्रतिदिन पाठशाला जाना चाहिये। तुम्हें सच्चे शास्त्र पढना चाहिये। पंडितजी महाशय! इस लड़केको कृपया पढ़ाइये। हमारे चिरंजीव नेमिचंद्रका विवाह है उस दिन अवश्य २ पधारियेगा।

अष्टम पाठ।

आत्मनेपदी धातु।

१ त्वं जगत्स्वामिमूर्तिं सततं ईक्षेथाः—तुम ईश्वरकी मूर्तिको हमेशा देखो।
त्वं कमपि कदापि न ईजेथाः—तुम किसीकी कभी भी निंदा न करो।
त्वं सत्कार्याणि सर्वदा ईहेथाः—तुम अच्छे कामोंकी हमेशा इच्छा करो।
त्वं विपदि न क्षोभेथाः—तुम आपत्तिमें क्षुब्ध न होओ।

२ युवां शत्रुमपि न गर्हेयाथां—तुम दोनोंको शत्रुकी भी निंदा न करनी चाहिये।
युवां न्यायशास्त्राणि गाहेयाथां—तुम दोनों न्यायशास्त्रोंका विवेचन करो
युवां सततं चेष्टेयाथां—तुम दोनोंको हमेशा काम करना चाहिये।
युवां अपराधिनं तिजेयाथां—तुम दोनोंको अपराधीपर क्षमा करनी चाहिये।

३ यूयं वृद्धत्वे दीक्षेध्वं—तुमलोगोंको बुढापेमें दीक्षा लेनी चाहिये।
यूयं साधून् कत्थेध्वं—तुमलोगोंको साधुओंकी प्रशंसा करनी चाहिये।
यूयं विद्यां भिक्षेध्वं—तुमलोग विद्या मांगो।
यूयं गुरून् मानेध्वं—तुमलोग गुरुओंका सत्कार करो।

नीचे लिखे शब्दोंसे वाक्य बनाओ—

रोचेध्वं, वल्भेथाः, वर्द्धेयाथां, व्यथेथाः, वेपेध्वं, शंकेथाः, शिक्षेथाः, स्मयेध्वं, शोभेयाथां, आद्रियेध्वं, म्रियेथाः, उद्विजेयाथां।

हिंदी बनाओ—

न्यायरीतिषु प्रवर्तेथाः। युवां मंदं मंदं स्मयेयाथां। रुग्णा यूयमौषधं स्वादेध्वं। विपदि मा उद्विजेथाः। संपदि च मोदेथाः। सज्जना यूयं सज्जनान् आद्रियेध्वं। यस्मिन् कस्मिन् न विश्रंभेथाः।

संस्कृत बनाओ—

तुम्हें घी न मांगना चाहिये। भाई! तुम गरीबोंको दान दिया करो। गुणवान् आदमीको देख तुम दोनोंको प्रसन्न होना चाहिये। गुरुकी आज्ञा तुम्हें उल्लंघनी न चाहिये। डरसे मत कपो। तुम्हें मुनियोंकी वंदना करनी चाहिये।

शुद्ध करो—

आवश्यकेषु त्वं मा श्रंथेय। सततं सत्कार्येषु युवां यतेथहि। गुरुषु यूयं न वंदेमहि। इतस्ततो यूयं निष्प्रयोजनं मा भयेरन्। क्लिष्टेषु जीवेषु त्वं दयेत। युवां गुरून् दृष्ट्वात्र पेयातां। यूयं जीवान् न बाधेयुः।

नवमा पाठ।

उभयपदी धातु।

१ त्वं विदुषः श्रयेः [थाः]—तुमको विद्वानोंका सहारा लेना चाहिये।
त्वं परधनं मा हरेः [थाः]—तुम दूसरेके धनको मत हरण करो।
त्वं ओदनं पचेः [थाः]—तुम चावल पकाओ।

२ युवां वस्त्राणि वयेतं [याथां]—तुम दोनों कपडे बुनो।
युवां शरीरं लिंपेतं [याथां]—तुम दोनों शरीर लिंपन करो।
युवां ईश्वरं यजेतं [याथां]—तुम दोनों ईश्वरकी पूजा करो।

३ यूयं विद्यां याचेत [ध्वं]—तुमलोगोंको विद्या मागनी चाहिये।
यूयं क्षेत्राणि सिंचेत [ध्वं]—तुमलोग खेतमें पानी दो।
यूयं बंदिनं मुंचेत [ध्वं]—तुमलोग कैदियोंको छोड दो।

नीचे लिखे शब्दोंसे वाक्य बनाओ—

खनेथाः, गूहेयाथां, चपेत, छपेतं, भजेध्वं, भरेतं, एधेयाथां, उद्वहेत।

संस्कृत बनाओ—

तुम्हें गरीबोंको न सताना चाहिये। तुम लोगोंको नौकरोंकेलिये आज्ञा देनी चाहिये। तुम दोनोंको एक कुआ खोदना चाहिये। भाई! तुम गरीबोंका पालन करो।

शुद्ध करो—

त्वं भृत्यं आदिशेतं। यूयं निर्धनं मा तुदेरन्। युवां क्षेत्रं कर्षेत। त्वं हृतं धनं गूहेतां।

दशमा पाठ।

विधिलिङ्के व्यवहारका दृष्टांत।

आरंभं मोत्कटं चरेत्—बहुतसा आरंभ न करना चाहिये।

पत्युः स्त्रीणामुपेक्षैव वैरभावस्य कारणं।
लोकद्वयं हितं वाछंस्तदपेक्षेत तां सदा॥

पति और पत्नियोंकी परस्परकी उपेक्षा ही वैरभावका कारण है इसलिये दोनों लोकके हितको चाहनेवालेको सर्वदा परस्पर अपेक्षा (चाहना) ही रखना चाहिये

सदपत्ये गृही स्वीयं भारं दत्त्वा निराकुलः।
सुशिष्ये सूरिवत्प्रीत्या प्रोद्यमेत परे पदे॥

अच्छे शिष्यमें आचार्यके समान प्रीतिपूर्वक गृहस्थ अपने भारको सुपुत्रमें देकर निराकुल हो परम (उत्कृष्ट) पदमें उद्यम करे।

यत्नवान् निष्कषायोऽसावहिंसाणुव्रतं श्रयेत्।

यह कषाय (क्रोध, मान, माया, लोभ) रहित हो प्रयत्नपूर्वक अहिंसाणु व्रत (किसीको न सताना) का आश्रय करे।

हिंसां त्यजेत् यथा नैव प्रतिज्ञा हानिमाप्नुयात्।

जिसप्रकार प्रतिज्ञाकी हानि न हो उसप्रकार हिंसाको छोडे।

वस्त्रेणातिसुपीनेन गालितं तत्पिबेज्जलं।

अत्यंत गाढे वस्त्रसे छाना हुआ पानी पीना चाहिये।

अंबुगालितशेषं तन्न क्षिपेत् क्वचिदन्यतः।

तथा कूपजलं नद्यां तज्जलं कूपवारिणि॥

कपडेसे छाननेके वाद जो जल बचे उसे कहीं दूसरी जगह न डारे तथा कूए के जलको नदीमें और नदीके जलको कूएमें न डाले।

कदाचित्प्राणिरक्षार्थमसत्यं सत्यवद्वदेत्।

कभी (समय पडने पर) प्राणियोंकी रक्षाकेलिये असत्य बातको भी सत्यके समान बोल देना चाहिये।

त्वं पंचाणुव्रतधारको भवेः—तुमको अहिंसा आदि पांच अणुव्रतोंका धारक [होना चाहिये।

सर्वदा सत्कार्येषु प्रवर्त्तेथा —हमेशा सत्कार्योंमें प्रवृत्त होओ।

वयं प्रातरुत्थाय ईश्वरं उपतिष्ठामहे—हमलोग सवेरे उठकर ईश्वरकी उपा- [सना करें।

यूयं सन्मुनीन् सदा सेवेध्वं—तुमलोगोंको हमेशा सच्चे मुनियोंकी सेवा करनी चाहिये।

संस्कृत बनाओ—

१। राजाओंको क्रोध, मान, माया, लोभ जीतने चाहिये।

२। संसारमें सब जीवोंको एक दूसरेपर दया करनी चाहिये।

३। भाइयो! तुमलोग युद्धमें जाओ और शत्रुओंको मारो।

४। हमारे यहां आज महावीरनिर्वाणोत्सव होगा कृपाकर आप लोग अवश्य ही पधारें।

५। हमलोगोंको सर्वदा पापोंसे डरना चाहिये।

६। लडको! यही समय पढनेका है तुम्हें इससमय न खेलना [चाहिये।

७। वेटी! तू सासुरेमें (श्वसुरालय) जाकर अपनेसे बडोंकी सेवा करना, अपनी सौतों (सपत्नी) को सखी समझना, अपने पतिसे कभी भी रुष्ट न होना, दासियों पर दया करना,

अपने सौभाग्यका घमंड न करना।

८। धनिकोंको धन, विद्वानोंको विद्या विना स्वार्थके देना चाहिये।

९। मुझे सर्वदा माता पिताकी आज्ञा माननी चाहिये।

१०। मनुष्योंको इंद्रियविषयोंमें आसक्त न होना चाहिये।

११। गुरु महाशय! इसने व्याकरण पढ़ लिया है कृपाकर इसे अव न्यायशास्त्र पढ़ाइये।

१२। अनाथरक्षक! मैं वहुत गरीव हूं मुझे भिक्षा दीजिये।

१३। या तो मैं मर जाऊंगा या इस कार्यको करूंगा।

१४। विनयी शिष्योंको ऊटपटांग शंका न करनी चाहिये।

१५। हमलोगोंको साफ सुथरे (परिष्कृत) घरमें रहना चाहिये।

एकादश पाठ।

वाच्य परिवर्त्तन।

कर्तृवाच्य।			कर्मवाच्य।		
१ सुखार्थी	ईश्वरं	अर्चेत्—	सुखार्थिना	ईश्वरः	अर्च्येत।
तपस्विनौ	सत्तपः	चरेतां—	तपस्विभ्यां	सत्तपः	चर्येत।
ब्रह्मचारिणः	असंयमं	त्यजेयुः—	ब्रह्मचारिभिः	असंयमं	त्यज्येत।
अहं	पुस्तकं	पठेयं—	मया	पुस्तकं	पठ्येत।
आवां	शत्रुं	रिषेव—	आवाभ्यां	शत्रुः	रिष्येत।
वयं	दुर्जनं	अर्देम—	अस्माभिः	दुर्जनः	अर्द्येत।
त्वं	गुणिनं	अर्हेः—	त्वया	गुणी	अर्ह्येत।
युवां	साधुं	पश्येतं—	युवाभ्यां	साधुः	दृश्येत।
यूयं	शत्रुमपि न	निंदेत—	युष्माभिः	शत्रुरपि न	निंद्येत।
२ शिशुः	क्रीडनके[खेलिलौने]	ईक्षेत—	शिशुना	क्रीडनके	ईक्ष्येयातां।
परिखे	दुर्गौ	वेष्टेयातां—	परिखाभ्यां	दुर्गौ	वेष्ट्येयातां।
जनाः	सुखदुःखे	लभेरन्—	जनैः	सुखदुःखे	लभ्येयातां।

अहं ग्रंथौ गाहेय—मया ग्रंथौ गाह्येयातां।
आवां विद्वांसौ मानेवहि—आवाभ्यां विद्वांसौ मान्येयातां।
वयं मोदकौ वल्भेमहि—अस्माभिः मोदकौ वल्भ्येयातां।
त्वं शत्रू तिजेथाः—त्वया शत्रू तिज्येयातां।
युवां कीटकौ न बाधेयाथां—युवाभ्यां कीटकौ न बाध्येयातां।
यूयं पितरौ सेवेध्वं—युष्माभिः पितरौ सेव्येयातां।
३ कर्षकः गर्तान् खनेत् [त]—कर्षकेण गर्ताः खन्येरन्।
शिष्यौ पाठकान् श्रयेतां[याता]—शिष्याभ्यां पाठकाः श्रियेरन्।
शिष्याः समिधः आहरेयुः[रन्]—शिष्यैः समिधः आह्रियेरन्।
त्वं दुर्जनान् तुदेः[देथाः]—त्वया दुर्जनाः तुद्येरन्।
युवां बद्धान् मुंचेतं[याथा]—युवाभ्यां बद्धाः मुच्येरन्।
यूय दरिद्रान् भरेत[ध्वं]—युस्माभिः दरिद्राः भ्रियेरन्।
अहं गुणिनः भजेयं [य]—मया गुणिनः भज्येरन्।
आवां विद्याः याचेव [वहि]—आवाभ्यां विद्याः याच्येरन्।
वयं ओदनान् पचेम [महि]—अस्माभिः ओदनाः पच्येरन्।

नीचे लिखे शब्दोंसे वाक्य बनाओ—

सेव्येत, मान्येरन्, गायेत, ईज्येयातां, गर्ह्येरन्, लिख्येत, पठ्येयातां, दह्येरन्, रक्ष्येयातां, दिश्येत, रिष्येयातां, लुंप्येत, अट्येरन्, सिच्येत, मुच्येयातां, भज्येत।

हिंदी बनाओ—

धर्मार्थकामा जनैरविरोधेन भज्येरन्। राजभिः प्रजाः सत्कार्येषु दिश्येरन्। गुरुणा छात्रोऽवहितमनसा शिक्ष्येत। सुशिष्यैर्मान्येरन् गुरवः। प्रातरुत्थाय नित्यं पितरौ बालैर्नम्येयातां। पवित्रैर्धर्मात्मभिः पापिनो न स्पृश्येरन्। धर्मोपदेष्टृभिरसत्यं न लप्येत।

१-पृष्ट ४२ की टिप्पणी देखो।

संस्कृत बनाओ पर क्रिया कर्मवाच्यकी हो—

हमलोगोंको उपकारियोंका प्रतिदिन स्मरण करना चाहिये। इन नेत्रोंसे अच्छे २ पदार्थ देखने चाहिये। यदि प्रतिदिन ईश्वरकी पूजा की जाय तो अवश्य ही मनोरथ सफल हों। विद्यार्थी एक दूसरेको गाली न दे। श्रावकोंको अभक्ष्य पदार्थ न खाने चाहिये। तुमलोग इस मुंहसे अच्छे २ वचन बोला करो।

द्वादश पाठ।

उत्तम पुरुष।

कर्तृवाच्य।			कर्मवाच्य।		
१ ईश्वरो	मां	रक्षेत्—	ईश्वरेण	अहं	रक्ष्येय।
बालकौ	मां	पृच्छेतां—	बालकाभ्यां	अहं	पृच्छ्येय।
जनाः	मां	अर्हेतु—	जनैः	अहं	अर्ह्येय।
त्वं	मां	स्पृशेः—	त्वया	अहं	स्पृश्येय।
युवां	मां	स्मरेतं—	युवाभ्यां	अहं	स्मियेय।
यूयं	मां न	अर्देत—	युष्माभिः	अहं न	अर्द्येय।
२ शिष्यः	आवां	नमेत्—	शिष्येण	आवां	नम्येवहि।
पितरौ	आवां	तर्जेतां—	पितृभ्यां	आवां	तर्ज्येवहि।
भूषणानि	आवां	भूषेयुः—	भूषणैः	आवां	भूष्येवहि।
त्वं	आवां	वंदेथाः—	त्वया	आवां	वंद्येवहि।
युवां	आवां	त्रायेयाथां—	युवाभ्यां	आवां	त्रायेवहि।
यूयं	आवां	मानेध्वं—	युष्माभिः	आवां	मान्येवहि।
३ माता	अस्मान्	चुंबेत्—	मात्रा	वयं	चुंब्येमहि।
पाठकौ	अस्मान्	उपदिशेतां—	पाठकाभ्यां	वयं	उपदिश्येमहि।
छात्राः	अस्मान्	भजेयुः—	छात्रैः	वयं	भज्येमहि।
त्वं	अस्मान्	सेवेथाः—	त्वया	वयं	सेव्येमहि।

युवां	अस्मान्	हरेतं—युवाभ्यां	वयं		ह्रियेमहि।
यूयं	अस्मान्	मर्षेयुः—युष्माभिः	वयं		मृष्येमहि।

नीचे लिखे शब्दोंसे वाक्य बनाओ—

ईक्ष्येवहि, ईज्येय, गर्ह्येमहि, मान्येय, स्पृश्येमहि, मुच्येमहि, शंस्येवहि, चुंब्येमहि, दिश्येय, रक्ष्येमहि।

संस्कृत बनाओ परंतु क्रिया कर्मवाच्यकी हो—

स्वामिन्! तुम मेरी रक्षा करो। गुरुजी! हम दोनोंको शिक्षा दीजिये। हा पुत्र! क्या तुझे हमलोग छोड़ने थे? महाशय! हम अनाथों पर दया कीजिये। लड़कपनमें हमको अच्छे २ उपदेश दीजिये। माता पिता मुझे प्यार करें। बेटी! तू मुझे याद करना।

शुद्ध करो—

सुतया अहं स्मिर्येत। पुत्रैरावां भज्येथां। साधुभिर्वयं मृष्येरन्। प्रभुणा अहं दिश्येवहि। धर्मेण आवां रक्ष्येमहि। सर्वैर्वयं अर्ह्येय।

त्रयोदश पाठ।

मध्यम पुरुष।

	कर्तृवाच्य।			कर्मवाच्य।	
१ गुरुः	त्वां	शिक्षेत—गुरुणा		त्वं	शिक्ष्येथाः।
दासौ	त्वां	सेवेयातां—दासाभ्यां		त्वं	सेव्येथाः।
जनाः	त्वां	पश्येयुः—जनैः		त्वं	दृश्येथाः।
अहं	त्वां	उपदिशेयं—मया		त्वं	उपदिश्येथाः।
आवां	त्वां	वंदेवहि—आवाभ्यां		त्वं	वंद्येथाः।
वयं	त्वां	त्यजेम—अस्माभिः		त्वं	त्यज्येथाः।
२ मंत्री	युवां	अनुगच्छेत्—मंत्रिणा		युवां	अनुगम्येयाथां।
पुरुषौ	युवां	अनुवर्त्तेयातां—पुरुषाभ्यां		युवां	अनुवर्त्त्येयाथां।
जनाः	युवां	भणेयुः—जनैः		युवां	भण्येयाथां।

अहं	युवां	मुंचेय—मया	युवां	मुच्येयाथां।
आवां	युवां	नमेव—आवाभ्यां	युवां	नम्येयाथां।
वयं	युवां	तुदेम—अस्माभिः	युवां	तुद्येयाथां।
३ बालः	युष्मान्	प्रतीक्षेत—बालेन	यूयं	प्रतीक्ष्येध्वं।
शिशू	युष्मान्	स्पृशेतां—शिशुभ्यां	यूयं	स्पृश्येध्वं।
विद्वांसः	युष्मान्	मानेरन्—विद्वद्भिः	यूयं	मान्येध्वं।
अहं	युष्मान्	स्मरेयं—मया	यूयं	स्मर्येध्वं।
आवां	युष्मान्	दिशेव—आवाभ्यां	यूयं	दिश्येध्वं।
वयं	युष्मान्	पश्येम—अस्माभिः	यूयं	दृश्येध्वं।

नीचे लिखे शब्दोंसे वाक्य बनाओ—

प्रविश्येथाः, कथ्येध्वं, शिक्ष्येयाथां, ईक्ष्येथाः, वाच्येध्वं, वल्म्येथाः, ह्रियेध्वं, याच्येयाथां, भज्येध्वं।

संस्कृत बनाओ जिसमें कि क्रिया कर्मवाच्यकी हो—

सबलोग तुम्हें ही याद करें। विद्यार्थी तुम्हें पूजें। शत्रुलोग भी तुम दोनोंकी प्रशंसा करें। लतायें तुमलोगोंको आलिंगन करें। बेटा! ऋद्धियां आकर तुम्हें प्राप्त हों। यदि राज्य समृद्ध होजाय तो तुम्हें धन्यवाद मिले।

शुद्ध करो—

धनिना निस्वस्त्वं रक्ष्येत। गुरुभ्यां युवां शिक्ष्येयातां। अरिभिरपि यूयं न निंद्येवहि। विद्वद्भिस्त्वं तिज्येमहि। सुभटेन सुभटौ युवां प्रहियेरन्। सेनया यूयं नीयेमहि।

चतुर्दश पाठ।

कर्तृवाच्य।		भाववाच्य।
मूढः	कर्देत्—मूढेन	कर्द्येत।
हस्तिनौ	नर्देतां—हस्तिभ्यां	नर्द्येत।

मृगाः	चरेयुः—मृगैः	चर्येत।
त्वं	ज्वरेः—त्वया	ज्वर्येत।
युवां	जयेतं—युवाभ्यां	जीयेत।
यूयं	एधेध्वं—युष्माभिः	एध्येत।
अहं	मोदेय—मया	मोद्येत।
आवां	दीक्षेवहि—आवाभ्यां	दीक्ष्येत।
वयं अत्र	वसेम—अस्माभिरत्र	उष्येत।

नीचे लिखे शब्दोंसे वाक्य बनाओ—

अंच्येत, जीव्येत, हठ्येत, स्फुट्येय, क्षीयेत, क्रीड्येत, कूज्येत, म्रियेत, भूयेत, उद्विज्येत, कन्येत, ईक्ष्येत।

संस्कृत बनाओ परंतु क्रिया भाववाच्यकी हो—

मेघ वर्षें। संपत्ति बढे। भाग्य फले। हमलोग प्रयत्न करें। वे प्रसन्न हों। विद्यार्थी यहां रहें। मालायें मुरझा जावें। कृपाकर अब तो जाइये। रत्न चमचमावें।

शुद्ध कर वाच्यपरिवर्तनसे लिखो—

यदि कश्चित् भवेदत्र मंक्षु आगच्छेतं सः। गुरून् दृष्ट्वा मोदेत शिष्टः। सज्जनाः शत्रौ मित्रे वाऽपि समदृष्ट्या ईक्षेयुः। भारतवर्षः प्रतिदिनं विद्यायां प्रथेरन्। वर्षायां एधेतां नद्यः।

साहित्य परिचय।

हिंदी बनाओ—

एकदा प्रबलवाते वहति सति तज्जनितक्षोभवशात् समस्तमहीरुहेषु कंपितेषु सत्सु भूतलगतशुष्कपत्रेषूत्पतितेषु सत्सु, सर्वासु दिक्षु धूलिच्छन्नासु सतीषु कामपि क्षेत्रवृत्तिं (मेंड) माश्रयंत शशाः परमया भीत्या इतस्ततो धावंति स्म। महताऽऽयासेन क्षेत्रवृत्तिमुल्लंघ्य प्राणरक्षणपराः ध्यायमानाः पुरतो महतीमापगां (नदीं) पश्यंति

स्म। तदा निर्विण्णमनसोऽन्योन्यमुक्तवंतः–"अहो! कीदृशीयं विपत्परंपरा। यत्र यत्र वयं व्रजामस्तत्र तत्रैवानुधावति सा (विपत्) वरं तर्हि मज्जनं कृत्वा प्राणत्यागः। न पुनरीदृशेषु व्यसनेषु कालयापनं"। एवं विनिश्चित्य सर्वे नदीनिकटतीरमागच्छंति स्म। तत्र बहिर्निर्गतास्तीरे वर्तमाना भेकास्तान् शशान् वीक्ष्य जले उत्पतंति स्म तले मज्जितवंतश्च। तदेकेन वृद्धशशेन दृष्टं। स तानंगुल्या निर्दिश्य सखीन् भाषते स्म–"भो मित्राणि! भीरखिलानाक्रम्य तिष्ठति। यद्येवं तर्हि किमस्माभिरेव प्राणास्त्यज्येरन्? कुतो धैर्यमवलंब्यापतितानि दुःखानि सहित्वा व्यसनं प्रत्यभिमुखैर्न भूयते"। तच्छ्रुत्वा सर्वे धैर्यमवलंब्य तत्रैव वसंति स्म। एवं कृते कतिपयैरेव मुहूर्तैर्वात्या (आंधी) शांतिं गतवती ते च स्वस्था भूताः।

केचन पुरुषा नानाविधानि साध्वसानि प्रकल्प्य "हा हा कथं भवेत्, का गतिः स्यात्" इति रात्रिंदिवं चिंतयंतः कालं नयंति। "वयमेवाखिलानां दुःखानां भाजनानि" इति च तेषां प्रतिभाति। "इतरत्र सर्वे सुखिनः" इति च मन्यते तैः। परं यान् ते सुखभाजो बोधंति तेषां दुःखानि यदि ईक्षेरन् तर्हि 'वयमेव सुखिनः' इति ते मन्येरन्। भगवता विश्वसृजा दैवेन सुखदुःखयोरंशा यथायथं सर्वेभ्यो दीयंते।

संस्कृत बनाओ—

जो पुरुष अपने दोषोंको दूर करनेमें असमर्थ है वह दूसरेके दोषोंको दूर करनेकेलिये यत्न न करे। जो दूसरेको उपदेश दे उसे वैसा ही आचरण करना चाहिये जिससे कि उसमें कोई शंका न करे। ऐसा करनेसे उसका उपदेश मान्य होता है। क्योंकि जो दोष दूसरोंको छोड़ना चाहिये उसे ही यदि हम करें तो लोकमें हमारी क्यों न हंसी होगी।

घरमें आग लगनेपर कुआ न खोदना चाहिये। जो लोग ऐस

करते हैं वे मूर्ख हैं। इसलिये जबतक बालक अवस्थामें हैं संसारके भारसे आक्रांत नहीं हुये हैं तब तक हमलोगोंको खूब विद्या पढ़-लेनी चाहिये जिससे कि युवा अवस्थामें आनंद प्राप्त हो। और युवा अवस्थामें इंद्रियोंका दमन करना चाहिये, दुश्चरितोंसे अपनी रक्षा करनी चाहिये, धनको इकट्ठा करना चाहिये जिससे कि बुढ़ापेमें सुखसे रहें। जो पुरुष पहिलेसे सब काम कर लेता है वही निरालस है, वही पंडित है, वही पुरुष है और उसीने बुद्धिका फल पाया है।

जो मनुष्य इंद्रियोंको वश करना चाहता है उसे पहिले अपने मनको जीतना चाहिये। क्योंकि सेनापतिके जीत लेनेपर सेना स्वयं ही जीतली जायगी। अपने इस मनरूपी चंचल बंदरको पहिले तो ज्ञान और वैराग्यरूपी सांकल (शृंखला) से बांधना चाहिये बाद को शास्त्ररूपी बगीचेमें इसे छोड़ देना चाहिये। यदि कदाचित् मन दूसरी तरफ जाय तो उसे वैराग्यकी तरफ खींचना चाहिये।

आत्मन्! अब तैंने पराधीन अवस्थामें नाना दुःख सहे हैं तब इससमय भी कर्मोंकी निर्जराकेलिये उन्हें सहना चाहिये। अपने शुद्ध स्वरूपका ध्यान करते हुये जब तक तुम इस जगतमें रहोगे तब तक बहुतसे पापोंको नष्ट करोगे।

पंचम अध्याय।

(भ्वादि और तुदादिगणीय धातुओंका अनंद्यतन भूतकाल [लङ्] में प्रयोग)

प्रथम पाठ।

परस्मैपद (अन्य उत्तम, मध्यम पुरुष)

१ छात्रोऽयं व्याकरणं अपठत्—इस विद्यार्थीने व्याकरण पढलिया।

अहं मुनिं अपश्यम्—मैंने एक मुनि देखे।

त्वं गुरुं अपृच्छः—तुमने गुरुको पूछा।

२ दास्यौ पुत्रोत्पत्तिं अवदतां—दो दासियोंने पुत्रकी उत्पत्ति कही।

आवां शत्रुं आर्दाव—हम दोनोंने शत्रुको पीडा दी।

युवां मुनी अपूजतं—तुम दोने दो मुनिकी पूजाकी।

३ जनाः वनं अगच्छन्—लोग जंगलको गये।

वयं भृत्यान् अदिशाम—हमने नौकरोंको आज्ञा दी।

यूयं अनाथान् अरक्षत—तुमलोगोंने अनाथोंकी रक्षा की।

हिंदी बनाओ—

एको नृपो जलं पातुं नदीमागच्छत्। अश्वमारोढुं मतिरभवत्।

१-आधी रातसे लेकर संपूर्ण दिन और आधीरात पर्यंत कालको अद्यतन कहते हैं और उससे पहिलेका काल अनद्यतन भूत है। अर्थात् जिस दिन हम किसी बातको कह रहे हैं यदि वह बात उसदिनकी आधीरातसे पहिले हुई है तो इस लकारका प्रयोग होगा। जैसे-किसीने आज किसी समय कहा कि-'अलिखत् पत्रं देवदत्त=देवदत्तने एक पत्र लिखा। तो इससे यह अभिप्राय निकला कि उसने पत्रको आजकी आधी रातसे पहिले लिखा है आज नहीं। २-वर्तमान कालके जो 'पठति, पठत ' आदि रूप बतलाये हैं उनमें जिन धातुओंके आदिमें व्यंजन है उनसे पहिले तो 'अ' और जिनके आदिमें स्वर है उनसे पहिले 'आ' लगादेनेसे तथा 'ति, त , न्ति, मि, वः, म , सि, थः, थ' जो प्रत्यय हैं उनके स्थानमें क्रमसे 'त्, ता, न्, म्, व, म, (विसर्ग), त, त' करदेनेसे इसके रूप होजाते हैं।

सखीभिः पृष्टा ललना अगदत्। दृषदि निषण्णो गुरुः शिष्यान् धर्म-मुपादिशत्। कैकेय्या दारुणं वचः श्रुत्वा महाराजो दशरथः सहसा भूमावपतन्निश्चेष्टश्चाभवत्। अस्मिन्नेव लतागृहे त्वमभवः। अमू तौ तरू यौ ह्योऽपश्यम्। पुर्या पुराऽस्यां किल कालिदासो नाम्नाऽभवद् यो न्यवसत् कवीशः।

नीचे लिखे शब्दोंसे वाक्य बनाओ—

अशंसत्, अकांक्षत्, अनिंदन्, अव्रजः, अस्पृशत, अगायाम, अध्यायन्,असरत,व्यलपत्, अगच्छन्,असृजाव, आवत्,अरिषाम।

द्वितीय पाठ।

आत्मनेपद।

१ धरित्रीपतिर्यतिमेकं पैक्षत—राजाने एक मुनिको देखा।

अहं कुत्रापि सुखं न अलभे—मैंने कहीं भी सुख न पाया।

१-वर्गके पहिले और तीसरे अक्षरके बाद यदि 'ञ, म, ङ, ण, न' में से कोई होगा तो उस (वर्गके पहिले वा तीसरे अक्षर) को उसी वर्गका पाचवा अक्षर हो जायगा। जैसे-वाग् मधुरा-वाङ्मधुरा, तत् नयन=तन्नयन। २-ह्रस्व स्वरके बाद यदि 'न्, ङ्, ण्. मे से कोई होगा और उस (न्, ङ्, ण्,) के बाद भी कोई स्वर् होगा तो वे 'न्, ङ्, ण्, दो हो जायगे। जैसे-'अस्मिन् एव' यहा पर मकारकी ह्रस्व इकारसे पर 'न्' है और उस 'न्' के बाद फिर 'एव' का 'ए' स्वर है इसलिये 'न' दो होगये तो 'अस्मिन्नेव' हुआ। ३-पृष्ठ ३३ की न० ३ की टिप्पणी देखो। ४-आत्मनेपदी धातुओंके लङ् प्रत्ययके रूप बनानेकेलिये प्रथमपुरुषमें 'त, एता, अत' उत्तमपुरुषमें 'ए, आवहि, आमहि' और मध्यमपुरुषमें 'थाः, एथा, ध्व' लगा देना चाहिये। एवं जिनके आदिमें व्यंजन है उन धातुओंसे पहिले 'अ' और जिनकी आदिमें स्वर है उनसे पहिले 'आ' लगा देना चाहिये। ५-जो लङ् आदिके रूप बनानेकेलिये धातुसे पहिले 'आ' आता है यदि उसके बाद 'इ, ई' होंगे तो उन (आ और इ, ई) दोनोंके स्थान में 'ऐ' उ, ऊ होंगे तो 'औ' ऋ होगी तो 'आर्' हो जायेंगे। जैसे-आ+ईक्षत=ऐक्षत।

त्वं उद्यमेन धनं अलभथाः—तुमने परिश्रमसे धन प्राप्त किया।

२ छात्रौ शीतेन अकंपेतां—दो विद्यार्थी ठंडीसे कांपे।

आवां व्याकरणं अगाहावहि—हम दोने व्याकरण शास्त्रका अवगाहन किया।

युवां तान् अगर्हेथाम्—तुम दोनें उनकी निंदा की।

३ जनाः मुनिं अलोकंत—मनुष्योंने मुनिको देखा।

वयं अन्नं अभिक्षामहि—हमने अन्नकी भीख मांगी।

यूयं मंदं मंदं अस्मयध्वं—तुमलोग मंद मंद मुस्कराये।

नीचे लिखे शब्दोंसे संस्कृत बनाओ—

अशोभत, अमानावहि, अप्रथध्वं, अमोदंत, अद्योतेथां, अक्रियामहि, अशिक्षेतां. अवेपंत, ऐजत।

हिंदी बनाओ—

कदाचिद् वामदेवशिष्यः सोमदेवशर्मा नाम, कंचिदेकं बालकं राज्ञः पुरतो निक्षिप्याऽभाषत। "देव! रामतीर्थे स्नात्वा प्रत्यागच्छन्नहं काननावनौ वनितया कयाऽपि धार्यमाणमेनमुज्ज्वलाकारं कुमारं विलोक्य तां वृद्धां सादरमभणं। 'स्थविरे! का त्वं? एतस्मिन्नटवीमध्ये बालकमुद्वहंती किमर्थमायासेन भ्रमसीति' वृद्धाऽप्यगदत्।" "मुनिवर! कालयवननाम्नि द्वीपे कालगुप्तो नाम धनाढ्यो वैश्यवरः कश्चिदस्ति। तन्नंदिनीं नयनानंदकारिणीं सुवृत्तां नामैतस्माद् द्वीपादागतो मगधनाथमंत्रिपुत्रो रत्नोद्भवो नाम रमणीयगुणालय उद्‌वाहत। कालक्रमेण नतांगी गर्भमधरत्। ततः सहोदरविलोकनलालसया रत्नोद्भवस्तया सह प्रवहण (जहाज) मारुह्य पुष्पपुरमभ्यागच्छन्। जलतरंगताडितः पोतः (जहाज) समुद्रांभस्यमज्जत्। तां ललनां धात्रीभावेन कल्पिताऽहं कराभ्यामुद्वहंती फलक (काठका टुकड़ा) मेकमधिरुह्य दैववशात् तीरभूमिमलभे। सुहृज्जनपरिवृतो रत्नोद्भवस्तत्र निमग्नो वा केनोपायेन तीरमगच्छद्वा न बोधामि। क्लेशस्य परां काष्ठामधिगता सुवृत्ताऽस्मिन्नटवीमध्येऽद्य सुतं सुतवती।

प्रसववेदनया निश्चेष्टा सा प्रच्छायशीतले (छायासे ठंढे) तरुतले निवसति। जनरहिते वने स्थातुमसमर्थतया देशगामिनं मार्गमन्वेष्टुमुद्युक्ताऽहं विवशायास्तस्याः समीपे बालकं निक्षिप्य गमनमनुचितमिति कुमारमप्यनयमिति"। तस्मिन्नेव क्षणे कंचित् वन्यं (जंगली) वारणं (हाथी) वयमलोकामहि। तं विलोक्य भीता सा वृद्धा बालकं निपात्य (गिराकर) प्राद्रवत्। अहं च समीपलतागृहे प्रविश्य परीक्षमाणोऽतिष्ठम्। निपतितं बालकं गृहीतवति गजपतौ भीमरवो (भयंकर शब्द वाला) कंठीरवो (सिंह) न्यपतत्। भयाकुलेन तेन दंतावलेन वियति समुत्पात्यमानो (फेंकागया) बालको भूमावपतत्। तं चाहं ततःपरिगृह्य भवत्सकाशं समागच्छमिति।

संस्कृत बनाओ—

किसी जंगली पशुकी लड़की बहुत ही रूपवती थी। एक दिन उसे किसी सिंहने देखा और वह उसको जी जानसे [प्राणपणेन] चाहने लगा। उसे कामदेवके बाणोंने इतनी पीड़ा दी कि उसकी यादमें वह खाना पीना भी भूल गया। इसलिये वह निःशंक हो शीघ्र ही उस लड़कीके पिताके पास पहुंचा और उसे मांगने लगा। लड़कीके पिताने उस सिंहकी अनुचित इस प्रार्थनाको सुन विचारा "यदि मैं पुत्री देनेसे निषेध करता हूं तब तो यह अभी मुझे मार डालता है और लड़की दे दूं तो इसके संगसे लड़की भी मर जायगी इसलिये इसको किसीतरह [केनापि प्रकारेण] ठगना चाहिये"। इसके बाद वह सिंहसे बोला-"हे मृगराज ! खुशीसे [प्रीत्या] मैं अपनी लड़की आपको दे दूंगा परंतु आपसे यह प्रार्थना करता हूं कि-मेरी पुत्री बहुत ही कोमलांगी है और तुम्हारे नख और दांत अति तीक्ष्ण हैं उनसे उसे पीड़ा होगी। इसलिये आप अपने दांतों को गिराने [पातन] और नखोंको कतरने [कर्तन] की आज्ञा दीजिये"। उसकी यह प्रार्थना सुन कामांध सिंह बोला "अच्छा

[साधु] क्या हानि है ऐसा ही करो" उस जंगली पशुने यह सुन शीघ्र ही उसके नख काट डाले और दांत तोड़ डाले [अपातयत्] अनंतर एक मुद्गर लेकर उसकी कमरमें [कटिभाग] मारा जिससे कि उसीसमय वह मर गया।

नोट—जो धातु उभयपदी हैं उनके रूप दोनों प्रकार (परस्मैपद, आत्मनेपद) से चलते हैं इसलिये उनके रूप दोनो प्रकारकी धातुओंके समान चलाना।

परिशिष्ट (क)।

अदादिगणकी धातुओंका वर्त्तमानकाल (लट्) में प्रयोग।

परस्मैपदी धातु।

१ वधकः पशून् हन्ति—कषायी पशुओंको मारता है।

अहं सद्वाणीं वच्मि—मैं अच्छी बात कहता हूं।

त्वं अनाथान् पासि—तुम अनाथोंकी रक्षा करते हो।

२ राजानौ तेजसा भातः—दो राजा तेजसे शोभित होते हैं।

आवां व्याकरणं विद्वः—हम दोनों व्याकरण जानते हैं।

युवां किमर्थं स्नाथः—तुम दोनों किसलिये स्नान करते हो।

३ गोपाः गाः पांति—ग्वाले गायोंकी रक्षा करते हैं।

वयं सज्जनं स्तुमः—हम सज्जनोंकी स्तुति करते हैं।

यूयं अनर्थं ब्रूथ—तुमलोग अनर्थ कहते हो।

नीचे लिखे शब्दोंसे वाक्य बनाओ—

हंति, हतः, वक्षि, भांति, पांति, स्नाति, वेत्ति, वित्तः, विदंति,

---

१—जिसप्रकार भ्वादि और तुदादिगणीय धातुओंके और प्रत्ययोंके बीचमें 'अ' आता था [तुद्+अ+ति आदि] उसप्रकार अदादिगणकी धातुओंके बीचमें नहीं आता पर प्रत्यय वेही [ति, तः, अति आदि] आते हैं। जैसे—हन्+ति = हन्ति।

२—प्रथम, उत्तम, मध्यम पुरुषके एकवचन' ति, मि, सि' को तथा और भी प्रत्यय जिनका कि [प] इत् गया है उनको पित् कहते हैं और इनसे भिन्न जो त अति,

स्तौति, घ्नंति, वक्षि, वक्तः, ब्रवीति, ब्रूतः, ब्रुवंति, ब्रवीमि, ब्रूथः, ब्रूवः, ब्रूमः, ब्रवीषि, ब्रूथ, अस्ति, स्तः स्यति।

संस्कृत बनाओ—

धीवर लोग मछलियोंको [मत्स्यान्] मारते हैं। हम क्या कहें?।

थः, थ, व, म जिनका प् इत् नहीं गया है और ङ भी इत् नहीं है तो भी वे ङित् कहेजाते हैं। जिन ङित् और कित् [क् जिनका इत् है] प्रत्ययों की आदिमें वर्गके पाचवे (ञ, म, ङ, ण, न) अक्षरको छोडकर कोई भी क से भ तकका या श, ष, स व्यंजन है ऐसे प्रत्ययके पर होनेसे हन्, मन्, यम्, रम्, नम्, गम्, वन् और तनादि गणकी धातुओंके अंतके न् और म् का लोप होजाता है। जैसे-हन्-तः= हत। ३-शब्दके चवर्गको कवर्ग हो जाता है यदि ञ, म, ङ, ण, न, य, व, र, ल, से भिन्न कोई व्यंजन वादमें हों। जैसे वच्-सि=वक्-सि हुआ। कवर्गके वादमें यदि स होगा तो ष होजायगा जैसे-वक् सि वक्-षि=वक्षि (क् और ष् मिलकर क्ष लिखा जाता है)। ४-पित् प्रत्यय परे होनेसे धातुके आदिके 'इ' को ए, और 'उ' को 'ओ' होजाता है। जैसे-विद्-ति=वेद्-ति। वर्गके दूसरे, तीसरे और चौथे अक्षरको उसी वर्गका पहिला अक्षर होजाता है यदि उसके वादमें किसी वर्गका पहिला वा दूसरा अक्षर होगा। जैसे-वेद्-ति=वेत्ति, विद्-तः=वित्त। ५-उकारात अदादिगणकी धातुओंके अतके 'उ' को 'औ' होजाता है यदि ति, सि, मि, और त् या विसर्ग वादमें हो। जैसे स्तु-ति=स्तौति, स्तौषि, स्तौमि। ६-'अङ्' प्रत्ययसे भिन्न कित् और ङित् प्रत्यय वादमें होनेसे 'गम्, हन्, जन्, खन्, घस्' धातुओंके 'अ' का लोप होजाता है। हन् धातुके ह् को 'घ' आदेश होता है यदि 'न्' वादमें हो। जैसे-हन्-अन्ति=ह्न्+अन्ति=घ्न्+अन्ति=घ्नंति। ७-इसी पृष्ठकी न ३ की टिप्पणी देखो। ८-धातुके अतके 'इ, ई' को इय्, 'उ, ऊ' को 'उव्' होजाता है यदि पित्से भिन्न स्वरादि प्रत्यय वादमें हो। जैसे-ब्रू+अंति=ब्रुव्+अति=ब्रुवति। ९-ब्रू धातुसे परे यदि ति, सि, मि, त् और (विसर्ग) वादमें होंगे तो बीचमें 'ई' आवेगा। जैसे-ब्रू+ति=ब्रू ई ति॥ धातुके उ, ऊ को 'ओ' और इ, ई को 'ए' होता है पित् प्रत्यय परे होनेसे। जैसे-ब्रू+ई+ति=ब्रो-ई+ति, हुआ। वादको १५ पृष्ठकी तीसरी टिप्पणीसे 'अव्' हुआ तो ब्र्-अव्-ई-ति=ब्रवीति हुआ। इसीतरह ब्रवीषि, ब्रवीमि। १०-कित् ङित् प्रत्यय परे होनेसे अस् धातुके 'अ' का लोप होता है। जैसे-अस्×तः=स्तः।

वह गुरुकी स्तुति करता है। जो सब पदार्थोंको जानता है वह सर्वज्ञ कहलाता है। लोग गंगामें नहाते हैं।

धात्वर्थ।

हनौ—मारना।	अन—जीना।	ष्टुञ्—स्तुति करना।
पा—रक्षा करना।	रा—देना।	अस—होना।
भा—शोभित होना।	ला—लेना।	इण्—[इ] जाना।
विद—जानना।	ष्णा—[स्ना] नहाना।	ब्रूञौ—बोलना।

आत्मनेपदी धातु।

१ क एवं आस्ते—कौन इसतरह बैठता है।

अहं दिवसे न शये—मैं दिनमें नहीं सोता हूं।

त्वं किं अधीषे [अधि-इषे]—तुम क्या पढते हो।

२ स्त्रियौ व्याकरणं अधीयाते—दो स्त्रिया व्याकरण पढती हैं।

छात्रौ परस्परं ब्रुवाते—दो विद्यार्थी परस्परमें बात चीत करते हैं।

आवां न्यायं अधीवहे—हम दो जने न्याय पढते हैं।

युवां ईश्वरं स्तुवाथे—तुम दोजने ईश्वरकी स्तुति करते हो।

३ अलसाः दिवसे शेरते—आलसी दिनमें सोते हैं।

वयं धर्मशास्त्रं अधीमहे—हम धर्मशास्त्र पढते हैं।

यूयं परस्परं किं ब्रूध्वे—तुमलोग परसर क्या बोलते हो।

१–आत्मनेपदके प्रथम पुरुषमें 'ते, आते, अते' मध्यम पुरुषमें 'से, आथे, ध्वे' और उत्तमपुरुषमें 'ए, वहे, महे' प्रत्यय लगते हैं। २–शीङ् (सोना) धातुमें दीर्घ 'ई' है तो भी उसकी 'ई' को 'ए' होता है। जैसे–शी–ए=शे×ए=(१५ पृष्ठ की तीसरी टिप्पणीसे अय्) शये। ३–इङ् (पढना) धातुका प्रयोग 'अधि' उपसर्ग पहिले लगाकर ही करते हैं केवलका नहीं। जैसे–अधि×इ–ते = अधीते। ४–पृष्ठ ४२ की ८ वीं टिप्पणी देखो। ५–केवल शीङ् धातुसे प्रथम पुरुषके बहुवचनोंमें 'रते' प्रत्यय आता है।

नीचे लिखे शब्दोंसे वाक्य बनाओ—

आसाते, शेये, अधीये, आस्से, ब्रूते, स्तुते, आसते, शयाते, अधीते, स्तुवते, शेरते।

धात्वर्थ।

आसै—बैठना (रहना) शीङ्—सोना (नींद लेना) इङ्—पढना।

हिंदी बनाओ—

नास्ति संदेहो महाप्रभावोऽयं मुनिः। महदपि परदुःखं शीतलं सम्यगाहुः। क्षणे क्षणे यन्नवता [नवीनपना] मुपैति तदेव रूपं रमणीयतायाः। साऽधिशेते कथं देवी ज्वलंतीमधुना चितां। स्तुवेऽहं तं प्रथमं जिनेंद्रं।

परिशिष्ट (ख)।

दिवादिगण धातुओंका वर्तमान कालमें प्रयोग।

परस्मैपदी धातु।

१ हविः शरीरं पुष्यति—घी शरीरको पुष्ट करता है।

अहं सततं दीव्यामि—मैं हमेशा खेलता हू।

त्वं अल्पेन तुष्यसि—तुम थोडेमें सतुष्ट होजाते हो।

२ स्त्रियौ परस्परं श्लिष्यतः—दो स्त्री परसर आलिंगन करती हैं।

आवां तं स्निह्यावः—हम दोनों उसमें प्रीति करते हैं।

युवां किं कुप्यथः—तुम क्यों नाराज हो।

१–ब्रूञ् धातुके लट्‌के प्रथमपुरुषके एकवचनमें आह, द्विवचनमें आहतुः, बहुवचनमें आहुः, मध्यमपुरुषके एकवचनमें आत्थ, और द्विवचनमें आहथुः होता है। २–तुद आदि धातुओंके रूपोंके समान इस गणकी धातुओंके भी रूप चलते हैं केवल इतना ही भेद है कि उन धातुओंके और प्रत्ययोंके बीचमें 'अ' आता है और इनके बीचमें 'य'। जैसे–पुष्+य+ति=पुष्यति। ३–दिवु, पिवु, धातुओंके 'इ' को 'ई' होजाता है।

३ स्त्रियः वस्त्राणि सीव्यंति—स्त्रिया कपडे सीती हैं।

वयं तं दृष्ट्वा नश्यामः—हम उसको देखकर छिप जाते हैं।

यूयं नद्यां लुठ्यथ—तुम लोग नदीमें लोटते हो।

नीचे लिखे शब्दोंसे वाक्य बनाओ—

पुष्यामः, श्लिष्यथः, स्निह्यति, कुप्यसि, सीव्यसि, नश्यति, लुठ्यति, द्रुह्यसि, मुह्यति, माद्यति, क्षाम्यति, शाम्यति, श्राम्यति।

धात्वर्थ।

दिवु—खेलना, जीतनेकी इच्छा करना, चमकना। षिवु—सीवना। क्षिप—प्रेरणा करना।

पुष्प—खिलना। पुषौ—पुष्ट करना।

शुष—सूखना। तुषौ—संतुष्ट होना। श्लिषौ—आलिंगन करना।

णशू—छिपना, नष्ट होना। द्रुह—द्रोह करना। मुह—मुग्ध होना।

ष्णिह [स्निह]—प्रीतिकरना। लुठ—लोटना। कुप—क्रोध करना।

मदी—हर्षित होना, मत्त होना। शमु—शांत होना। श्रमु—थकना।

भ्रमु—चलना। क्षमु—क्षमा करना।

क्लमु—दुःखी होना। दमु—दमन करना। नृतु—नाचना।

संस्कृत बनाओ—

पानी सूखता है। बेलें खिलती हैं। कामी पुरुष सुंदर स्त्रीको देखकर मुग्ध होजाते हैं। दुष्ट लोग उपकारीको द्रोह करते हैं। देव नंदनवनमें क्रीडा करते हैं।

आत्मनेपदी धातु।

१ मृतः को वा न जायते—मरा हुआ कौन आदमी पैदा नहीं होता।

१–मदी, शमु, श्रमु, भ्रमु, क्षमु, दमु, क्लमु इन धातुओंके 'अ' को 'आ' होजाता है 'य' बादमें होनेसे। जैसे–मद्×य×ति = माद्यति, शाम्यति, श्राम्यति, क्षाम्यति, क्लाम्यति। २–पृष्ठ ५९ की १७ टिप्पणी देखो। ३–आत्मनेपदमें भी 'तुदते' आदिके समान लङ् लट् लोट् और विधि लिङ्में रूप समझना और बीचमें 'य' लाना ४–जनीङ् (उत्पन्न होना) धातुके 'न' को 'आ' होजाता है लट्, लङ्, लोट्, विधि-

अहं संसारे क्लिश्ये—मैं संसारमे दुःख पाता हूं।

त्वं तेजसा दीप्यसे—तुम तेजसे दीप्त होते हो।

२ छात्रौ तत्र खिद्येते—दो विद्यार्थी वहां खेदको प्राप्त होवे हैं।

आवां तेन सह युध्यावहे—हम दोनों उसके साथ युद्ध करते हैं।

युवां किं न्यायं बुध्येथे—क्या तुम दोनो न्याय जानते हो?

३ पंडिता एवं मन्यंते—पंडितलोग ऐसा मानते हैं।

वयं न दूयामहे—हम खिन्न नहीं होते है।

पक्षिणो यूयं वियति उड्डीयध्वे—पक्षिगण! तुम आकाशमें उडते हो।

नीचे लिखे शब्दोंसे वाक्य बनाओ—

दूये, उड्डीयते, खिद्ये, मन्ये, युज्यते, जाये, क्लिश्यसे, युध्यंते।

हिंदी बनाओ—

भृत्ये कृतागसि [कृतापराधे] भवत्युचितः प्रभूणां पादप्रहार इति सुंदरि! नात्र दूये। परिणामसुखं शरीरिणां जिनवाक्यं न विहाय विद्यते। तावज्जल्पति, सर्पति, तिष्ठति, माद्यति, विलसति, विभाति। यावन्नरो न जठरं देहभृतां जायते रिक्तं॥ गायति, नृत्यति, वल्गति, धावति पुरतो नृपस्य वेगेन। कर्षति, वपति, लुनीते [काटता है], दीव्यति, सीव्यति, पुनाति [साफ करता है] वपते च। विदधाति किं न कृत्यं जठरानलशांतये तनुमान्॥

धात्वर्थ।

जनीङ्—पैदा होना।	दीपीङ्—दीप्त होना।	क्लिशै—दुःख पाना।
विदीङ्—होना।	खिदौङ्—खिन्न होना।	युधौङ्—प्रहार करना।
बुधीङ्—जानना।	मनौङ्—जानना।	युजौङ्—संभव होना।
दूङौ—दुःखी होना।	डीङौ—उडना।	

१ ङित् इन चार लकारोंमे।

१—पृष्ठ १४८ की ५ नं० की टिप्पणी देखो।

परिशिष्ट (ग)।

स्वादिगणकी धातुओंका वर्तमानकालमें प्रयोग।

१ जनः धर्मेण सुखं आप्नोति—मनुष्य धर्मसे सुख पाता है।

अहं एवं कर्तुं शक्नोमि—मैं ऐसा करनेकेलिये समर्थ हूं।

त्वं धर्मशास्त्रं शृणोषि—तुम धर्मशास्त्र सुनते हो।

२ पापपुण्ये प्राणिनः दुनुतः—पाप पुण्य जीवोंको सताते हैं।

आवां परकार्यं साध्नुवः—हम दोनों दूसरेके कामको सिद्ध करते हैं।

युवां पुष्पाणि चिनुथः—तुम दोनों फूल चुनते हो।

३ नार्यः नरान् वृण्वंति—स्त्रियां पुरुषोंको वरती [पसंद करती] हैं।

वयं वृक्षान् धुनुमः—हम पेड़ोंको कँपाते हैं।

यूयं सत्फलं आप्नुथ—तुम लोग अच्छा फल पाते हो।

नीचे लिखे शब्दोंसे वाक्य बनाओ—

शृण्वंति, शक्नोति, दुनोमि, आप्नुवंति, चिनुथः, धुनोति, शक्नुवंति, चिनुते, वृण्वते, चिन्वे।

धात्वर्थ।

आप्लृ—पाना। शक्लृ—समर्थ होना। श्रु—सुनना।

टुदु—दुःखी होना। साध—सिद्ध करना। चिञ्—इकट्ठा करना।

वृञ्—वरना। धुञ्—कंपाना।

नोट–जिस गणमें केवल आत्मनेपदी धातु नहीं हैं उभयपदी और परस्मैपदी हैं उसमें जब उभयपदियोंके आत्मनेपदमें रूप चलाने हों तो टिप्पणीमें लिखी रीतिसे बनाकर चलाना।

१–स्वादिगणकी धातुओंसे 'लट्, लिङ् [विधि लिङ्], लङ्, लोट्' लकारके [ति, तः, अंति, मि, वः, मः, सि, थः, थ, ते, आते, अते, ए, वहे, महे, से, आथे, ध्वे आदि] प्रत्यय परे रहते बीचमें नु [श्नु] आता है। २–श्रु [सुनना] धातुको लट्, लिङ्, लङ् लोट्में श्र समझना। ३–स्वरांत धातुओंके बाद यदि 'नु' होगा और उसके

परिशिष्ट (घ)

रुधादिगणकी धातुओंका वर्तमान काल (लट्) में प्रयोग।

१ परशुः काष्ठं भिनत्ति—कुल्हाडी काठको काटती है।
अहं पापं छिनद्मि—मैं पापको छेदता हू।
त्वं महीं भुनक्षि—तुम पृथ्वीका भोग करते हो।
२ देवौ नदीजलं रिंक्तः—दो देव नदीके जलको सलाते हैं।
आवां व्यजनं भञ्ज्वः—हम दो जने पंखेको तोडते हैं।
युवां गोधूमान् पिंष्ठः—तुम दो जने गेहुओंको पीसते हो।
३ मुनयः पुण्यपापानि भिंदंति—मुनिगण पुण्य और पापोंको भेदते हैं।
वयं सेवकं अनु-युञ्ज्मः—हम लोग सेवकको प्रेरणा करते हैं।
यूयं तान् वि-शिंष्ठ—तुम लोग उनको शोभित करते हो।

बाद कोई कित् या ङित् स्वर होगा तो 'नु' के 'उ' को व् होगा। जैसे—श्रृ×नु×अति = शृण्वति। परन्तु व्यंजनान्त धातुओंके बादके 'नु' को कित् या ङित् स्वर बादमें होनेसे 'उव्' होगा। जैसे—आप्×नु×अति = आप्नुवति।

१—रुधादि गणकी धातुओंके अंतके अक्षरसे पहिले श्नम् [न] बीचमें आता है यदि 'लट्, लङ्, विधि लिङ्, लोट्' के ति, त आदि प्रत्यय बादमें हों। जैसे-भिदिओंमे 'ति', लाये तो इसमें अंतका अक्षर जो 'द्' है ['इर्' नहीं क्योंकि इत् है] उससे पहिले 'न' आया जिससे कि 'भि न द्×ति' हुआ। फिर १४२ पृष्ठकी चौथी टिप्पणीसे 'द्' का त् हुआ तो भिनत्ति हुआ। २—पृष्ठ १४२ की ३ री टिप्पणी देखो ३—'ति, मि, सि' को छोडकर शेष जितने आत्मनेपद परस्मैपदीके प्रत्यय हैं वे ङित् कहलाते हैं। सो उनके तथा 'कित्'प्रत्ययोंके परे होनेसे श्नम् [न] के अकारका लोप हो जाता है। जैसे भि×न×द्×ते = भिन्त्ते भिंत्ते। रि×न्×च् त = रिंक्त ४—'न्' को बादमें जिस वर्गका अक्षर होता है उसी वर्गका पांचवा अक्षर हो जाता है। रि न् क्×त = रिङ्क्त, भनूज्वः भञ्ज्व। ५—षकार, वा टवर्गके परवर्ती या पूर्ववर्ती सकार, और तवर्ग क्रमसे षकार टवर्ग हो जाते हैं। पिंष्+थ = पिंष्ठ उद्×डीयते उड्डीयते।

नीचे लिखे शब्दोंसे वाक्य बनाओ—

मिन्त्थः, छिनत्सि, भुनक्ति, रिणच्मि, भनज्मि, युनक्ति, विंशिनष्टि, पिंषंति।

छिदिर्ों—[इर्ों-इत् है] विदीर्ण करना। भिदिर्ों—दो टूक करना। भुजो—रक्षा करना। रिचिर्ों—खाली करना। पिष्लृ—पीसना।

उभंजो-[उ, ओ. इत् है] मर्दन करना। युजिर्ों—मिलाना। शिष्लृ—शोभित करना।

परिशिष्ट (ड)।

तनादिगणकी धातुओंका वर्तमान कालमें प्रयोग

१ आचार्यः व्याकरणं तनोति—आचार्य व्याकरणको विस्तारते हैं।

अहं ग्रन्थरचनां करोमि—मैं ग्रंथ रचना करता हूं।

त्वं कटं करोषि—तुम चटाई बुनते हो।

२ छात्रौ विवादं तनुतः—दो विद्यार्थी विवाद करते हैं।

आवां स्वकार्यहानिं न कुर्वः—हम दोनों अपनी कार्यहानि नहीं करते हैं।

युवां किमेवं कुरुथः—तुम दोनों क्यों ऐसा करते हो।

---

१ तनादि गणकी धातुओंके और लट् लङ् विधिलिङ् लोट् लकारोंके ति, तः, अति आदि परस्मैपद प्रत्ययोंके तथा ते, आते, अते, ए, वहे, महे, से, आथे, ध्वे आदि आत्मनेपद प्रत्ययोंके बीचमें 'उ' आता है। जैसे तन्+उ+ते=तनुते। २—पृष्ठ १४२-की ९ नं० की दूसरी टिप्पणी देखो। ३—'कृ' धातुकी 'ऋ' को 'अर्' होजाता है पित् प्रत्यय बादमें रहनेसे परंतु ङित् प्रत्यय बादमें रहनेसे 'उर्' होजाता है। जैसे कृ×उ×ति=कर्×उ×ति=करोति,—कृ+उ+थः=कुर्× उ×थ=कुरुथ.। ४—जिन प्रत्ययोंकी आदिमें 'व' अथवा 'म' है उन प्रत्ययोंके बादमें होनेसे बीचके विकरणसंबंधी 'उ' का इच्छाधीन लोप होता है। परंतु कृ धातुके बीचके 'उ' का सर्वथा लोप होता है। जैसे—तन्×उ+व—तनुवः, तन्वः। कृ+उ+वः=(इसी पृष्ठकी ३ नं० की टिप्पणी देखो) कुर्+उ+व=कुर्वः।

३ साधवः सत्तपः तन्वंति—साधु लोग श्रेष्ठ तप करते हैं।

वयं एवमेव सदा कुर्मः—हम सदा ऐसा ही करते हैं।

यूयं न्याय्यं कुरुथ—तुम लोग न्याय्य बात करते हो।

नीचे लिखे शब्दोंसे संस्कृत बनाओ—

तनोमि, करोति, तनोषि, कुरुतः, कुर्वंति, तनुते, तन्वते, मनुते, कुर्वाते, तन्वे, कुरुषे, तन्वहे, तनुवहे, क्षिणोति।

धात्वर्थ

तनुञ्-विस्तार करना। डुकृञ्-करना। मनुङ्-जानना। क्षिणुञ्-हिंसा करना।

परिशिष्ट (च)

क्र्यादि गणकी धातुओंका वर्तमानकाल [लट्] में प्रयोग

१ वणिक् धान्यं क्रीणाति—बनिया धान्योंका क्रय विक्रय करता है।

अहं छात्रं प्रीणामि—मैं विद्यार्थीको संतुष्ट करता हूं।

त्वं किं सर्वं जानासि—क्या तुम सब जानते हो।

२ कृषीवलौ धान्यानि पुनीतः—दो किसान धान्योंको साफ करते हैं।

आवां पुस्तकानि गृह्णीवः—हम दो जने पुस्तकें लेते हैं।

युवां वृक्षान् लुनीथः—तुम दो जने पेड़ोंको काटते हो।

३ चौराः धनं मुष्णंति—चोर धनको चुराते हैं।

---

१ क्र्यादिगणकी धातुओंके और लट्, विधि लिङ्, लङ्, लोट् लकारके ति, ते आदि प्रत्ययोंके बीचमें ना [श्ना] आता है। जैसे-क्री×ना×ति=क्रीणाति आदि। २-ज्ञा [जानना] धातुको लट्, विधि लिङ्, लङ्, लोट्के प्रत्यय परे होनेसे 'जा' आदेश हो जाता है। ३-व्यंजनादि त, ते आदि कित् या ङित् प्रत्यय परे होनेसे ना [श्ना] के 'आकारको' 'ई' हो जाता है। जैसे कि-क्री+ना×त =क्रीणीतः, जानीव, लुनीते। ४-पूञ् और लूञ् धातुके 'ऊ' को ह्रस्व 'उ' तथा बन्ध, और मन्थ के 'न' का लोप हो जाता है लट्, विधि लिङ्, लङ्, लोट् के प्रत्यय बादमें होनेसे। ५ जिसकी आदिमें स्वर है ऐसे कित् या ङित् [पृ. १४१ टि. २ देखो] प्रत्यय परे होनेसे 'श्ना' के 'आ' का लोप होजाता है। जैसे-क्री×ना+अंति=क्रीणंति, क्रीणा-ए=क्रीणे

वयं चौरान् बध्नीमः—हम लोग चोरोंको बाधते हैं।

यूयं शास्त्राणि ग्रथ्नीथ—तुम लोग शास्त्रोंको रचते हो।

नीचे लिखे शब्दोंसे वाक्य बनाओ—

क्रीणीते, जानंति, पुनीवहे, गृह्णीथः, प्रीणंति, गृह्णाति, गृह्णंति गृह्णते, क्रीणे, लुनते।

धात्वर्थ

डुक्रीञ्—लेन देन करना।	प्रीञ्—तृप्त करना।	ज्ञा—जानना।
पूञ्—साफ करना।	ग्रहञ्—ग्रहणकरना।	लूञ्—छेदना।
मुष—चुराना।	बंधो—बाधना।	ग्रंथ—पुस्तक रचना।

परिशिष्ट (छ)।

चुरादिगणकी धातुओंका वर्तमानकालमें प्रयोग।

१ स्तेनः धनं चोरयति—चोर धन चुराता है।

अहं तं चिंतयामि—मैं उसकी याद करता हूं।

त्वं जीवान् पीडयसि—तुम जीवोंको पीडा देते हो।

२ बालौ मोदकौ भक्षयतः—दो लडके दो लड्डू खाते हैं।

आवां तान् छादयावः—हम दो जने उनको ढकते हैं।

युवां चोरं ताडयथः—तुम दो जने चोरको ताडना देते हो।

३ नार्यः शरीराणि मंडयंति—स्त्रियां शरीरोंको भूषित करती हैं।

---

१ चुर आदि धातुओंसे सब कालके रूप चलाते समय 'णि' आता है। 'ण' इत होनेसे धातुओंके अंत अक्षरसे पहिले 'अ' को 'आ' 'इ' को 'ए' और 'उ' को 'ओ' हो जाता है। जैसे—छद्–इ-छाद्+इ, चुर×इ = चोर् इ। उसके बाद णिके, 'इ' को अय् हो जाता है। जैसे—चोर्+इ = चोर्+अय् = चोरय्। इस तरहका रूप होजानेके बाद ति आदि प्रत्यय आनेसे भ्वादि गणकी धातुओंके समान रूप चलते हैं। ये धातु सब उभयपदी हैं। २–प्रथम भागके १६२ पृ. की २ री टिप्पणी देखो।

वयं ईश्वरं ईडयामः—हम ईश्वरकी स्तुति करते हैं।

यूयं धनं अर्जयथ—तुमलोग धन कमाते हो।

नीचे लिखे शब्दोंसे वाक्य बनाओ—

चेतयत्ते, चोरयसे, पीडयध्वे, ताडये, छादयावहे, ईडये, अर्जयामि, मंडये।

धात्वर्थ।

चुर—चुराना।	चिंति—चिंता करना,	पीड—पीडा देना।
भक्ष—खाना।	याद करना।	छद्—ढकना।
तड—मारना।	मडि—भूषित करना।	ईड—स्तुति करना।
अर्ज—कमाना।	भूष—भूषित करना।	सूच—सूचना देना।

परिशिष्ट (ज)

जुहोत्यादिगणकी धातुओंका वर्त्तमान (लट्) कालमें प्रयोग।

१ पुरोधाः अग्नौ हविः जुहोति—पुरोहित आगमें घीकी आहुति देता है।

१—ह्वादिगणकी धातुओंके 'लट्, लङ्, विधि लिङ्, लोट्' इन लकारोंके और अन्य समस्त गणकी धातुओंके लिट् लकारके रूप चलाते समय दो रूप होजाते हैं। परन्तु जिन धातुओंकी आदिमें स्वर है उनके उस स्वरको द्वित्व न होकर बचे हुये अक्षरोंको द्वित्व होता है। धातुके दोरूप होनेपर पहिले रूपके स्वरको ह्रस्व होजाता है। जैसे–हु धातुसे लट्के रूप चलानेकेलिये 'ति' प्रत्यय लाये तो धातु 'हु' के दो रूप 'हु+हु+ति' होगये (यहा धातुके पहिले रूपमे ह्रस्व 'उ' है इसलिये ह्रस्वका ह्रस्व ही रहा। दीर्घका ह्रस्व जैसे–दा धातुसे दा+दा+ति=द+दा+ति=ददाति) [ख] धातुके जो दोरूप होते हैं उनमें पहिले रूपके वर्गके चौथे अक्षरको उसी वर्गका तीसरा अक्षर, वर्गके दूसरे अक्षर को उसी वर्गका पहिला अक्षर कवर्गको चवर्ग और हकारको जकार होजाता है। जैसे–हु×हु+ति इस जगह पहिला रूप जो 'हु' है उसको-'जु' होगया तो जु+हु+ति हुआ। १४२ पृष्ठकी ९नंबरकी टिप्पणीसे 'उ' को 'ओ' होगया तो जुहोति हुआ।

अहं तस्मै पुस्तकानि ददामि—मैं उसे पुस्तकें देता हूं।

त्वं अनाथान् दधासि—तुम अनाथोंको पोषते हो।

२ छात्रौ चौरेभ्यः बिभीतः—दो विद्यार्थी चोरोंसे डरते हैं।

आवां कुकृत्यं जहावः—हम दोजने कुकर्म छोडते हैं।

युवां हविः जुहुथः—तुम दोजने घीका हवन करते हो।

३ छात्राः अष्टद्रव्यं जुह्वति—विद्यार्थी अष्टद्रव्यका हवन करते हैं।

वयं धनं दद्मः—हम धन देते हैं।

यूयं दरिद्रान् धत्थ—तुमलोग दरिद्रोंकी रक्षा करते हो।

बिभेति, बिभ्यति, बिभेमि, बिभीवः, बिभीमः, बिभेषि, बिभीथः, बिभीथ, दत्तः, ददति, दद्वः, दध्मः, दधासि, धत्थः, दधाति, धत्तः, दधति।

धात्वर्थ।

हु—हवन करना। डुदाञ्—देना। डुधाञ्—धारना, पोषना। ञिभी—डरना।

सूचना—परिशिष्टमें दिये गये गणोंकी धातुओंके लट्, लोट्, विधिलिङ् और लङ् आदि लकारोंके तथा क्त आदि प्रत्ययोंके रूप पृथक् २ नहीं बताये गये हैं सो उनके रूप भ्वादि और तुदादि गणकी धतुओंके लडादिके रूपोंकी तथा जिसगण की वह धातु हो उस गणकी टिप्पणीको देख कर चलाना।

१—पृष्ठ १५२ की १ नं० की टिप्पणी देखो। २—इस गणमें प्रथमपुरुषके बहुवचनमें 'अंति' प्रत्यय न आकर 'अति' आता है। संधिके लिये ३३ पृष्ठ नं० ३ की टिप्पणी देखो। ३—जुहोत्यादि गणकी आकारांत धातुओंके दूसरे रूपके 'आ' का लोप हो जाता है विधि लिङ्, लट् लोट् और लङ् के कित् वा ङित् प्रत्यय पर होनेसे। जैसे—दा-दा म—द द् म। ४ डुधाञ् धातुके दो रूप होनेसे जहांपर कि दूसरे रूपके 'आ' का लोप होगया हो वहा पहिले रूपके 'ध' को जो १५२ पृ की नं० १ (ख) की टि० से 'द' होगया था उसको फिर ध हो जाता है य, र, ल, व, ङ म ङ ण न से भिन्न व्यंजन बादमें रहनेसे।

साहित्यपरिचय

हिंदी बनाओ—

रुणद्धि पापं, कुरुते विशुद्धिं ज्ञानं तदिष्टं सकलार्थविद्भिः ॥ १ ॥
क्रोधं धुनीते, विदधाति शांतिं, तनोति मैत्रीं, वि-हिनस्ति मोहं ।
पुनाति चित्तं, मदनं लुनीते, येनेह बोधं तमुशंति [वदंति] संतः॥ २ ॥
तमो धुनीते, कुरुते प्रकाशं, शमं विधत्ते, विनि-हंति कोपं ।
तनोति धर्मं वि-धुनोति पापं ज्ञानं न किं किं कुरुते नराणां ॥ ३ ॥
क्रीणाति, खनति, याचति, गणयति, रचयति विचित्रशिल्पानि ।
जठरपिठरीं न शक्तः पूरयितुं गतशुभस्तदपि ॥ ४ ॥
सद्यः पातालमेति, प्रविशति जलधिं गाहते देवगर्भं
भुंक्ते भोगान् नराणाममरयुवतिभिः सं-मं याचते च ।
वांछत्यैश्वर्यमार्य रिपुसमितिहतेः कीर्तिकांतां ततश्च
धृत्वा त्व जीव ! चित्तं स्थिरमतिचपलं स्वस्य कृत्यं कुरुष्व ॥ ५ ॥
पापं वर्धयते, चिनोति कुमतिं, कीर्त्यंगनां नश्यति,
धर्मं ध्वंसयति, तनोति विपदं, संपत्तिमुन्मर्दति ।
नीतिं हन्ति विनीतिमत्र कुरुते, कोपं धुनीते समं
किं वा दुर्जनसंगतिर्न कुरुते लोकद्वयध्वंसिनी ॥ ६ ॥
धर्ममत्ति तनुते गुरुपापं या निरस्यति गुणं कुरुतेऽन्यं (दोषं)।
सौख्यमस्यति ददाति च दुःखं तां धिगस्तु गणिकां बहुदोषां ॥७॥

१—समस्त गणकी समस्त धातुओंसे णि प्रत्यय आता है और उसके रूप चुरादि गणकी धातुओंके समान होते हैं परंतु अर्थमें भेद होता है। चुरादि गणमें तो जो धातुका अर्थ है वही रहता है और अन्य गणकी धातुओंका 'प्रेरणा' अर्थ बढ जाता है। जैसे कि—देवदत्तो वदति=देवदत्त बोलता है। देवदत्तो वद्×इ×वादय्×अति=वादयति—देवदत्त बुलवाता है अर्थात् स्वयं नहीं बोलता दूसरे को बोलनेकी प्रेरणा करता है। इसीतरह 'दुर्जनसंगति पाप वर्धयते' इससे यह अभिप्राय निकलता है कि—दुर्जनकी संगति पापको बढनेमें प्रेरणा करती है।

हंति, ताडयति, भाषते वचः कर्कशं, रटति, खिद्यते, व्यथां।
संतनोति, विदधाति रोदनं, द्यूततोऽथ कुरुते न किं नरः॥ ८॥
रुध्यतेऽन्यकितवैर्निषेध्यते वध्यते वचनमुच्यते कटु।
नोद्यतेऽत्र परिभूयते नरो हन्यते च कितवो विनिद्यते॥ ९॥

एकदा घर्मकाले आतपक्लांत एकोऽजशिशुः पिपासापीडितो भूत्वा जलं पातुमदूरवर्तिनीमल्पसरितमैत्। तत्रोन्नतप्रदेशे जलं पिबंतं वृकमीक्षित्वा निम्नप्रदेशस्थं जलमादातुमारभत सः। वृकस्तु दूरात् तं दृष्ट्वा "केनापि निमित्तेन कलहमुत्पाद्याहमेनं व्यापादयामि भक्षयामि च" इति मनस्यकरोत्। ततस्तमभिगत्यावोचत्–"आ॰ पाप! कथं मां न गणयसि! यदेवं जलमाविलयसि (मैला करते हो) किंनिमित्तोऽयमनुचितारंभः। इति तूर्णं निवेदय, नो चेत् वध्यो भवसि" भीतः सोऽजशिशुः सविनयमकथयत् "भो वृकश्रेष्ठ! यदत्र भवान् (पूज्य) ब्रूते तत्कथं संभवेत्, भवतो यज्जलं वहति तदहं पिबामि, एवं स्थिते मया कलुषितं जलं प्रतिकूलं त्वां कथं यायात्"। वृकोऽवोचत "अस्तु नामैतत्। त्वमधमोऽसि। षण्मासात् प्राक् मां त्वमशप इत्यहमश्रृणवम्" सोऽजशिशुरब्रवीत् '-हा कष्टं! कथमस्य संभवः? यद् मां जातस्य मासत्रयमपि न पूर्णं सोऽहं षण्मासात्प्राक् भवंतमशपमिति कथं संभवेत्" वृकोऽत्रापि निरुत्तरोऽभवत्। ततो महताऽऽवेशेन नेत्रे विस्फार्य दंतैर्दंतान् विघट्टयन् पादाघातैर्भुवं कंपयन्निव तमुपसंगम्य तारस्वरेणावोचत्–"भो दास्याः पुत्र! यदि त्वं नाशपस्तर्हि शप्ता तव पित्रा भाव्य। नो विशेषः" एवमुक्त्वा स तं दीनमहन्।

१–कर्मवाच्य और भाववाच्यमें समस्तगणोंकी धातुओंके एकसे ही रूप होते हैं। इसलिये ३५ पृष्ठके वाच्य परिवर्तनकी टिप्पणी देखो। २ ह्रस्व अकारके बाद यदि 'य' अथवा 'व्' होगा और उस य् अथवा व् के बाद कोई स्वर होगा तो य् और व् का इच्छाधीन लोप हो जायगा। जैसे–घर्मकाले+आतप=घर्मकाल आतप, घर्मकालयातप।

षष्ठ अध्याय ।

संपूर्णगणकी धातुओंका परोक्षभूत (लिट्) कालमें प्रयोग

प्रथम पाठ ।

परस्मैपदी धातु ।

१ छात्रः व्याकरणं पपाठ,—विद्यार्थीने व्याकरण पढ लिया ।
अहं मत्ता बहु जगद, जगाद—मैं मत्त हुई बहुत बोली ।
त्वं ग्रामं वव्रजिथ—तुम गावको गये ।
२ क्षत्रियौ नगरं ररक्षतुः—दो क्षत्रियोंने गावकी रक्षाकी ।
आवां स्वप्ने जग्मिव—हम दोनों स्वप्नमें चले ।

१—लिट् लकारके परस्मैपदमें रूप चलानेके लिये प्रथमपुरुष में णल् (अ) अतु, उः उत्तमपुरुष में णल् (अ) व, म, मध्यमपु में थ, अथुः अस् (अ) प्रत्यय आते हैं। जैसे 'पठ' धातुसे णल [प्र पु०] आया तो 'पठ्×अ' हुआ। १५२ पृ. १ नबरकी टिप्पणीसे दो रूप हुये तो पट्–पट्–अ हुआ। (ख) धातुके जो दो रूप होते हैं उनमें पहिले रूपके आदिके स्वरसहित एक अक्षरको छोडकर बाकीके सब अक्षरोंका लोप होजाता है। जैसे–'पट्–पट्–अ' यहा पर पहिला रूप जो पट् है उसमें पहिलेका स्वर सहित एक अक्षर 'प' बच रहा और बाकीका जो 'ठ्' था उसका लोप होगया तो प–पठ्–अ रहा। अब–ञित् और णित् प्रत्ययबादमें रहनेसे शब्दके अत अक्षरसे पहिले अक्षरमेंके 'अ' को 'आ' हो जाता है। इसलिये 'प+पठ्×अ' यहा पर णित् प्रत्यय णल् का 'अ' बादमें रहनेसे पठ्मेंके 'प' के 'अ'को 'आ' हो गया तो पपाठ हुआ। इसीतरह जुहोत्यादिगणके और यहाके नियम देखकर अन्य धातुओंके रूप चलाना। २–उत्तमपुरुषके णल् प्रत्ययके बादमें रहनेसे धातुके अत अक्षरके पहिले 'अ' को आ इच्छाधीन होता है–अर्थात् होता भी है और नहीं भी होता। ३–धातुसे यदि लिट् लुट्, लृट्, लृङ् और लृङ् लकारका इ और य व्यंजनसे भिन्न व्यंजनादि प्रत्यय बादमें होगा तो बीचमें इ (इंट्) आवेगा जैसे मज्+थ=व+मज्+थ=बमजिथ। ४–पृष्ठ १४२ की ६ नंबरकी टिप्पणी देखो।

युवां ओदनं चखादथुः—तुम दोनोंने भात खाया।

३ शिष्याः गुरुं पप्रच्छुः—शिष्योंने गुरुको पूछा।

वयं मत्ताः जगदिम—हम लोग मत्त हुये बोले।

यूयं धनं जह्र—तुम लोगोंने धनको हरण किया।

नीचे लिखे शब्दोंसे वाक्य बनाओ—

जहार, चकर्त्त, दिदेश, आनर्च, आर्ट, रिरेष, जग्मुः, पस्पर्श, तुतोदिव, विविश। उवाच ऊचतु, ऊचुः, जघान, जघ्नतुः, जघ्नुः, पपौ, पपतुः, पपुः, विवेद, विविदतुः तताान, तेनतुः, तेनुः, चिक्राय, चिक्रियतुः, चिक्रियुः।

१-जिस धातुमें 'ऋ' है उसके दो रूप होनेपर पहिले रूपकी ऋको 'अ' हो जाता है। जैसे-हृ+हृ+अ=(१५२ पृष्ठकी ख टिप्पणीसे हको ज) ज+हृ+अ=जह। २-पृष्ठ १७ की चौथी टिप्पणी देखो। ३-जिस धातुकी आदिमें 'अ' स्वर है और उस स्वरके बादमें संयुक्त व्यंजन है तो उस 'अ' को दीर्घ 'आ' होजायगा और उन व्यंजनोंके और 'आ' के बीचमें 'न' (नुक्) आजायगा। जैसे अर्च+अ=आ+न+र्च्+अ=आनर्च। ४-(क) जिन अकारादि धातुओंके अतमें सयुक्त व्यंजन नहीं है उनके अकारको केवल दीर्घ ही होगा नुक् नहीं। (ख) धातुके दो रूप होनेपर आदिके व्यंजनको छोडकर दूसरे तीसरे आदि सब व्यंजनोंका लोप हो जाता है। जैसे-अट (जाना) धातुसे लिट् लकारके प्र पु. एकव मे णल् आया तो १५२ पृष्ठकी १ नंबरकी टिप्पणीसे स्वरके बादके अक्षर ट को दो रूप होनेसे 'अट्+ट्+अ' हुआ और इस टिप्पणीके [ख] नियमसे आदिके ट् को छोड दूसरे ट् का लोप होगया जिससे कि अट्+अ रहा। पश्चात् इसी टिप्पणीके [क] नियमसे दीर्घ हुआ तो आट हुआ। ५-जिस धातुकी आदिमें श, ष, स मेंसे कोई है और उन श, ष, स के बाद वर्गका पहिला वा दूसरा अक्षर है तो उस धातुके दो रूप होनेसे पूर्व रूपके श, ष, स नष्ट हो जाते हैं और दूसरे व्यंजनको छोडकर शेष और पासके सब व्यंजन नष्ट होजाते हैं अर्थात् केवल स्वर सहित दूसरा व्यजन बाकी रहता है। जैसे स्पृश+स्पृश्+अ=पस्पर्श। ६-पृ. १६७ टि. १ देखो। ७-पृ. १५८ की दूसरी और १५९ की टि. १ देखो। ८-पृ. १५८ टि. ४ देखो।

द्वितीय पाठ ।

आत्मनेपदी धातु ।

१ इति हिरण्यनामा कश्चित् अभिदेधे—यह हिरण्य नामक किसी मनुष्यने कहा ।

अहं दृष्ट्वा तं स्वप्ने अति-मुमुदे—मैं स्वप्नमें उसे देखकर अति प्रसन्न हुआ

त्वं सत्तपस्विनं ईक्षांचकृषे—तुमने श्रेष्ठ तपस्वीको देखा था ।

२ पंडितौ तदेवं जज्ञाते—दो पंडितोंने उसे ऐसा समझा ।

आवां पूर्वं ववृधिवहे—हम दो जने पहिले बढे थे ।

युवां महद्धनं चोरयांचक्राथे—तुम दोनोने बहुत धन चुराया था ।

३ जनाः तद्राज्यकाले मुमुदिरे—लोग उसके राज्यसमयमें प्रसन्न हुये थे ।

वयं वस्त्राणि चिक्रियिमहे—हम लोग वस्त्रोंका लेन देन करते थे ।

यूयं ओदनं पेचिध्वे—तुम लोगोंने चावल पकाये थे ।

नीचे लिखे शब्दोंसे वाक्य बनाओ—

मुमुदाते, दधिरे, पेचे, चोरयांचक्रे, जज्ञे, मुमुदिषे, पेचाते, चोरयांबभूवतुः, चोरयामासुः, शिश्ये, शिश्याते, शिश्यिरे, चक्रिरे ।

हिंदी बनाओ—

भगवान् हसन्निति जगाद कारणं। धर्मरुचिरिति सुरश्चिदि-

---

१ आत्मनेपदमें लिट्लकारके रूप चलानेकेलिये प्र पु में ए, आते, इरे, मध्यमपु. में-से, आथे, ध्वे और उत्तमपु० में ए, वहे, महे प्रत्यय लगते हैं और द्वित्व आदि कार्य परस्मैपदके समान होते हैं । २ आकारांत धातुके द्वित्वके दूसरे रूपके अंतके 'आ' का लोप होजाता है । ३ जिनधातुओंकी आदिमें दीर्घ 'ई ऊ, ॠ हैं' उनके (ॠच्छ, ऊर्णके सिवाय) तथा कास्, अनेक स्वरवालियों और णि सन् आदि प्रत्ययांत धातुओंके लिट्में दो रूप नहीं होते लेकिन अंतमें आम् लगाकर कृ, भू, अस् धातुके लिट्के रूप लगा देते हैं और कृ, भू, अस् का जो पद है' उभयपद या परस्मैपद' है उसीमें रूप चलते हैं। जैसे-ईक्ष—आम्—चक्रे, = ईक्षाचक्रे, ईक्षाचकार, ईक्षामास, ईक्षाम्बभूव, चोरयामास आदि । ४—लिट्लकारका कित् या

वात् ('स्वर्गात्') समुपा-यंयौ विकृतवृद्धविग्रहः। मेजुरमरनिवहाः स्वभुवं। तस्य जननसमये पवनः सुरभिर्ववौ सुरभयन् दिगंगनाः। प्र-जगर्जुरूर्जितरवं गजारयः [सिंहाः]। तं महिमानं स हिरण्यजं विवेद। विलुलोके स जनं पलायमानं। उपजातकुतूहलः कुमारः परि-पप्रच्छ पलायनस्य हेतुं। ददृशे च गतेन तेन तस्मिन् नगरं तद् रिपुसैनिकैः परीतं। विधवां स चकार तस्य राज्यलक्ष्मीं। राज्ञा बुबुधे जातिकुलोन्नतिस्तदीया। गुरुविष्टर[सिंहासन]मास्थितेन तेन स्मितपूर्वं स कृताशिषा बभाषे। अधिपस्तं विससर्ज नम्रमौलिः। नृपः पुरं रुरोध गत्वा सभयैः पौरजनैर्विलोक्यमानः। हृदि सस्मार दृढस्मृतिर्हिरण्यं। मुमुचे नृपेन तेन कोपादरिमोहप्रबलेन तामसास्त्रं। द्विपतां बले विपुलतेजसि श प्रबबंध कीटकाधियं प्रधने (युद्धे)। निजनाम सर्वभुवनप्रथितं दधुरर्थशून्यमधिपाः ककुभां [दिशा]। तिलकः क्षितेरुप-चिकाय कलाः। जनता (जनसमूह) तं प्र-णनाम बालमिव चंद्रमसं। मनो न जह्ले व्यसनैर्मनस्विनः। अधीश्वरः सुतेन तेनैव रराज जिष्णुना [जयशीलेन]। तपः समाधिशिश्रिये नृपतिभिः समं भूरिभिः [बहुभिः]। विनीतः शिष्यवद् भेजे देशं मुनिसमाश्रितं। 'लोकः' शीतांशवे[चंद्राय]न नितरां स्पृहयांबभूव। सर्वां बुभोज वसुधां निजतेजसैव। या कांतिमापाधिपतेः परिभूय

कित् प्रत्यय अथवा जिसकी आदिमें इट् है ऐसा प्रत्यय परे होनेसे पहिले रूपके असंयुक्त व्यंजनके बाद यदि दूसरे रूपका प्रारम्भका व्यंजन अकारांत होगा तो पहिले रूपका तो सर्वथा नाश हो जायगा और दूसरे रूपके प्रारंभिक व्यंजनके 'अ' को 'ए' होजायगा। जैसे–पच्–अतु = प–पच्–अतु = पेचतु, पच–इवे–प–पच–इ–वे = पेचिवे। १-आकारांत धातुसे परके णश् को औ होजाता है। २-कर्मवाच्यमें आत्मनेपद हो जानेके सिवाय कुछ विशेष भेद प्रायः नहीं होता। ३-चिन् (इकट्ठाकरना) धातुके लिट्के दूसरे रूपके 'च' को 'क' इच्छाधीन होता है। चिकाय, चिचाय।

तस्थौ। 'स नृपः' देव्या सुखान्युनुभवन् दिवसान् निनाय। 'स' देवीमुदश्रुनयनां सहसा ददर्श। गर्भं कियद्भिरथ सा दिवसैर्बभार। अभ्युद्यमः [प्रयत्न] सह ननाश वलित्रयेण। उदयनिलये (उदयशील) जाते तस्मिन् ननंद स नंदने (पुत्रे)। न पस्पृशे दोषगणैः कुमारः। नृपाः प्रणेमुः प्रणतैकवत्सलं। विलोकयामास स सेवयाऽऽगतं सभाऽजिरे (अंगणे) राजगजं प्रजापतिः। धीरधीर्जघान मुष्टया घनपीवरे करे। नरेश्वरस्तं प्रणिपत्य योगिनामधीश्वरं स्तोतुमिति प्रचक्रमे। अपि शशंस स गोकुलवासितां (गौओंके झुडमें रहनेको)। क्षितिषु गौरिव गौ-(वाणी) जगतीभुज-(नृपस्य) श्चिरतरं विचचार निरंकुशा। वसुमतीपतिरपि स वाहिनीं (सेनां)।

सप्तम अध्याय

समस्तगणकी धातुओंका सामान्यभूत (लुङ्)कालमें प्रयोग

प्रथम पाठ।

परस्मैपदी धातु।

१ नेत्रद्वयं धवलतां अगमत्—दोनों आखे श्वेत होगई।

अहं शत्रुं अजैषम्—मैंने शत्रुको जीता।

---

१ धातुओंसे लुङ् लकारके [त, ता, उ, , त, त, अम, व, म] आदि लङके समान प्रत्यय आनेपर मध्यमें कहीं अङ् [अ] कहीं चङ् [अ] कहीं क्स (स) कहीं चि [इ] और कहीं सि [स्] आता है एव व्यंजनादि समस्त धातुओंके प्रारभमें 'अ' तथा स्वरादि धातुओंकी आदिमें 'आ' लगाया जाता है। २ जिनधातुओंका 'ऌ' इत् गया है उनसे 'अङ्' आता है जैसे गम्ऌ, आप्ऌके गम्+अ+त्=अगमत, आप्×अ×त्=आ×आप्+अ×त्=आपत्। ३ जिनधातुओंके लुङ्के मध्यमें अङ् आदि कोई नहीं आते उनके मध्यमें सि [स्]प्रत्यय आता है और परस्मैपदमें उस सिके आनेसे धातुके अतके 'इ ई' को ऐ, 'उ,ऊ' को औ, 'ऋ, ॠ' को 'आर् हो जाता है। जैसे—जि+स्+अं=अ+जि+ष्+अ=अजैषं।

त्वं किमेवं अवादीः—तुमने ऐसा क्यों कहा।

२ भिक्षुकौ भिक्षां अयाचिष्टाम्—दो भिखारियोंने भीख मांगी।

आवां वाराणसीं अव्राजिष्व—हम दोनों बनारस गये थे।

युवां जीवान् अवधिष्टं—तुम दोने जीवोंको मारा।

३ छात्राः विद्यालयं अमुचन्—विद्यार्थियोंने विद्यालय छोडा।

वयं सर्वज्ञं अनंसिष्म—हम लोगोंने सर्वज्ञको नमस्कार किया।

यूयं हृषीकसुखं अन्वभूत—तुम लोगोंने इंद्रियसुखको भोगा।

नीचे लिखे शब्दोंसे वाक्य बनाओ—

अजैषीत्, अजैष्टाम्, अजैषुः, अजैषीः, अजैष्टं, अजैष्ट, अजैष्व, अजैष्म, अगमतां, अगमन्, अगमः, अगमतं अगमत, अगमं, अगमाव, अगमाम, अवादीत्, अवादिष्टां, अवादिषुः, अवादीः, अवादिष्टं, अवादिष्ट, अवादिषं, अवादिष्व, अवादिष्म, अभूत्, अभूतां, अभू-

१–जिन धातुओंका 'ऌ' या 'औ' इत् है या जिनके अंतमें 'आ, इ, ई, उ' मेंसे कोई स्वर है उन धातुओंके सिवाय समस्त धातुओंके और 'सि' प्रत्ययके बीचमें इट् [इ] आता है। जैसे "वद्×स्+ =अ+वद्+स्×ः=अवद्×इ×स्+ः" हुआ। अब–(ख) 'सि [स्] और त् [प्र० पु० एकव] एवं '' (विसर्ग-म. पु ए. व) के बीचमें ईट् (ई) आता है। [ग] यदि वह सि (स्) इट् और ईट् के बीचमें आजाय तो नष्ट हो जाती है। इस नियमसे 'ई' आया तो 'अवद्×इ×स्+ई+ यह अवस्था हुई। यहां इट् एवं ईट्के बीचमें 'स्' आगया है इसलिये वह नष्ट हुआ तो संधि होनेसे तथा [घ] 'वद व्रज, और रकारांत, लकारांत, धातुओंके अंतके अक्षरसे पहिले ह्रस्व 'अ' को सि परहोनेसे दीर्घ होजाता है" इसनियमसे 'आ' होनेसे 'अवाद्+ई+ः'='अवादीः' हुआ है। २ यम् रम्, नम् और दा, धा के सिवाय शेष आकारांत धातुओंसे सि [स्] आनेपर उस सि [स्] से पहिले 'सि' आती है। जैसे नम्×स्+म = अनम्+सि+स्×म—अनसिष्म। ३-द, धा, भू, स्था, इण्, इक् पा [पीना] इन धातुओंके परवर्ती परस्मैपदके सि [स्] का लोप होजाता है। अ× भू स् त अभूत, अदात्, अधात्।

वन्, अभूः, अभूतं, अभूत, अभूवं, अभूव, अभूम, अनंसीत्, अनंसिष्टां, अनंसिषुः, अनंसीः, अनंसिष्टं, अनंसिष्ट, अनंसिषं, अनंसिष्व, अनंसिष्म, अयासीत्, अयासिष्टां, अयासिषुः, अदात्, अदातां, अदुः, अदाः, अदातं, अदात, अदां, अदाव, अदाम, अविक्षत्, अविक्षतां, अविक्षन्, अविक्षः, अविक्षतं, अविक्षत, अविक्षं, अविक्षाव, अविक्षाम, अचूचुरत्, अचूचुरतां, अचूचुरन्, अचीकरत्, अचीकरतां, अचीकरन्, अचकथत्, अचकथतां, अचकथन्,

---

१–दृश् धातु को छोड कर जिस धातुके अंतका अक्षर श, ष, स में में कोई एक है और उस अंतके श, ष से पहिले यदि इ, ई, उ, ऊ, ऋ, ॠ में से कोई स्वर है तो उस धातुके तथा त् आदि प्रत्ययोंके बीचमें क्स [स] आता है। जैसे विश×त्–अ+विश्+स×त [पूर्वके समान श् को ष और उस षको क, तथा सको ष=क्+ष=क्ष] अविक्षत्।

२–जिन धातुओंमें णि होता है उनमें लुङ् लकारके रूप बनानेके लिये त् आदि परस्मैपद और आत्मनेपद प्रत्ययोंके बीचमें कच् [अ] आता है। [क] कच् प्रत्यय होनेसे णिका लोप होता है और धातुका रूप जैसा शुद्ध पहिले था वैसा ही होकर द्विगुणित होजाता है। जैसे-चुर्+इ [णि] चोरि+अ×त् [कटिप्पणीसे] चुर्+अ+त [पृ. १५६ के न १[ख]की टि देखो] अ+चु+चुर्+अ+त् [ख] जिस व्यंजनादि और व्यंजनांत धातुके कच् परे होने से दो रूप हुये हैं उसके पहिले रूपके व्यंजनमें मिले हुये स्वर को दीर्घ होजाता है और यदि वह पहिलेका स्वर अ है तो उसे इ हो जाता है। जैसे–अ×चु+चुर्+अ+त्=अचूचुरत्, छादि×अ+त्–अ+छद्+अत्–अ+च+च्छद्+अ+त्=अचिच्छदत्। ३–जिस धातु का द्वित्व होनेसे आया हुआ पहिला रूप संयुक्त व्यंजनसे पूर्व नहीं होता है उस धातुके पहिले रूपके अ को दीर्घ ई होता है। जैसे अचिच्छदत् में तो हुआ नहीं, क्योंकि पहिला रूप च च्छ से पूर्व है इसलिये ह्रस्व इ ही हुआ और कारि अ त्, अ च कृ अ त्, अचीकरत् यहां ई हो गया

४–यह अकारांत धातु है व्यंजनांत नहीं। जिनके मतमें व्यंजनांत है उनके यहां **अचीकथच्च** मन्त्रिभ्यो राजद्रोहो विपीयता [क्षत्रचूडामणि १सर्ग] होता है

हिंदी बनाओ।

सुरथो नाम राजाऽभूत् समस्ते क्षितिमंडले। भर्त्तुर्विप्रकृताऽपि रोषणतया मा स्म प्रतीपं गमः। अन्यत्रमना अभूवं नादर्शमन्यत्रमना अभूवं नाश्रौषं। शुकनासोऽपि महांतं कालं तं राज्यभारमनायासेनैव प्रज्ञावलेनाऽभार्षीत्। यथैव राजा सर्वकार्याणि अकार्षीत् तद्वदसावपि द्विगुणितप्रजानुरागश्चकार। उद्भूतमूर्च्छांधकारा च पातालतलमिवावतीर्णा तदा काहमगमं किमकरवं किं व्यलपमिति सर्वमेव नाऽज्ञासिषं। प्राणाश्च मे तस्मिन् क्षणे किमतिकठिनतयाऽस्य मूढहृदयस्य, किमनेकदुःखसहिष्णुतया हतशरीरस्य किं भाजनतया जन्मांतरोपात्तस्य दुष्कृतस्य, किं दुःखदाननिपुणतया दग्धदैवस्य केन हेतुना नोदच्छंति स तदपि नावेदिषं। कदाऽगुरोकसो भवंतः। स आह–नाहं तस्य किमपि वस्तु अमोषिषं। स तेनेष्टकाभारानवीवहत्। स दृष्टपूर्वोऽपि सुरासुराणामजीजनत् कज्जलशैलशंकां। तदाग्रभूमिर्जघनस्थलीव जलैरुदाऽऽप्लावि वनापगायाः (वननद्याः)। सुरनिवहमवादीद्वारपालः कुबेरः। वृद्धिं परामुदरमाप यथा यथाऽस्याः, श्यामाननः स्तनभरोऽपि तथा तथाऽभूत्। 'पंचदश' मासान् व्यधत्त नृपधामनि रत्नवृष्टिं। परिजनपरिवेष्टितः सोंऽतःपुरमयासीत्।

कस्यचिद् वनवासिनो नदीतटवर्त्तिनं वृक्षं लुनतो हस्ताद् सहसा निःसृतः कुठारो जलमभजत्। ततः सोऽशोचीत् मुक्तकंठं चारोदीत्। तस्य विलापं श्रुत्वा वरुण प्रादुरभूत्। तं वनस्थः स्वशोककारणमचकथत्। तदा पाशी (वरुण) जलांतः [जलमध्ये] प्रविश्य शातकौम्भं (सुवर्णरचितं) स्वधितिं (कुठारं) हस्तेनादायोदमज्जत्

१–जब कि 'मा'का या मास्म का संबंध धातु से रहता है तब अ, आ धातु से पहिले [पृ. १६० टि १ के अनुसार] नहीं आता है। ६ पृ- १६२ टि.२-३ देखो।

(ऊर्ध्वमागमत्)एवं तं वनवासिने दर्शयित्वा अप्राक्षीत् " रे किमयं ते परशुः"। सोऽवादीत्" नायं मदीय इति। ततो भूयोऽपि निमज्ज्य राजतं (चांदीका बना) व्रश्चन(कुठार) मुदधरत्। तं दृष्ट्वा" नायमपि मम" इत्यरण्यसदुवाच। तृतीयोन्मज्जने विपिन(वन) चारिणो नष्टं वृक्षादनीं (कुठार) गृहीत्वोदगमत्। तां स मुदा स्वीचकार, वरुण-मत्युपकारिणं चावोधि। तदा वनचरस्याजिह्म (ऋजु)व्यवहारदर्शनेन संतुष्टो यादसांपति(वरुण)स्तापनीय(सुवर्णनिर्मित)राजते द्वेऽपि कुठारे तस्मै पारितोपिकत्वेनादात्।

संस्कृत बनाओ परंतु क्रिया सामान्यभूत (लुङ्) की हो—

इस वृत्तांतको सुनकर उसका एक जातीय भाई भी नदीके किनारे गया और अपने कुठारको जान बूझकर नदीमें डाल रोने लगा। उसके रुदनको सुनकर पहिलेकी तरह (यथापूर्व) वरुण किनारे पर आया और सोनेके तथा चांदीके दो कुठारों को क्रमसे नदीमें डूब २ कर लाया तथा "क्या यही तेरा कुठार है" इस तरह उस जंगलीसे पूछा। उत्तरमें जंगली ने कहा कि-"हां! (बाढं) यही मेरा कुठार है" वरुण इस प्रकारके मिथ्यावादीको देख कर बडाही क्रुद्ध हुआ और उसे उसका लोहेका भी कुठार न दिया। सो ठीकही है जो लोग सत्यपर रहते हैं मायाचाररहित होते हैं उनपर सब लोग दया दिखाते हैं और जो लोभके वशीभूत हो झूंठ बोलते हैं वे अपनी भी चीज खो वैठते हैं।

द्वितीय पाठ।

आत्मनेपदी धातु।

१ छात्रो गुरुं निरीक्ष्य अमोदिष्ट—विद्यार्थी गुरुको देखकर हर्षित हुआ।

१-पृ १५४ टि. १ देखो २-पृ. १४२टि.२ देखो। ३-दीप, जन, बुध, धातुओंसे इच्छानुसार, और पद धातुसे तथा भाववाच्य, और कर्मवाच्यमें समस्त धातुओंसे लुङ्के [प्र. पु. व.] त परे होनेसे बीचमें 'चि' (इ) आता है।

१ आत्मनेपदमें धातुओंसे त, आता, अत, था , आथां, ध्व, इ, वहि, महि

अहं दिवा अशयिषि—मैं दिनमें सोया।

त्वं आहारदानं अदिथाः—तुमने आहारदान दिया।

२ भृत्यौ कटं अकृषातां—दो नौकरोंने एक चटाई बनाई।

आवां शत्रुसेनां व्यजेष्वहि—हम दोनोंने शत्रुकी सेना जीती।

युवां किं ज्ञानदानं अदिषाथां—क्या तुम दोनोंने ज्ञानदान दिया।

३ के शत्रुसेनां अरुत्सत—किन्होंने शत्रुसेनाको रोका। [ढका।

वयं वस्त्रेण स्वशरीरं अचिच्छदामहि—हमने कपडेसे अपने शरीरको

यूयं कदा अशयिध्वं-ढ्वं—तुम लोग कब सोये।

प्रत्यय आते हैं और उनके मध्यमें सि [स] आदि पृ १६० टि १ में दिये गये अनुसार समझना। आत्मनेपदमें धातुके अन्त अक्षरसे पहिले इ को ए और उ को ओ होजाता है इट्के बाद यदि सिका स् परे हो। जैसे मुद् स् त–मुद् इ स् त–अमोद् इ ष् त [पृ. १४८ टि. ५ देखो] अमोदिष्ट। ३ दा, धा, और स्था धातुके आ को इ होजाता है लुङ् आत्मनेपदमें [क] ह्रस्व स्वरके बाद यदि सिका स् होगा और उसके बाद य, र, ल, व, ञ, म, ङ, ण, न, के सिवाय कोई व्यंजन होगा तो उस स् का लोप हो जायगा। जैसे दा त-अ दा स् त–अ दि स् त, अदित, अदिथाः। कृ त, अकृ स् त अकृत। ४ दा, धा, और स्थाके [इसी पृष्ठमें ३ नं० की टिप्पणी देखो] इको छोडकर शेष धातुओंके इकारको एकार, उकारको ओकार होजाता है वि परे होनेसे। (क) वि और परा उपसर्गपूर्वक जि धातु आत्मनेपदी है। वि जि स् त वि अ जे ष् त-व्यजेष्ट।५ जिन धातुओंका इर् इत् है उनसे अस आता है। पृ. टि. देखो। ६ य, र, ल, व, ञ, म, ङ, न, ण, झ, और भ इन व्यंजनादि प्रत्ययोंके परे रहते पूर्वके अको दीर्घ होजाता है। जैसे पृ १६२ न० २–३ की टिप्पणीमें अचिच्छद महि अचिच्छदामहि। ७-इ, उ, ऋ, ए ऐ, ओ औसेपर जो षीध्व, लुङ्, और लिट् का ध्वं होताहै उसको ढ्वं नित्य होता है और इट् या चि के 'इ' से पर होनेसे इच्छाधीन ढ्वं होता है और 'ध्वं' से पहिलेका जो सिका स् होता है उसका लोप होजाता है। जैसे अचेढ्व, अशयिध्वं, अशयिढ्वं।

नीचे लिखे शब्दोंसे वाक्य बनाओ—

अमोदिषि, अजनिषत, अवर्तिष्ट, अतीतडिध्वं, आर्चिषि, अशायिषातां, अशयिषत, अशयिष्ठाः, अशयिषाथां, अशयिष्वहि, अशयिष्महि, अचिच्छदि, अचिच्छदावहि, अचिच्छदथाः, अचिच्छदाथां, अचिच्छदध्वं, अचिच्छदत, अचिच्छदातां, अचिच्छदंत, अरुद्ध, अरुत्सातां, अरुद्धाः, अरुत्साथां, अरुद्ध्वं, अरुत्सि, अरुत्स्वहि, अरुत्स्महि, अद्विक्षत, अद्विक्षातां, अद्विक्षंत, अद्विक्षथाः, अद्विक्षाथां, अद्विक्षध्वं, अद्विक्षि, अद्विक्षावहि, अद्विक्षामहि ।

हिंदी बनाओ—

कस्मिंश्चित् काले कोऽपि कंठीरवो मतिं व्यधित-"यदहं खरं (रासभं) सहायं कृत्वाऽऽखेटे (शिकार करनेमें) व्याप्रियेय" इति । स चक्रीवंतं (गर्दभं) निर्दिदेश "भो रासभ ! त्वं वृक्षगुल्मच्छादितो भूत्वा तिष्ठ, तथाऽस्मिन् काले च भयोत्पादकं चीत्कारं कुरु, तस्मादारंभाच्च मा विरंसीः। एवं त्वयाऽनुष्ठिते सर्वे पशवो भियाक्रांताः पलायितुं प्रवर्त्तेरन् । अहं तु निर्गमपथं रोत्स्यामि। तेन मार्गेण गच्छतः सर्वान् च रेपिष्यामि ।" ततः खरेण यथानिर्देशं कृते द्रुतगतीन् धावतः पशून् निर्गममार्गस्थितः सिंहोऽश्रमेणैवैकैकमवधिष्ट, यदेमानि पशुशवानि ममोदरपूर्तये पर्याप्तानीति सिंहोऽमानिष्ट तदा स गर्दभं व्याहूयाभ्यधात् "भो चक्रीवन् ! साधु, साधु , साधु कृतं

१-य, र, ल, व, ञ, म, ङ, ण नसे भिन्न किसी व्यंजनसे पर यदि स् होगा तो उसका लोप हो जायगा य, र, ल, व, ञ् म, ङ, ण, न से भिन्न व्यंजन पर होनेसे २ पृ १६२ टि १ देखो । ३ शब्दके अतके न् के और स्वरसहित च या छ के बीचमें श् स्वरसहित ट या ठ के बीचमें ष् और स्वरसहित त या थ के बीचमें स आता है और न् को अनुस्वार [॰] या अनुनासिक हो जाता है। जैसे कस्मिन् चित् कस्मिंश्चित्, कस्मिँश्चित्, भवांश्छादयति ।

सखे, अलमधुना ते चीत्कारेण। विरम तावत्। इत एहि" इति। तमाह्वानमनु खरश्चित्रकायं (सिंहं)प्रतिनिवृत्य "स्वनियोगः सुष्टुवशून्यः कृतः" इति मत्वा तं सलीलमप्राक्षीत् "भो मृगाधिप! यदहं कृतवांस्तत् तुभ्यमरोचिष्ट न वा।" हर्यक्ष आह-"मतं तव कृत्यमिति किं कथयामि। अतीवाभिनंदामि तत्।

अष्टम अध्याय।

समस्तगणकी धातुओंका आशीर्वाद अर्थ (लिङ्) में प्रयोग

१ कुशलं ते भूयात्—तेरी कुशल हो।

अहं वः श्रियं पुष्यासं—मैं तुम्हारा धन बढाऊं।

त्वं मे शिवं दद्याः—तुम मुझे कल्याण दो।

२ मुनी युष्मभ्यं शिवं क्रियास्तां—दो मुनि तुम लोगोंका कल्याण करें।

आवां नृपौ भूयास्व—हम दोनों राजा हों।

युवां दीनान् न तुद्यास्तं—तुम दोनों दीनोंको न सताओ।

३ वीतरागाः युष्मान् पुष्यासुः—वीतरागी तुम्हें पुष्ट करें।

वयं आहारदानं सर्वदा देयास्म—हम हमेशा आहार दान दें।

यूयं सत्तत्वं श्रद्धेयास्त—तुम लोग यथार्थतत्त्वोंका श्रद्धान करो।

नीचे लिखे शब्दोंसे वाक्य बनाओ।

मुच्यासं, चोर्यास्व, अद्यासं, हूयास्म, दीव्यात्, निश्चीयास्तां, शयिषीय, शयिषीवहि, शयिषीमहि, शयिषीष्ठाः, शयिषीयास्थां, शयिषीढ्वं (ध्वं) शयिषीष्ट, शयिषीयास्तां, शयिषीरन्, उंच्यात्,

१ आशीर्लिङ् में परस्मैपदधातुसे यात्, यास्ता, यासु, या, यास्त, यास्त, यास, यास्व, यास्म प्रत्यय आते हैं। २ दा धा, स्था, गै पा (पीना) धातुके आ को ए होजाता है परस्मैपदके आशीर्लिङ् में। ३ धातुके ह्रस्व इ, उ को दीर्घ इ, ऊ होजाते हैं आशीर्लिङ्में। ४ आत्मनेपदी धातुओंसे आशीर्लिङ्में सीष्ट, सीयास्ता, सीरन्, सीष्ठा, सीयास्था, सीढ्वं, सीय, सीवहि, सीमहि प्रत्यय लगते हैं और इट् आनेका नियम लिट् या लुङ्के समान प्रायः समझना। ५ परस्मैपदमें वच् धातुके

उच्यास्तं, उच्यास्व, वक्षीय, वक्षीवहि, वक्षीमहि, निक्षिपीय, भुक्षीष्ट, तनिपीष्ट, कृपीष्ट,

नवम अध्याय।

समस्तगणकी धातुओंका अनद्यतन भविष्यत् अर्थ(लुट्) में प्रयोग

१ देवदत्तः कदा पाठं पठिता—देवदत्त कब पाठ पढेगा।

अहं गुरुं प्रश्नं प्रष्टास्मि—मैं गुरुसे प्रश्न पूछूंगा।

त्वं कदा ग्रामं गंतासि—तुम कब गाव जाओगे।

२ इमौ छात्रौ नूनं पंडितौ भवितारौ—ये दो विद्यार्थी निश्चयसे पंडित होंगे।

आवां स्वगृहं यातास्वः—हम दोनों अपने घर जावेंगे।

युवां धर्मं उपदेष्टास्थः—तुम दोनो धर्मका उपदेश दोगे।

३ प्रजाः राजगृहं गंतारः—प्रजा राजगृह जायगी।

वयं कदापि धनं न चोरयितास्मः—हम कभी धन न चुरावेंगे।

यूयं किं कार्यं कर्तास्थ—तुम लोग क्या काम करोगे।

नीचे लिखे शब्दोंसे वाक्य बनाओ—

हर्त्तासि, भोक्तारः, तनितास्मि, तनिताहे, कर्ताहे, पधिता, पधितारौ पधितारः, पधितासे, पधितासाथे, पधिताध्वे, पधिताहे, पधितास्वहे, पधितास्महे।

दशम अध्याय।

समस्तगणकी धातुओंका क्रियातिपत्ति अर्थ [लृङ्] में प्रयोग

१ वृष्टिर्न यदि अभविष्यत्—यदि मेह न वर्षा तो

व को उ हो जाता है।१--परस्मैपदी धातुओंसे लुट्में ता, तारौ, तार , तासि, तास्थः तास्थ, तास्मि, तास्व तास्म प्रत्यय आते हैं इट्का नियम लुङ् की भांति समझो, २--आत्मनेपद धातुओंसे लुट्में ता, तारौ, तार , तासे, तासाथे, ताध्वे, ताहे, तास्वहे, तास्महे प्रत्यय आते हैं। इट् आदिका नियम परस्मैपदके समान हैं।

१--परस्मैपद धातुओंसे लृङ्में-स्यत, स्यता स्यन्, स्यः, स्यतं, स्यत, स्यं, स्याव

अहमवश्यमेव आगमिष्यं—मैं अवश्य ही आऊंगा।
यदि त्वं न अपठिष्यः—यदि तुम न पढोगे तो
कथमपि पंडितो न अभविष्यः—किसी भी तरह पंडित न होओगे।
२ यदि तौ मत्समीप आगमिष्यतां—यदि वे मेरे पास आवेंगे तो
बहु पारितोषकं अलप्स्येतां—बहुतसा इनाम पावेंगे।
यद्यावां स्तेयं अकरिष्याव—यदि हम चोरी करेंगे
तर्हि तत्फलं दुःखं अन्वभविष्याव—तो उसका फल दुःख भोगेंगे।
युवां यदि भिक्षार्थं आटिष्यतं—यदि तुम भिक्षाके लिये जाओगे
तर्हि महदन्नं आप्स्यतं—तो बहुतसा अन्न पावोगे।
३ यदि ते स्वामिसेवां अकरिष्यन्—यदि वे स्वामीकी सेवा करेंगे तो
नूनं स्वर्गं अयास्यन्—निश्चयसे स्वर्गको जायगे।
यदि वयं सद्व्रतं आचरिष्याम—यदि हम लोग श्रेष्ठ व्रत आचरण करेंगे
कथं न संसारसमुद्रं अतरिष्याम—क्यों नहीं संसारको पार करेंगे।
यदि यूयं जीवान् अरिरिषिष्यत—यदि तुम लोग जीवोंको मारोगे तो
तर्हि नरकं अव्रजिष्यत—नरकको जाओगे।

नीचे लिखे शब्दोंसे वाक्य बनाओ—

अमोक्ष्यावहि, अमोक्ष्यत्, अरक्षिष्यः, उदपतिष्यत, अजनिष्यामहि, अखनिष्यत्, अयाचिष्यत, अजेष्यन्।

संस्कृत बनाओ—

१। यदि माता पिताकी आज्ञा मानोगे तो संसारमें सुख पावोगे।
२। यदि तुम इस बातको थोड़ा भी विचारोगे तो जरूर ही आग्रह छोड़ दोगे।
३। यदि वहां सब लोग निरालस रहेंगे तो कोई भी कुछ न ले (सकेगा।

स्याम और आत्मनेपदियोंसे स्यत, स्येता, स्यंत, स्यथा, स्येथा स्यध्वं, स्ये, स्यावहि, स्यामहि प्रत्यय लगते हैं और व्यंजनादिसे अ एवं स्वरादिसे आ पहिले लगता है। इट्का नियम पृ. नं द्वि. के समान समझो।

४। यदि मैं भी तुम्हारे शब्दको सुनता तो अवश्य ही डरजाता।
५। यदि वे दोनों उसकी वात न सुनते तो सुखसे रहते।

तद्धित[1] प्रत्यय

अपत्यवाचक

[इञ्, ण्य, अण्, ष्यञ्, ईय]

१ सात्यंधरिस्तु तच्छ्रुत्वा तद्घोषणमवारयत्—सत्यंधरके लडकेने तो उस घोषणाको सुनकर रुकवा दिया।

२ सैनापत्य स्वपितरमाह्वयत्—सेनापतिके लडकेने अपने पिताको बुलाया।

प्राजापत्योऽयं बहूनन‌र्थान् नाशयति—यह राजाका लडका बहुतसे अनर्थोंको नष्ट करता है।

३ चैत्रगवोऽद्य समागतः—चितकवरी गायवालेका लडका आज आया है।

यामुनोऽयं बालः—यह लडका यमुनाका पुत्र है।

४ वायुवेगेयो कृतधर्मा विधाधरः—वायुवेगाका लडका कृतधर्मानामका विद्याधर है।

---

१ जो प्रत्यय धातुसे न आकर विभक्त्यंत शब्दोंसे आते हैं वे तद्धित प्रत्यय कहलाते हैं। तद्धित प्रत्ययांत शब्द विशेषण होते हैं। २–ह्रस्व अकारांत शब्दोंसे 'उसका पुत्र' इस अर्थमें इञ् प्रत्यय होता है, जैसे सत्यंधरस्य पुत्र =सत्यंधर×इ (क) ञित् और णित् तद्धित प्रत्यय होनेसे शब्दमें जो एक वा अनेक स्वर होते हैं उन सब स्वरोंमें पहिला स्वर यदि अ है तो वह आ, इ ई हैं तो ऐ, उ ऊ हैं तो औ, ऋ ॠ हैं तो वे आर् होजाते हैं। जैसे–सत्यंधर×इ, यहांपर सब स्वरोंमें पहिला स्वर 'स' का अ है उसे आ होगया तो सात्यंधर+इ हुआ। (ख) यकारादि और स्वरादि तद्धित प्रत्यय वादमें रहनेसे शब्दके अंतके 'अ आ, और इ ई का लोप हो जाता है और उ को ओ होजाता है। जैसे-सात्यंधर+इ=सात्यंधरिः। ३–पति शब्दांत शब्दोंसे पुत्र अर्थमें ण्य प्रत्यय होता है बाकी नियम २ री टिप्पणीके देखो। ४-जिनशब्दोंसे पुत्र अर्थमें विशेष नियमसे कोई प्रत्यय नहीं होता उन सबसे अण् आता है। जैसे चित्रगु×अ=चैत्रगव। इसी पृष्ठकी नं० २ की टिप्पणी देखो। ५-जिनशब्दोंके स्वरोंमें सबसे पहिला स्वर आ, ऐ, अथवा औ है ऐसे जो स्त्री

वासवदत्तेयं दृष्ट्वा अहर्ष सः—वासवदत्ताके लड़केको देख कर वह हर्षित हुआ।

नाभेयमादिनाथं सततमानताः स्मः—नाभिराजके पुत्र आदिनाथको हम लोग सदा नमस्कार करते हैं।

५ स्वस्रीयं को न पूजति—बहिनके लड़के (भानेज) को कौन नहीं पूजता।

भ्रात्रीयं को न स्निह्यति—भाईके लड़के (भतीजे) को कौन नहीं प्यार करता है।

नीचे लिखे शब्दोंसे वाक्य बनाओ—

जैवंधरि, आंजनः, सौलोचनः, बार्हस्पत्यः, चांद्रमसः, राधेयं, मानोरमः, पैनायतिः, मारेयं, वैनतेयः, कौकिलेयः, माणेयं।

रक्तादि अर्थवाले तद्धितप्रत्यय

१ हारिद्रं परिदधाति पटमेषः—यह हल्दीसे रंगे हुये कपड़ेको पहिनता है।

२ आर्हता हि स्याद्वादिनः—जैनी लोग एक वस्तुमें अनेक गुण मानते हैं।

वैष्णवा विष्णुमर्चन्ति—श्रीकृष्णके भक्त श्रीकृष्णको पूजते हैं।

३ वार्क्षं दृष्टं मया वने—वनमें मैंने वृक्षों (पेड़ों) का समूह देखा।

जैनता एकीभूता ततः—इसलिये जैन इकट्ठे होगये।

४ वैयाकरणोऽयं विद्वान्—यह विद्वान व्याकरण जानता है या पढता है।

सौवागमा इमे छात्राः—ये विद्यार्थी स्वागम पढते या जानते हैं।

५ माथुराः पाटलीपुत्रकेभ्योऽधिकाः—मथुरावासी पटनावासियोंसे ज्यादा हैं। [उत्पन्न होते हैं।

६ कंठ्याः अकुहविसर्जनीयाः—अ, कवर्ग, हकार और विसर्ग कंठमें

दंत्याः लृतुलसाः—लृ, तवर्ग, ल और स दातोंसे बोले जाते हैं।

७ पूज्यपादीयान् ग्रंथान् पठामि—मैं पूज्यपाद स्वामीके बनाये ग्रंथोको पढता हूं। [रोका गया खिन्न हुआ।

८ दौवारिकेण निषिद्धोऽखिद्यत सः—वह द्वारमें नियुक्त किये गये मनुष्यसे

शौल्कशालिको मामभाषत—शुल्कशाला (खजाना) में नियुक्त किये गये मनुष्य (खजानची) ने मुझसे कहा। [की रक्षा करते हैं।

९ शरण्याः सज्जनाः जगत् रक्षंति—शरणदेनेमें साधु सज्जन लोग जगत

शब्दोंसे समूह अर्थमें 'ता' प्रत्यय आता है। जैसे-ग्रामोंका समूह-ग्राम×ता= ग्रामता, जनता, बंधुता, सहायता। ५-'पढता है या जानता है' इस अर्थमें अण् प्रत्यय होता है। (क) शब्दकी आदिमें यदि इ, ई, के स्थानमें संधिसे आया हुआ य् और उ, ऊ, के स्थानमें आया हुआ व् होगा तो ञित् और णित् प्रत्यय होनेसे उनके स्थानमें क्रमसे ऐय् और आव् आदेश होजायेंगे। जैसे-व्याकरण अ यहांपर णित् प्रत्यय 'अण्' पर है इसलिये पहिले जो वि×आ+व्या हुआ था अर्थात् संधिके नियमसे य् आया था उसके स्थानमें ऐय् हो गया तो व्×ऐय्× आकरण×अ=वैयाकरण, सु×आगम स्वागम×अ=सौवागम। ६-'रहने वाला' अर्थमें अण् प्रत्यय होता है। जैसे-मथुरामें रहनेवाला-मथुरा+अ=माथुर। ७-शरीरके अवयववाची शब्दोंसे 'पैदा-होनेवाला' अर्थमें 'य' प्रत्यय होता है। जैसे दतमें होनेवाला-दंत-य=दंत्य। ८। नामवाची शब्दोंसे तथा तद् आदि सर्व-नाम शब्दोंसे अपत्य अर्थसे भिन्न अर्थोंमें ईय प्रत्यय होता है-पूज्यपादका बनाया हुआ-पूज्यपाद+ईय = पूज्यपादीय, तस्येद-तदीय। ९-'नियुक्त' अर्थमें इकण् प्रत्यय होता है-द्वारमें नियुक्त द्वार-इक = दौवारिक [इसी पृष्ठ टि ५ देखो]

१-"उपकारी है, अच्छा है" इस अर्थमें 'य' प्रत्ययहोता है। जैसे शरणमें

सर्वे सभ्यास्तत्रसुः—सम्पूर्ण सभाके प्रवीण लोग डर गये।

१० उष्ट्रीयोऽयं वृक्षः यो हि पुरः संतिष्ठते—यह पेड जो कि सामने खडा है ऊँटको हितकर है।

पित्रीयोऽयं बालः—यह लडका पिताको हितकर है।

११ मथुरावत् मान्यखेटे प्रासादाः—मान्यखेट नगरमे मथुराकेसे महल हैं।

पात्रवत् अपात्राय न देयं—पात्रके समान अपात्रको न देना चाहिये।

१२ मनुष्यता मनुष्ये वसति—मनुष्यपना मनुष्यमें रहता है।

किं गवि गोत्वमुतागवि गोत्वं—गायमें गौपना रहता है या गायसे भिन्न पदार्थमें ?

१३ सौराज्यं हि सुखावहं—सुराजता सुखदेनेवाली होती है।

बार्हस्पत्यमभात् तस्मिन्—उसमें बृहस्पतिका कार्य शोभित हुआ।

जाड्ये नास्ति सुखं क्वचित्—मूर्खपनेमें कहीं सुख नहीं है।

कविः करोति काव्यानि लालयत्यपरो जनः—कवि काव्य (कविका कर्म) बनाता है और दूसरे लोग उसे लालते पालते हैं।

गौरवं हि मुखमंडनं सतां—सज्जनोंके मुखका भूषण गुरुता है।

एकमात्राया लाघवेन पुत्रोत्सवं—एकमात्राकी लघुता [कमिताई] से

मन्यंते वैयाकरणाः—वैयाकरण लोग पुत्रके समान उत्सव मानते हैं।

१४-कियन्मात्रं जलं विप्र !—हे ब्राह्मण कितना जल है ?

उपकारी शरण+य=शरण्य। २-'उसके लिये हित कर है" इस अर्थमें ईय प्रत्यय होता है। ३-" बराबर" अर्थमें वत् प्रत्यय होता है। ४-'भाव (पना)' अर्थमें त्व और त (तल्) दोनों प्रत्यय होते हैं। जिसमेंसे त्व प्रत्ययांतोंके नपुंसकलिंगमें और तल् प्रत्ययांतोंके स्त्रीलिंगमें रूप चलते हैं। ५-'उसका काम, या भाव इस अर्थमें राज, शब्दात और पति शब्दात तथा गुणवाचक शब्दोंसे ष्यण् (य) प्रत्यय होता है। सुराज का भाव वा कर्म-सुराज+य= सौराज्यं। ६-गुणवाचक शब्दोंसे भाव अर्थमें अण् प्रत्यय होता है। ७-ऊर्ध्व प्रमाण अर्थमें मात्रट् दघ्नट, द्वयसट् प्रत्यय होते हैं। और लंबे, तिरछे प्रमाण अर्थमें केवल मात्रट होता है।

जानुदघ्नं नराधिप !—राजन् ! जांघके बराबर है।

पादमात्रस्थानं देहि—पैरकी बराबर जगह दो।

पुरुषद्वयसं वारि वर्ततेऽस्यां—इसमें एक आदमीकी बराबर पानी है।

१५ अयमनयोः पटुतरः, पटीयान्—यह इन दोनोंमें अधिक हुशियार है।

अयमेषां पटुतमः, पटिष्ठ—यह इन सबोंमें अधिक चतुर है।

१६ कृष्णीकरोति सतां यशांसि दुर्जनः—दुर्जन सज्जनोंके शुभ्र यशको काला कर देता है।

लघूभवति सर्वो दीनताया प्रसंगात्—दीनताके कारण सब लोग लघु नहीं होकरभी लघु होजाते हैं।

१७ श्रीकल्पाऽभूदकिंचना—लक्ष्मीसे कुछ ही कम वह [रानी] दीन हो गई।

इन्द्रदेशीयोऽयं नृपः—यह राजा इंद्रसे कुछ ही कम है।

अष्टादशवर्षदेश्योऽयं बालः—यह लडका १८ वर्षसे कुछ कम है।

नीचे लिखे शब्दोंसे वाक्य बनाओ—

सैद्धांतः, नैयायिकः, मीमांसकः, छांदसः, आपणिकः, पाणिनीयं, सामंतभद्रः, नादेयं, पाण्यः, पाद्यः, औघ्नः, ऐंद्रप्रस्थः, काकं, आपूपिकं, पैतः, कौसुंभः, काषायः, सहायता, ग्रामता, बंधुता,

१–दो पदार्थोंमें जब एकको बडा [अधिक] बताना होता है तब तर और ईयस् और जब बहुतोंमें एक को बडा बताना होता है तब तम और इष्ठ प्रत्यय 'गुणवाची शब्दोंसे' होते हैं। २–'जो पदार्थ पहिले तो वैसा नहीं होता परन्तु किसी अन्य पदार्थके कारणसे वैसा हो जाता है' जब ऐसा अभिप्राय रहता है तब च्वि [कुल इत् है] प्रत्यय आता है कृ भू और अस् धातुका रूप परे रहते। और उस च्विके होनेसे अकारांत शब्द ईकारांत तथा ह्रस्व इकारांत और उकारांत दीर्घ ईकारांत, ऊकारांत हो जाते हैं। जैसे अकृष्णं कृष्णं करोति=कृष्ण+च्वि (च्वि इत् होनेसे नहीं रही तो) कृष्ण×करोति= कृष्णीकरोति। असाधु साधुर्भवति—साधूभवति ३'कुछ कम' अर्थमें कल्प, देश्य, देशीय प्रत्यय होते हैं। ४–५–न्याय आदि कुछ शब्दोंसे 'जानना या पढना' अर्थमें इकण् और मीमांसा आदिसे अक प्रत्यय होता है। ६–अचेतन पदार्थवाची शब्दोंसे समूह अर्थमें इकण् होता है।

कर्मण्याः, गणीयः, यौवराज्यं, नार्पत्यस्य, मौर्ख्येण, स्थौल्यं, हस्तमात्रं, शिरोदघ्नं, आढ्यतराय, पंडिततमान्, शुक्लीकरोति, गुरूकरोति, सत्यकल्पं, नृपदेशीयं, सुंदरीभूतं, पंडितकल्पस्य।

समासयुक्त पद।

(तत्पुरुष, बहुव्रीहि, द्वंद्व)

१ शय्यांगता रोगिणः क्रंदंति—शय्या पर लेटे हुये रोगी रोते हैं।

सुखप्राप्ता देवाः क्रीडंति—सुख को प्राप्तहुये देव क्रीडा करते हैं।

धर्मश्रिता श्रावका जिनमर्चंति—धर्मात्मा श्रावक लोग जिन भगवानकी पूजा करते हैं।

२ मासोनमपि तत् न ग्राह्यं—वह मासे भर कम भी न लेना चाहिये।

आत्मकृतं कर्म कस्मै न रोचते—अपना किया हुआ काम किसे अच्छा नहीं लगता।

परशुच्छिन्ना लता अम्लायत्—कुठारने काटी गई लता मुरझा गई।

३ कुंडलहिरण्यं मंक्षु आनेयं—कुंडलके लिये सुवर्ण शीघ्र लाना चाहिये।

प्रजाहितं राजभिः कार्यं—राजाओंको प्रजाका हित करना चाहिये।

पित्रर्थं पुत्राःप्राणानपि त्यजेयुः—पिताके लिये पुत्रोंको प्राण भी दे देने चाहिये।

४ वृकभीतोऽजशिशुरवदत्—भेडियासे डरा हुआ बकरीका बच्चा बोला।

मृत्युभयं सर्वान् तुदति—मृत्युका डर सबको दुःख देता है।

१–दो या दोसे अधिक पदोंके विभक्तीका लोप समास है। [३३पृ देखो] उसके मुख्य चार भेद हैं–अव्ययीभाव, तत्पुरुष, बहुव्रीहि, और द्वंद्व। जिन दो पदोंके समासमें पहिलेके पदका अर्थ प्रधान न होकर दूसरे पदका अर्थ प्रधान होता है वह तत्पुरुष समास कहलाता है और प्रथमपद यथायोग्य द्वितीयादि विभक्त्यंत विग्रहमें रहता है [जैसे शय्यां गताः शय्यागताः, मासेन ऊनः मासोनं, कुंडलाय हिरण्यं कुंडलहिरण्यं, वृकाद् भीत –वृकभीतः, मोक्षस्य मार्गः–मोक्षमार्गः, द्यूते निपुणः द्यूतनिपुणः।

५ मोक्षमार्गस्य नेतारं—मोक्षके मार्गके नेता, कर्मरूपी पर्वतोंके भेदने

भेत्तारं कर्मभूभृतां—वाले और समस्त तत्त्वोंके ज्ञायक ईश्वर

ज्ञातारं विश्वतत्वानां—को उसके गुणोंकी प्राप्तिके लिये

वंदे तद्गुणलब्धये।—मैं नमस्कार करता हूं।

६ द्यूतनिपुणा जनाः कठंति—जुएमें चतुर आदमी दुःख पाते हैं।

क्रीडासक्ता बालका न पठंति—क्रीडामें लगे हुये बालक नहीं पढते हैं।

७ केवलज्ञानमुदियाय तस्य—उसके असहाय[इंद्रियों की सहायताके विना होनेवाला] जो ज्ञान उसका उदय हुआ।

नवान्नं भुज्यतां भोः—अजी! नवीन जो अन्न उसे खाइये।

८ निपुणमति पुरुष कथयामासैवं—निपुण बुद्धिवाले मनुष्यने ऐसा कहा।

त्रिकालगोचरं द्रव्यं स हि जानाति पश्यति—तीन काल हैं गोचर जिसके ऐसे द्रव्यको वह जानता वा देखता है। [जिसने ऐसा वह वहासे लौटा।

पराजितपरविभवः स ततो न्यवर्तिष्ट—हराया है दूसरेके ऐश्वर्यको

९ रामलक्ष्मणौ वनमगाहिष्टां—राम और लक्ष्मण दोनोंने वनमें प्रवेश किया।

धवखदिरौ छिंधि—धव और खदिर को काटो। [हुये देखे।

हंसचक्रवाकास्तत्र परिभ्रमंतो दृष्टाः—हंस और चक्रवाक वहा घूमते

नीचे लिखे शब्दोंसे वाक्य बनाओ—

पाशपाणिः, हितबुद्धिः, सपरिवारः व्रीहियवान्, जीवादीन्, कर्मरताः, दुःखातीतस्य, रथदारुः, राजपुरुषेण, गोक्षीरं, पुराणपुरुषं, कृष्णतिलान्, क्षत्रियभीरुः, पंचगोधनः।

॥ समास ॥

---

१ जो विशेषण और विशेष्योंका समास होता है उसे कर्मधारयनामक तत्पुरुष बोलते हैं। जैसे—केवलं च तत् ज्ञानं च [केवल जो ज्ञान] केवलज्ञानं।

२—जिससमासमें समस्तपदोंसे भिन्न पदका अर्थ प्रधान रहे उसे बहुव्रीहि कहते हैं। जैसे—निपुणा मतिर्यस्य—निपुणमति, यहापर निपुण और मति दोनो पदो का अर्थ गौण है और अन्य पदार्थ जिसकी कि बुद्ध निपुण है वह प्रधान है तो इसे बहुव्रीहि समझना। ३ जिसमें कि समस्त समासमें आये हुये पद मुख्य हों उसे द्वंद्व कहते हैं। रामश्च लक्ष्मणश्च रामलक्ष्मणौ।